

# वाह रे मोतीझील

— विनीत बाजपेयी —



BlueRoseONE.com  
Stories Matter

New Delhi • London

## BLUEROSE PUBLISHERS

India | U.K.

Copyright © Vineet Bajpai 2026

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.



For permissions, requests or inquiries regarding this publication,  
please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS

[www.BlueRoseONE.com](http://www.BlueRoseONE.com)

[info@bluerosepublishers.com](mailto:info@bluerosepublishers.com)

+91 8882 898 898

+4407342408967

ISBN: 978-81-6744-763-0

Cover Design: Deepak Katheria

Typesetting: Manisha Rawat

First Edition: October 2026



## समर्पण

यह उपन्यास —

जिंदगी के उस सफ़र के नाम,

जहाँ कुछ रिश्ते शब्दों में नहीं, साँसों में जिए जाते हैं।

पूज्य पिताजी (स्व. प्रयाग नारायण जी) को,

जिन्होंने मुझे परिस्थितियों से लड़ना और हर हाल में इंसान बने रहना सिखाया।

आपकी अनुपस्थिति में भी आपकी दी हुई सीख मेरी हर राह का मार्गदर्शन करती है।

मेरी दोनों बेटियों— नविका और श्रेया को,

जो मेरी दुनिया की सबसे खूबसूरत कविताएँ हैं।

तुम दोनों की खेलखिलाहट ही मुझे जीवन के सबसे कठिन दौर में भी लिखने और आगे बढ़ने का हौसला देती है।

और मेरी हमसफ़र— इंदु को,

जो मेरी हर ख़ामोशी को पढ़ लेती है।

मेरे जीवन की हर उथल-पुथल और मेरी इस पूरी लेखन-यात्रा में

मेरा हाथ कसकर थामे रखने के लिए।

हृदय भैया का विशेष आभार, पांडुलिपि की बारीकी से  
प्रूफिंग और इसे निखारने में दिए गए अमूल्य सहयोग के लिए।



## अपनी बात: मोतीझील की एक शाम और हम

कहानियाँ कहीं बाहर से नहीं आतीं। वे हमारे आस-पास बिखरी होती हैं—कभी मोतीझील की किसी पुरानी बेंच पर धूप सेकती हुई, कभी कुल्हड़ की चाय की भाप में तैरती हुई, तो कभी गंगा किनारे उठते धुएँ की खामोशी में छुपकर रोती हुई। लेखक का काम सिर्फ़ इतना होता है कि वह चुपचाप जाकर उनके पास बैठ जाए और उन्हें वैसे ही सुन ले, जैसे वे खुद को सुनाना चाहती हैं।

ज़िंदगी में हम सब अपनी-अपनी लड़ाइयाँ लड़ रहे होते हैं। कभी सफलताओं के पीछे भागते हुए, तो कभी खो देने के डर से भागते हुए। पर एक वक्त ऐसा आता है जब भागदौड़ का सारा शोर थम जाता है, और हमारे सामने बचता है सिर्फ़ एक आईना—जहाँ कोई झूठ नहीं टिकता, कोई अहंकार नहीं ठहरता।

**'वाह रे मोतीझील'** मेरे लिए सिर्फ़ पन्नों पर उकेरी गई कोई काल्पनिक कथा नहीं है। यह कानपुर के उस मिज़ाज की कहानी है जो हर आफ़त को ठहाकों में उड़ाना जानता है, और उस दर्द की भी तासीर है जो महामारी के उस ख़ौफ़नाक दौर में एक पूरे शहर ने चुपचाप झेला था। यह केतन की ज़िद की कहानी है, अनुश्री के निष्काम त्याग की पाकीज़गी है, और उन बेनाम रिश्तों की गहराई है जो बिना किसी नाम के भी जीवन को अर्थ दे जाते हैं।

कहते हैं कि जब हम किसी किताब में कुछ पंक्तियों को अंडरलाइन करते हैं, तो असल में हम लेखक की लिखी बात को पूरा कर रहे होते हैं। मुझे नहीं पता कि इस कहानी का कौन-सा पन्ना आपकी आँखों को नम करेगा या कौन सी पंक्ति आपके दिल को छुएगी, पर इतना तय है कि अगर यह कहानी पढ़ते हुए आपको अपने किसी अज़ीज़ की याद आ जाए, या आपकी अपनी कोई अधूरी टीस हल्की हो जाए—तो समझिएगा कि यह किताब पूरी हो गई।

कुछ प्रेम कहानियाँ मुकम्मल होने के लिए विवाह की मोहर नहीं माँगतीं।  
वे त्याग, समर्पण और स्मृतियों के धागों से बुनकर समय के पार अमर हो  
जाती हैं।

आइए, अब मेरे और आपके बीच के इस फ़ासले को यहीं ख़त्म करते  
हैं। मोतीझील की उस पुरानी बेंच पर थोड़ी-सी जगह ख़ाली है... चलिए,  
साथ चलकर बैठते हैं।

— आपका

विनीत बाजपेयी

# भाग - 1



## बाकी सब तो मोह माया हैं

**कानपुर** शहर का दिल, मोतीझील, सूरज उगते ही जिंदगी की रौनक से सराबोर हो उठता है। कनपुरिया लफ्फाज़ी के निशानों वाला यह प्राचीन जलाशय हरियाले बगीचों, झूलों और चाय-पकौड़े की भाप से लबालब है। सूरज डूबते ही लहरें चाँदनी सी नाचने लगती हैं, मानो तालाब खुद कनपुरिया ठाठ से हंस रहा हो—“वाह रे मोतीझील, क्या बात है!” यहाँ की हवा में कनपुरियों की मौज घुली रहती है—वो जिंदादिली जो हैप्पीनेस इंडेक्स में शहर को टॉप पर लाती है।

जाड़ों में मोतीझील के ऊपर चलने वाला कोहरा किसी जादुई चादर से कम नहीं। ठंडी हवा के साथ धीरे-धीरे उतरता यह कोहरा पहले तालाब की सतह को चूमता है, फिर लहरों के ऊपर तैरने लगता। मानो किसी अदृश्य कलाकार ने रुई जैसी परत बिछा दी हो—हल्की, सफेद, रहस्यमयी। दूर तक फैला यह कोहरा झील को पहने हुए नैनीताल की भव्यता भुला देता है, पर कानपुर का अपना देसी ठाठ लिए। ठंडी बूंदें हवा में लटकती हैं, चेहरे को सहलाती हैं, और हर सांस के साथ कोहरे का टुकड़ा फेफड़ों में समा जाता।

कोहरे की यह चादर इतनी सघन हो जाती है कि किनारे खड़े लोग एक-दूसरे को आधी-अधूरी परछाईयों में देख पाते हैं। लहरों की हल्का कोहरा आवाज़ निगल लेता, सिर्फ़ भटकती परछाईयों का खेल बाकी रह जाता है। चाय की भाप कोहरे में घुलकर स्वर्गीय बन जाती—पकौड़ों का सुनहरा रंग धुंधला सा चमकता। सर्दी की यह चादर नाजुक लगती, वो कनपुरियों को लपेटे रखती, उनकी हंसी को गूँज देती।

पूरा मोतीझील हंसी-ठिठोली की लहरों से थरथरा रहा—कोई किसी की टाँग खींच रहा, कोई ठहाका मार रहा। यही कानपुर की असली मौज है—जहाँ गंभीरता पानी में घुल जाती, बस बिंदास बकैती बाकी रह जाती। झील की लहरें ताली बजा रही थीं, जैसे कह रही हों, “जिंदगी मौज में काटो गुरु, बाकी सब तो मोह माया है!”

"अरे अग्रवाल जी, वॉक पर ध्यान दो भाई तुम्हाई नजर ठीक नहीं लग रही है, बहुत देर से भाभी जी को ताड़ रहे हो, कंटाप न पड़ जाए देखना?" किशोर चाचा रनिंग करते हुए बोले, हाँफते-हाँफते।

"किशोर जी, टोपा हौ का, तुम तो कुछ कहो ही मत, तुमाये जवानी के किस्से खूब सुन रखे है हमने!" अग्रवाल जी ने चश्मा ठीक करते ठहाका लगाया, आज बड़ी जल्दी आ गए, बुढ़िया ने भगाया होगा "?"

"अबे, ये टोपा क्या होता है?"

"दिमाग से पैदल और अक्कल से बैल इंसान को 'टोपा' बोलते हैं, पता है न आपको?"

"फिर ठीक है" किशोर जी संतोष व्यक्त करते हुए खिलखिला दिए।

पास ही कलक्टरगंज वाली शर्मा आंटी ने भोला जी की फिरकी ली, "भोला भईया, वजन बढ़ रहा आपका, डाइटिंग कब शुरू करोगे, भैया?"

"शरमाईन, अभी बनारसी वाले के यहाँ ब्रेड मक्खन सूतोगी जाके, और हमको ज्ञान दे रही हो!" भोला जी ने पेट थपथपाते कनपुरिया लफ्फाज़ ठोंका।

"और ज्यादा ज्ञान पेलने की जरूरत नहीं है, ये चौधराहट घर में रख के आवा करो।" भोला जी भावनाओं में बह गए। पुराना प्रेम जो था शर्मा आंटी से।

बनारसी वाले का नाम आया है तो बताते चलें, कानपुर में चाय रूपी अमृत का उत्पादन करने वाला यह अग्रणी प्रतिष्ठान है जो कि अपने ब्रेड मक्खन और पकोड़ों के लिए कानपुर में विश्व प्रसिद्ध माना जाता रहा है और यह झील से निकलने वालों पर टकटकी लगाए अपनी ओर आकर्षित करता रहता है।

शहर के बीचोंबीच बना मोतीझील कानपुर के कोने कोने को लुभाता है। पुराना कानपुर, पटकापुर, फीलखाना, कलक्टरगंज, बिरहाना रोड, नवाबगंज, रावतपुर गांव, हटिया, नयागंज, मूलगंज से घंटाघर तक के लोग सुबह से लेकर शाम तक हाजिरी देते रहते हैं।

मुख्य द्वार पर तीन भव्य शिलालेख स्वागत करते हैं—"जय जवान, जय किसान, जय विज्ञान"। इनकी चमचमाती पट्टिकाएं सूर्यास्त में चमकती हैं, जैसे राष्ट्र का आह्वान कर रही हों। हर आने वाला यात्री इन्हें स्पर्श कर



प्रणाम करता है—जवान की वीरता, किसान की मेहनत, विज्ञान की प्रगति—यहां सबका सम्मान है। द्वार पार करते ही मोतीझील का आलिंगन मिलता है, आत्मिक शांति का पहला स्पर्श।

दाईं ओर देसी जिम की धुन गूंज रही है। लोहे की रॉड्स बजतीं, पुरानी मशीनें चरमरातीं, पसीने की महक हवा में तैरती। बीच में छोटा सा हनुमान मंदिर है, जहाँ मंगल चाचा मोतीचूर के लड्डू का प्रसाद बांट रहे हैं। "आओ सब लोग प्रसाद लेलो आके फिर अखाड़े मा पसीना बहाओ!" वे चिल्लाते हैं, हर आने वाले को लड्डू थमा देते। जिम करने वाले पेड़ों की छांव में बल लगाते हैं, मंदिर की घंटियों के संग नाद मिलाते। यह जिम सिर्फ शरीर नहीं, आत्मा को भी मजबूत बनाता है। झील के बीचोंबीच स्वामी विवेकानंद की भव्य प्रतिमा जैसे राष्ट्र का आह्वान कर रही हो।

शाम ढलते ही बोटिंग शुरू हो जाती है। पेडल बोट्स पानी पर नाचते हुए प्रेमी जोड़ों, परिवारों और दोस्तों को लहरों पर तैराते। "भैया, तेज चलो यार तो मज़ा आए, तुम घरवाली से लड़ाई कईके आए हो क्या!" बच्चे चिल्लाते, बोट वाले हंसते "बैल हो का बे, ज्यादा हेलिकाप्टर न बनो, अगर झील में गिरे तो बचावे वाला है नहीं कोई, और हमका तैरब नहीं आवत है!" कोहरे में बोटें धुंधली दिखती हैं, मानो सपनों के जहाज तैर रहे हों। बोटिंग यहां विलास नहीं, जीवन का उत्सव है।

चमचमाता रबराइज्ड फुटपाथ मोतीझील को घेरता हुआ—नरम, सुरक्षित, हर कदम पर सुकून देता। सुबह जॉर्ग्स, दोपहर वॉकर, शाम प्रेमी जोड़े—सब इसी पर चलते। फुटपाथ पर चलते हुए कानपुर का पूरा संसार दिखता है—हंसी, बकैती, जीवन का प्रवाह। यह पथ सिर्फ चलने को नहीं, सोचने को भी बाध्य करता है।

तालाब में बत्तखें चपचपाते चुग रही हैं। दाना मिलते ही चहचहाहट शुरू हो जाती। मछलियां सतह पर उछलतीं, चांदी सी चमकतीं। बच्चे बिस्कुट फेकते, बत्तखें दौड़तीं—प्रकृति और मनुष्य का संगम। कोहरे में बत्तखों की चहचहाहट ध्वनि लोक बन जाती, मछलियां झील का संगीत रचतीं। बाहर लोग चने, ब्रेड मक्खन, नारियल पानी के स्टालों को घेरे खड़े हैं, "अरे पंडित क्या बकलोली कर रहो यार, इतनी देर से खड़े है, एक बंद में मक्खन न लगा पाए तुम, हौक दिए जाओगे।" शहर के लौंडे

दुकानदार को धमक दिखा रहे हैं। हर कोने पर चाय के स्टॉल हैं—भाप उठती, पकौड़े तलते। "भैया, दुई प्लेट पकौड़ा, चाय मसाला!" आवाज़ें गूँजतीं। चाय की चुस्की के साथ दुनिया भूल जाती। ये स्टॉल मोतीझील का हृदय हैं—जहाँ अजनबी दोस्त बनते, कनपुरिया कहानियां शुरू होतीं।

मोतीझील की जान हैं इसकी दो बराबर आकार की झीलें—दोनों समान विशाल, दोनों समान गहरी, दोनों एक-दूसरे की परछाईं। पहली झील नीली चमक वाली, लहरें हवा के संग नृत्य करतीं—नवाबी नौका विहारों की साक्षी। दूसरी हल्के हरे पानी वाली, कोमल तरंगें लिए—परिवारों का पसंदीदा कोना। सर्दियों में दोनों पर कोहरा एक समान चादर बिछाता, बत्तखें दोनों किनारों पर चहचहातीं। शाम को चांद दोनों पर एक साथ उतरता—जुड़वां चांदनी का नजारा। ये बराबर झीलें मोतीझील को संतुलित सुंदरता देतीं—दोनों में कानपुर का हर दर्द, हर लफ्फाज समाई।

गुड़गाँव के चकाचौंध भरे कंक्रीट जंगल से केतन दो साल बाद मोतीझील आया था, इतने दिनों बाद पैरों तले वही मिट्टी महसूस हुई। सुबह से शाम तक मीटिंग्स की होड़, डेडलाइन का दबाव, ट्रैफ़िक के हॉर्न—वो सब धुंधला सा हो गया। हाथ में चाय का गर्म कप था, भाप कोहरे में घुल रही थी, और आँखों के सामने मोतीझील की बराबर झीलें चमक रही थीं। दो साल का अंतर मानो पल भर का था—झीलें वही, लहरें वही, बस केतन बदल गया था।

गुड़गाँव की भागदौड़ ने उसे काट दिया था। सुबह पाँच बजे उठना, मेट्रो का धक्कम-धक्का, बॉस का "रिपोर्ट अभी भेजो!" हर पल दौड़-भाग। कॉफ़ी मशीन का शोर, एसी की ठंडी हवा, क्यूबिकल की ऊब। वीकेंड में भी ईमेल्स की बौछार। मोतीझील के सामने खड़ा होकर पहली बार साँस ले पाया। यहाँ हवा में मिट्टी की सोंधी महक थी, चाय स्टॉल से ठिठोली की आवाज़ें आ रही थीं—"अबे ये लाजपत भवन दिखाई नहीं पड़ रहा है, कहीं कोहरे में गायब तो नहीं हो गया!", कोई नगर निगम के पिछवाड़े से हॉर्न घिनघिनाते हुए चला आ रहा है "हट जाओ सामने से नहीं तो फुटबाल बना देब" केतन के चेहरे पर हल्की सी मुस्कुराहट छन सी गई।

दो साल पहले आखिरी बार यहाँ आया था। तब नौकरी का चक्कर ऐसा था कि ज्यादा समय नहीं मिल पाया, आज की वापसी उसे अलग ही अनुभव दे रही थी। 'जय जवान गेट' को स्पर्श किया, वही पुराना स्पर्श। हनुमान जी मंदिर से मोतीचूर लड्डू की खुशबू आई। केतन मुस्कुराया—"गुड़गाँव की निराशा भरी ज़िंदगी से मुक्ति मिल जाए तो अच्छा है" रबर फुटपाथ पर कदम रखा, जैसे हर चरण में बचपन लौटने लगा। जैसे झील ने पुकारा, "मौज में हो न भैया?"

यह वापसी सिर्फ भौगोलिक नहीं थी। दो साल की थकान, तनाव, अकेलापन—सब झील की लहरों में बह जैसे गया। केतन ने आँखें बंद कीं। कोहरे में बत्तखों की चहचहाहट सुनाई दी। यही घर था, यही मूल था। गुड़गाँव का केतन मर गया, कानपुर का केतन जाग सा उठा।

केतन ने आँखें खोलीं तो मोतीझील की लहरें नाच सी रही थीं। हाथ में चाय का कप ठंडा हो चुका था, पर दिल गर्म था। अरे केतन, का हाल बच्चा, बहुत दिन बाद?" पीछे से मंगल चाचा की आवाज आई, हनुमान मंदिर से लड्डू थमाते हुए। केतन मुड़ा, मुस्कुराया—"हाँ चाचा, बाहर से आए थे तो मन किया इधर निकल आए।" मंगल चाचा केतन के परिवार से परिचित थे, साथ ही केतन को भी मोतीझील में बचपन से देखते आ रहे थे, अचानक से उसका मिलना उनको यादों के अलबम में खींच ले गया।

केतन का परिवार मोतीझील के पास ही कौशलपुरी में बसा था, जो की गुमटी नंबर पाँच के बाजार से जुड़ा हुआ था, जिसमें ब्राह्मणों तथा सिखों की मिली जुली आबादी रहती थी, मूल रूप से केतन के पिता जी उन्नाव जिले के बीघापुर के रहने वाले थे परंतु केतन की पैदाइश कानपुर की ही थी, जहाँ गलियों तंग पर दिल बड़े। पिता, रामेश्वर प्रसाद तिवारी, रेलवे के पुराने क्लर्क थे। अब रिटायर्ड थे परंतु रोज सवेरे 2 घंटे झील के किनारे ही बीतता था, और उनका कनपुरिया अंदाज झील के लोगों के बीच काफी मशहूर भी था, खास तौर पर किशोर अंकल के साथ उनकी तीखी पर मौज भरी बहस जो कि किसी दिल टूटे आशिक को भी हँसाने का माद्दा रखती थी "अरे किशोर तुम साले नहीं सुधरोगे, जबसे धंधा लड़के सम्हालने लगे हैं, आवारा हो गए हो बेटा, शर्माइन के पीछे जो हाथ धो के पड़े हो न, शर्मा किसी दिन तुमको धर न ले, हपक के एक

कंटाप धरा तो सारी रंगबाजी धरी रहि जई,” चश्मा ऊपर सरकाते और सब हंस देते, बेचारे किशोर अंकल मुंह बनाते खसक लेते। कनपुरिया स्टाइल में उनकी बकेती मशहूर थी—पड़ोसी लाला जी से बहस, फिर चाय पर सुलह। केतन की माँ, शारदा देवी, गृहिणी थीं—घर की लक्ष्मी, मोहल्ले की मिसाल। बेटे केतन से उनका प्रेम ऐसा था मानो वो उनकी आँखों का तारा हो।

केतन ने मंगल चाचा से लड़कू ले लिया और धीरे-धीरे फुटपाथ पर चल पड़ा। कोहरे की चादर अभी भी झील को लपेटे हुए थी, लेकिन दिल की गर्माहट उसे घर जैसा सुकून दे रही थी। पास ही एक बेंच खाली थी, केतन ने कदम बढ़ाए, बेंच पर धप्प से बैठ गया। चाय का ठंडा कप एक तरफ रखा, आँखें बंद कीं। हवा में बत्तखों की चहचहाहट घुली हुई थी, मानो पुरानी यादें खुद बोल रही हों।

यकायक जिगरी दोस्तों की पुरानी तस्वीरें उसकी आँखों के सामने एक-एक कर तैरने लगीं—वीरू, ऋषभ, नीरज और अनुश्री।

कितने बेफ़िक्र और हसीन थे वे दिन, जब वे सब गुमटी की तंग गलियों में मटरगश्ती करते, तो कभी मोतीझील ग्राउंड की तपती धूप में दिनभर क्रिकेट ठोका करते थे। वीरू की वह शानदार कवर ड्राइव, विकेटों के पीछे ऋषभ की जादुई चपलता, नीरज का ऑलराउंडर अंदाज़ और केतन की घातक गेंदबाज़ी... हर मैच एक नया जश्न हुआ करता था। खेल की थकान के बाद सब वहीं पार्क की बेंच पर बेसुध होकर पसर जाते। चाय-पकौड़ों का दौर चलता और बातों-बातों में अनुश्री की टाँग खिंचाई होती। अनुश्री भले ही झल्ला उठती, पर उन दिनों की हर छोटी-बड़ी बात किसी खूबसूरत परी-कथा की तरह दिल में रची-बसी थी।

समय बदला तो सब अपनी-अपनी दिशाओं में निकल गए। ऋषभ इन दिनों चंडीगढ़ एयरफ़ोर्स बेस पर तैनात था—नीले आसमान की ऊँचाइयों में उड़ान भरता, सरहद पर देश की रखवाली करता। पिछले ही साल वाघा बॉर्डर पर दोनों की मुलाकात हुई थी। उस वक्त ऋषभ की फौजी वर्दी में जो वीरता चमक रही थी, वह केतन के दिल को छू गई थी।

"केतन भैया, ज़िंदगी की असली फाइट यहीं है—सरहद पर! गुड़गाँव के उन ठंडे क्यूबिकल्स में नहीं!" हाथ मिलाते हुए ऋषभ ने खिलखिलाकर

कहा था। उसके बाद फ़ोन पर तो बात हो जाती, लेकिन सख्त ट्रेनिंग और एयरफ़ोर्स के कड़े शेड्यूल की वजह से दोबारा मिल पाना मुमकिन न हो सका।

और वीरू... यानी वीरेंद्र? वह नोएडा के एक नामी मीडिया हाउस में पत्रकारिता के मोर्चे पर डटा हुआ था। भारतीय जनता पार्टी की बीट कवर करता, दिल्ली-एनसीआर की भागदौड़ में दिन-रात एक किए रहता। फ़ुर्सत तो जैसे उसके शब्दकोश से गायब ही हो चुकी थी। मिले हुए ज़माना बीत गया था। पिछली बार केतन खुद उससे मिलने दिल्ली गया था। वीरू एक थकाऊ प्रेस कॉन्फ़ेंस से बाहर निकला था—आँखों में गहरी थकान थी, लेकिन पत्रकारिता का जुनून अब भी चमक रहा था। दोनों ने सड़क किनारे कुल्हड़ वाली चाय पी, पुरानी यादें ताज़ा कीं, पर कुछ ही मिनटों में वीरू का फ़ोन घनघना उठा और वह माफ़ करना कहता हुआ दफ़्तर की ओर भाग छूटा। उसके बाद से उनके रिश्ते बस व्हाट्सएप पर आने वाले मीम्स और औपचारिक शुभकामनाओं तक सिमटकर रह गए थे।

नीरज और अनुश्री कानपुर में ही हैं पर उनसे मिले अरसा हो गया, नीरज से तो बात हुई थी कुछ दिन पहले, पर अनुश्री तो .... । अनुश्री का नाम दिमाग के एक कोने से उठकर ब्लड प्रेसर के तरह पूरे शरीर में दौड़ सा गया, यों लगा जैसे अभी कल की ही बात है, जब वे दोनों अपने अपने भविष्य की योजनाएं बनाने में व्यस्त थे और अचानक रास्ते अलग हो गए ।

केतन ने आंखें खोलीं, झील में भीड़ बढ़ती जा रही थी, लेकिन मन में एक खालीपन सा था। दोस्ती वो पुरानी वाली नहीं रही—सब अपनी-अपनी रेलगाड़ी पर सवार। “काश वो दिन फिर लौट आते, कितनी मौज थी,” केतन ने बुदबुदाया। पास से गुजरते एक जोड़े ने उसे घूरा, लेकिन वो हंसा, और बेंच से उठ के घर की ओर चल पड़ा ।

केतन ने दरवाजा धीरे से खोला। घर की गर्माहट ने ठंडे केतन को गले लगा लिया। चाय की अदरक वाली महक हवा में तैर रही थी। माँ रसोई से निकलीं। चूल्हे की आग की लालिमा उनके चेहरे पर नाच रही थी। “बड़ी देर कर दियो? झील ग्यो रहै का?” उन्होंने मुस्कराते हुए कहा। उनकी आँखों में चिंता की हल्की परत झलक रही थी।

केतन ने जूते एक-एक करके उतारे। थकान से उसके कंधे झुके हुए थे। वह सोफे पर बैठ गया। एक लंबी साँस बाहर निकली। पिता अखबार में डूबे हुए थे। उनका चश्मा नाक पर सरका हुआ था। कमरे में सुनहरी धूप झरोखों से छनकर फर्श पर बिखरी हुई थी। यह झील की लहरों जैसी लग रही थी। पुरानी बातें चुपचाप याद दिला रही थीं। अनुश्री का धुंधला सा चेहरा दिमाग की बाहरी सतह पर अस्पष्ट आकार ले रहा था। माँ ने चाय का कप लाकर उसके सामने रख दिया। भाप धीरे-धीरे ऊपर उठ रही थी। "पी लो बच्चा, गरम है। झील तो अब काफी सुंदर बना दीन है नगर निगम वाले?" केतन ने सिर हिलाया। उसने कप थामा। एक घूंट लिया। चाय मीठी और सुकून भरी थी। पाँच मिनट की खामोशी रही। बाहर चिड़ियों की चहचहाहट सुनाई दे रही थी।

"हाँ मम्मी, मोतीझील तो काफी बदल गया है। लेकिन बिना दोस्तों के सब बेकार सा लगता है, बड़ी मौज थी स्कूल वाले दिनों में, अब पहले जैसा कुछ नहीं दिखा वहाँ पर, जगह चाहे जितनी अच्छी हो जाए, दोस्त यार न हो तो सब बेकार है।" केतन की आवाज़ धीमी थी।

"सब बेकार है" वाले वाक्य पर अचानक पिता जी को हास्य व्यंग सुझा, उन्होंने अखबार धीरे से मोड़ा। चश्मा ऊपर किया। उनकी चेहरे पर हल्की मुस्कान थी। "अरे भाई, नॉस्टैल्जिया का ओवरडोज़ ले लियो हो क्या? तुमाये दोस्त यार विदेश नहीं पहुँच गए हैं, सब यहीं है देश के अंदर?" वे रुके। चाय का घूंट लिया। फिर हँसे। "अबे तुम तो ऐसा मूड बनाए हो गुरु जैसे तुम्हाई बीवी भाग गई हो!" उनका ठहाका हल्का सा कमरे में गूँज गया।

केतन मुस्कुराया। लेकिन उसकी आँखें गंभीर थीं। "पापा, झील तो काफी सुंदर बना दी है, फुटपाथ भी एकदम मस्त बना है लेकिन ...।" वाक्य अधूरा छोड़ते हुए उसने कप घुमाया। खामोशी छा गई।

फिर लंबा ठहराव आया। पिता ने सिर खुजाया। "हम्म, अच्छा है। अरे वो लड़की वाले बार बार फोन कर रहे हैं यार देख लो क्या करना है।" उनकी आवाज़ हल्की हो गई।

केतन की शादी की बात दादा नगर वाले अग्निहोत्री जी की बिटिया के साथ काफी दिनों से चल रही है पर केतन इस विषय पर बिल्कुल स्पष्ट है, "शादी वादी अभी दूर की कौड़ी है", अग्निहोत्री जी काफी दिनों से

चक्कर लगा रहे है, पर ये केतन है कि जब जब मिलनी आदि की बात होती है तो कत्री काट जाता है, एक बार तो वह पाँच महीनों तक कानपुर ही नहीं आया और फोन उठाना तक बंद कर चुका है ।

केतन का हाथ रुक गया। चाय अब ठंडी हो रही थी। "शादी अभी? पापा, आप लोग मेरी शादी की चिंता छोड़ दीजिए, मैं कोशिश कर रहा हूँ कि किसी तरीके से गुड़गाँव से निकलूँ और कानपुर में अपना स्टार्ट अप शुरू करूँ पर आप लोग तो ये शादी का टंटा पाल के बैठे हो?" उसकी आवाज़ में गहरा द्वंद्व था।

माँ ने पिता पुत्र संवाद की गंभीरता को देखते हुए हस्तक्षेप किया और केतन के सर पर ममता रूपी अस्त्र का प्रयोग किया, उनका स्पर्श गर्म और स्नेहपूर्ण था। "हाँ केतन तुम सही कहि रहे हो । पहिले तुम अपन धंधा पानी सेट करि लो, शादी कहाँ भागी जा रही है"

माँ रूपी योद्धा के आगे पिता जी निरुत्तर से प्रतीत हुए और फिर हँसे। "हाँ बाँस, तुम्हाई बात मान ली! हाई कमान की बात कौन टाल सकता है, हम अग्निहोत्री से कह देंगे की लौंडा हमारा अभी सेट नहीं है तुम कहीं और देखि लो!" उनकी हँसी ने माहौल हल्का कर दिया।

## कनपुरिया बकैती का शीर्षासन

इस शहर की सबसे दिलचस्प बात यह है कि यह शहर खुद को कभी सीधे-सादे तरीके से नहीं दिखाता। ऊपर से देखो तो धुएँ, ट्रैफिक और पुराने कारखानों वाला शहर लगेगा, लेकिन थोड़ा भीतर घुसो तो पता चलता है कि इसकी रंगों में गंगा बहती है और मिर्जाज में पूरा देसी ठाठ। शहर के उत्तर में बहती गंगा यहाँ सिर्फ नदी नहीं, कानपुर की पुरानी यादों की चलती हुई डायरी है। सुबह के घाटों पर कोई आरती कर रहा होता है, तो थोड़ी दूर लड़कों की टोली पानी में छल्ला लगाकर ऐसे शोर मचाती है जैसे पूरी दुनिया उन्हीं की हो। गंगा पार करते ही शुक्लागंज शुरू हो जाता है — आधा कस्बा, आधा शहर, और पूरा अपनापन। कानपुर वाले अक्सर मर्जाक में कहते हैं, “घर छोटा पड़ जाए तो शुक्लागंज खिसक लो, मौसी का घर समझो।” पश्चिम की तरफ बढ़ो तो कन्नौज की खुशबू हवा में मिलने लगती है; इत्र का शहर, जहाँ की महक कानपुर तक चली आती है। दक्षिण की ओर फतेहपुर है, जो कानपुर के लिए हमेशा से पड़ोसी कम, रिश्तेदार ज्यादा रहा — रोज़ी-रोटी, पढ़ाई और इलाज के लिए वहाँ के कितने ही लोग रोज़ इस शहर की तरफ़ आते-जाते रहते हैं। और पूर्व-पश्चिम में फैली सड़कों पर ऐसा लगता है जैसे पूरा बुंदेलखंड और अवध आकर कानपुर में हाथ मिला रहे हों। शायद इसी वजह से कानपुर सिर्फ़ एक शहर नहीं लगता; यह आसपास के दर्जनों कस्बों, बोलियों और सपनों का मिला-जुला अखाड़ा महसूस होता है, जहाँ हर आदमी थोड़ा बाहर का है और धीरे-धीरे पूरा कनपुरिया बन जाता है।

केतन एक मध्यम कद का युवक था, लगभग पच्चीस वर्ष का, जिसका शरीर कानपुर की गलियों में बिताए वर्षों की देसी ठसक लिए हुए था— न ज्यादा गोरा, न काला, बल्कि कानपुर की मिट्टी-सी गेहुँआ रंगत, जिसमें मोतीझील की धूप ने हल्की चमक बिखेरी थी। लंबे-सीधे बाल कंधों तक लहराते, जो गुड़गांव की आधुनिकता से प्रभावित थे लेकिन कानपुर लौटते ही परंपरागत स्टाइल में संवरे। चेहरा तेजस्वी—बड़ी सी



आंखें जो विचारों से चमकतीं, शरीर चुस्त था, लेकिन लैपटॉप की थकान ने कंधों पर हल्का बोझ डाला था।

वो आधुनिकता और परंपरा का संगम था—जींस-टीशर्ट पहनता लेकिन कुर्ता भी उतना ही सहज लगता, बातें स्पष्ट और बेबाक, उसकी रुचियां शहर की मिट्टी से जुड़ी थीं—किताबें पढ़ना, रातों को नॉवेल लिखने का शौक जो कनपुरिया जज्बातों से रंगा होता। विचारधारा प्रगतिशील लेकिन जड़ों से जुड़ी: आधुनिक तकनीक से परंपराओं को मजबूत करना चाहता था, जैसे डिजिटल प्लेटफॉर्म पर लोकल क्राफ्ट्स बेचना या कम खर्च में शिक्षा का सपना। वो स्पष्टवादी था—बातों में कोई लाग-लपेट न रखता, "सपना देखो, लेकिन जड़ें भूलो मत" उसका मूल मंत्र। गुड़गांव ने उसे कॉर्पोरेट की चालाकी सिखाई, कानपुर ने ईमानदारी।

बचपन से ही किताबें और गलियों की गपशप उसके गुरु रहे, जिससे वो प्रोफेशनल स्किल्स और सांस्कृतिक विरासत दोनों को जोड़ने का पक्षधर बना। ये चरित्र केतन को न सिर्फ एक व्यक्ति बनाता था बल्कि शहर का प्रतिबिंब—आधुनिकता की उड़ान में परंपरा की मिठास समेटे।

भोर की पहली किरण कमरे में घुसी तो केतन जागा, केतन ने अलमारी के सामने खड़े होकर जैसे ही चौथा टी-शर्ट बदला, खुद ही मुस्करा पड़ा – "ये, सवेरे-सवेरे, बम पिलाट बनके कहाँ जा रहे हो भैया?" हल्की ठंडी हवा, ऊपर से उनींदी धूप, और भीतर से एक मीठी-सी घबराहट – यह उसका मोती झील वाला दूसरा दिन था, लेकिन दिल में खिंचाव किसी पुराने यार जैसा हो चुका था। झील का पानी मोती-सा चमकता है, इसलिए नाम मोती झील पड़ा, यह बात केतन ने कल ही किसी अनजान अंकल की लफ्फाजी में सुनी थी, और तब से उसे यह जगह किसी फिल्मी लोकेशन जैसी लगने लगी थी। गेट के अंदर कदम रखते ही वही मखमली अहसास फिर से उसके गिर्द लिपट गया, जैसे हवा ने कान में फुसफुसाकर कहा हो – "आ गए भइया, चलो, आज थोड़ा सा भौकाल बनाते हैं।" सामने दूर तक फैला वॉकिंग ट्रैक, किनारे-किनारे पेड़ों की कतार, और बीच-बीच में झील की तरफ खुलती जगहें जहाँ से पानी नीले काँच की तरह झलक रहा था। कहीं बच्चे झूले पर चिल्ला रहे थे, कहीं बुजुर्ग बेंच पर बैठे अखबार से ज्यादा एक-दूसरे की हड्डियों की खबर ले रहे थे। माहौल ऐसा कि जैसे पूरे शहर की तफरी एक ही फ्रेम

में कैद हो गई हो – कोई योग में उलझा, कोई हँसी में, और कोई बस चाय की भाप में। दाएँ तरफ़ वृद्धों का एक बड़ा ग्रुप था, कदम छोटे-छोटे, लेकिन गप्पों की रफ़्तार कलेक्टरगंज की पुरानी गलियों जैसी तेज़। एक अंकल दूसरे से बोले, "देखो भाई, लौंडों से कह दिया है हमारे चक्कर में न पड़े, जाओ, कमाओ जाके बाहर- हम तो यहीं तफरी करेंगे, हमें नहीं जाना नोएडा वोयडा !" पास ही कोई याद दिला रहा था, "अबे तुम कल ठगु के लड्डू ले आना, तुम्हारा नगर निगम वाला काम निपटवा देंगे!" सब ठहाके मारकर हँसते, फिर अगले चक्कर में वही मज़ाक नए अंदाज़ में दोहराया जाता। उनकी चाल में सुस्ती थी, पर बातों में ऐसी गर्मी कि ठंडी हवा भी हल्की गर्म लगने लगे।

ठगु के लड्डू कानपुर की सिर्फ़ मिठाई नहीं, पूरे शहर का स्वभाव हैं — थोड़ा देसी, थोड़ा बिंदास, और स्वाद में ऐसा कि एक बार खाओ तो बरसों याद रहे। परेड की उस मशहूर दुकान के बाहर लगी लाइनें खुद गवाही देती हैं कि कनपुरिया आदमी गुस्सा भूल सकता है, पर ठगु के लड्डू का रास्ता नहीं। घी की खुशबू, बूंदी की नरमी और ऊपर से उसका वही मज़ेदार अंदाज़ — "ऐसा कोई सगा नहीं, जिसको हमने ठगा नहीं" — इस मिठाई को आधा स्वाद और आधी कहानी बना देता है। शहर में तो हाल यह है कि किसी के घर मेहमान आ जाएँ और ठगु के लड्डू न निकलें, तो मेजबानी अधूरी मानी जाती है।

थोड़ा आगे बढ़कर केतन ने युवाओं की दुनिया देखी – रनिंग ट्रैक पर जॉर्गर्स ऐसे भाग रहे थे, जैसे मोतीझील नहीं, ओलंपिक की ट्रायल हो। कोई घड़ी देखते हुए खुद को चैलेंज दे रहा था, कोई ईयरफोन लगाकर अपनी ही दुनिया में था, और बीच-बीच में दो-चार लड़के अचानक स्प्रिंट मारकर बाकियों को भौकाल दिखा रहे थे। किसी के मुँह से निकला, "भौकाल देख्यो भाई, पाँच राउंड मार दिए!" दूसरे ने तुरंत काटा, "तुम एकदम बैल हो कसम से, भौकाल से पेट नहीं घटता, दो राउंड और लगा लो, तभी तो आज छोले भटूरे का आनंद मिल पाएगा, बेटा आज तुमायी बारी है ध्यान रखना, कोई बकलोली नहीं चलेगी!"

सबसे दिलचस्प नज़ारा तो थोड़ा आगे था, जहाँ मध्यम वर्ग के अधेड़ और युवा अपने-अपने योग-प्राणायाम वाले ग्रुप में तल्लीन थे। कोई अनुलोम-विलोम कर रहा था, तो कोई सूर्य नमस्कार की स्थिति में अटका हुआ,

जैसे ट्रैफिक पुलिस ने पोज़ देकर वहीं जाम लगा दिया हो। एक ग्रुप में गुरुजी की आवाज़ गूँजी, "सांस अंदर... जैसे कलेक्टरगंज की ठंडी हवा... और सांस बाहर... जैसे झकरकट्टी के जाम की टेंशन!" लोग हँसी रोकने की कोशिश में ही प्राणायाम कर ले रहे थे। एक अंकल भ्रामरी करते-करते हँसी में ऐसे टूटे कि बगल वाले बोले, "भइया, ये योग है या कनपुरिया बकैती की नई क्रिया?"

लेकिन असली शो तो "कनपुरिया लप्फाज मंडली" का था – वही पुराना, जाना-पहचाना ग्रुप, जिसमें किशोर अंकल, लाला जी, अग्रवाल जी, शर्मा आंटी, ठाकुर साब, कनोजिया जी, भोला भाई, कटियार जी और दो-तीन नए चेहरे भी जुड़ गए थे। आज सबके चेहरों पर अलग चमक थी, जैसे मोती झील की सतह पर सुबह की धूप। किशोर अंकल बोले, "लाला जी, आज सुबह तुम लेट आए हो पेनल्टी लगेगी!" लाला जी ने चट से जवाब दिया, "किशोर, का बात है आज बहुत चौड़िया रहे हो, इस हिसाब से तुम पर तो रोज ही पेनल्टी लगनी चाहिए, तुम तो रोज भाभी जी के चक्कर में लेट हो जाते हो, और खिलाओ उनको इमली वाली चाट!" नाम लेते ही सबकी जीभ पर इमली और मसाले का स्वाद तैर गया, और आँखों में वहाँ की चाट की याद चमक उठी। कोई किसी की टांग खींच रहा था, कोई चाल, कोई पेट, और कोई बालों की घटती संख्या पर टिप्पणी कर रहा था, लेकिन हर तंज़ के पीछे ऐसा अपनापन था, जो सिर्फ़ कानपुर की मिट्टी में ही मिलता है।

केतन ने एक लंबी सांस ली। सामने योग करने वाला ग्रुप था, बाईं तरफ जॉगिंग वाले दोस्त, और दाईं तरफ लप्फाजी की फुल ऑन पिक्चर चल रही थी। उसे लगा, आज सिर्फ़ मोती झील घूमने नहीं आया, अपने शहर के अलग-अलग रंग देखने को मिल जाएंगे आज – कहीं फिटनेस का जोश, कहीं उम्र का सुकून, और कहीं लप्फाजी की मीठी शरारत। शायद आज की सुबह उसके लिए सिर्फ़ वॉक नहीं, किसी नए साथ की शुरुआत बनने वाली थी।

तभी पीछे से एक जोरदार आवाज़ आई—"केतन ...!" केतन मुड़ा तो सामने नीरज खड़ा था, क्लासमेट, वो पुराना यार जिसके साथ गुमटी की गलियों में खूब मौज मारी है। दोनों के गले मिलते ही बचपन की यादें बह निकलीं। नीरज मध्यम कद का था, लगभग पाँच फुट आठ इंच, गोल

चेहरा कनपुरिया ठसक से चमकता—हल्के भूरे बाल सँवारे हुए, माथे पर हल्की झाड़ियाँ। आँखें बड़ी-बड़ी, चुलबुली चमक वाली, गाल थोड़े गड्ढेदार। नाक सीधी, होंठ मोटे, दाढ़ी का हल्का खुरचनिया स्टाइल—उँगलियों पर चाबी की रिंग लटकाए खड़ा था।

नीरज ने कंधे पर हल्का हाथ रखा। "अरे गुरु तुम यहाँ मोतीझील टहल रहे हो और हमे पता ही नहीं, कब आए साले, बताया भी नहीं?"। आवाज़ में हल्की कशिश थी, जैसे सालों पुरानी धूल झड़ रही हो। केतन मुस्कुराया, आँखों में हल्की चमक लिए बोला "सब मस्त है भाई, और अपने सुनाओ"! नीरज ने जारी रखा, "हम तो यहीं गोविंद नगर में ही, कभी-कभी इधर मोतीझील निकल आते हैं, झील की चाय-पकौड़ी का अपना ही मज़ा है।" केतन ने सिर हिलाया। "और तुम बताओ भाई," नीरज मुस्कराते हुए बोला, आँखें सिकोड़ लीं। "बस भाई, कुछ दिन पहले ही गुड़गाँव से आया हूँ। और अनुश्री के क्या हाल है?" केतन दबी आवाज़ में बोला, नज़रें झुक गईं।

नीरज की आँखें चमकीं, हल्की हँसी छूट गई—"अनुश्री? अरे वो तो बिल्कुल वैसी ही है भाई—बी एड करने के बाद जॉब मिल गई है, उन्नाव में किसी सरकारी स्कूल में थी, अब ट्रांसफर ले लिया है यहीं पनकी वाले सरकारी स्कूल में ही पढ़ा रही है। साल भर पहले ही जॉब लगी है, सही है उसका पार अब तो, मँगनी भी तय हो गई है उसकी तो, मिली थी महीने भर पहले।" केतन का चेहरा हल्का सा तन गया, मन में पुरानी तस्वीर धुंधली सी उभरी। नीरज ने कंधा थपथपाया। "चल भाई, किसी दिन सब मिला जाए। पुराने दिन ताजा किया जाए और ऋषभ और वीरू से बात होती है?" केतन ने सिर हिलाया, हल्की मुस्कान फैली। "हाँ भाई बात भी हुई थी, मिले भी थे।" केतन ने सिर हिलाया, नीरज ने पास की बेंच की ओर संकेत किया। "चल, दो मिनट बैठा जाए। चाय मँगाते हैं।" दोनों बैठे। स्टॉल वाला चाय लाया—गर्म, मसालेदार। भाप ऊपर उठी, बातें धीरे-धीरे खुलने लगीं।

कुछ देर बाद नीरज निकल गया, मन में हल्की सी हलचल—अनुश्री का नाम, स्कूल के दिनों में चुलबुली हँसी, आँखों में शरारत की चमक, मँगनी?

केतन उठा, फुटपाथ पर कदम पड़े। हवा ने चेहरा सहलाया। घर की ओर निकल पड़ा। कानपुर फुसफुसा रहा था—पुरानी कहानियाँ फिर शुरू हो रही हैं।

केतन घर पहुँचा। दोपहर का वक्त हो चला था। कमरे में धूप झरोखों से ऐसे छन रही थी जैसे जे.के. मंदिर में शनिवार के फव्वारों से पानी छन-छन के गिरता है। जे.के मंदिर का नाम आया है तो समझ लीजिए की कानपुर के सात अजूबों में एक इस मंदिर का अपना स्थान है, वैसे तो कानपुर प्राचीन इमारतों और आधुनिक कॉम्प्लेक्स का एक मिला जुला संगम रहा है, लेकिन इस जगह की यात्रा के बिना कानपुर यात्रा अपूर्ण मानी जाएगी। कानपुर पूरब का मैनचेस्टर कहा जाता रहा है, जहाँ सन 2000 तक बड़ी बड़ी मिलों और कारखानों की आवाज़ें गूँजती रही हैं लेकिन लाल सलाम के नारों ने इस शहर की इस विशेषता को बहरा कर दिया है और इन हानि लाभ के प्रपंचों से दूर कानपुर अपनी ही मौज में मस्त है। केतन ने फोन उठाया। गुड़गाँव वाले बॉस का नंबर डायल किया। दिल धक्-धक् कर रहा था। वर्क फ्रॉम होम की बात करनी थी। घंटी बजी। आवाज़ आई। "हैलो केतन?"

"सर नमस्ते। घर आया हूँ कानपुर। कुछ फैमिली इश्यू हैं। कुछ दिन वर्क फ्रॉम होम की परमिशन चाहिए। यहाँ से काम कर लूँगा।" आवाज़ में हिचक थी। पसीना छूट रहा था।

बॉस थोड़ा रुके। "कोई बात नहीं केतन। फैमिली पहले। लेकिन प्रोजेक्ट का प्रेजेंटेशन है सप्ताईस को, दो दिन के लिए आ जाओ गुड़गाँव। मीटिंग निपटा दो। फिर चले जाना कानपुर। वर्क फ्रॉम होम बाद में फिक्स कर देंगे।"

केतन ने राहत की सांस ली। "ठीक सर। कल शाम की फ्लाइट देखता हूँ।" बॉस ने हामी भरी।" फोन रखा। केतन कुर्सी पर बैठा। बाहर सड़क की आवाज़ें आ रही थीं। आँगन में गहरी शांति थी, और केतन की आँखों में भी।

सप्ताईस की सुबह। केतन होंडा चौक पर उतरा। टैक्सी ने उसे साइबर सिटी के ठीक बीचों-बीच उतारा था। आसमान छूती हाई राइज बिल्डिंग्स चारों तरफ चमक रही थीं—ग्लास की दीवारें धूप में चकाचौंध कर रही थीं, जैसे कोई साइंस फिक्शन मूवी का सेट। सड़कें चौड़ी और

शानदार, पॉश कारों की कतारें दौड़ रही थीं—मर्सिडीज, बीएमडब्ल्यू, ऑडी—सभी चमचमाती हुईं। ट्रैफिक सिग्नल पर हॉर्न की धुनें बज रही थीं, लेकिन सब कुछ सिस्टमैटिक लग रहा था। कॉर्पोरेट वर्ल्ड की रफ्तार यहीं से महसूस हो रही थी। सूट-बूटधारी युवक-युवतियाँ लैपटॉप बैग लटकाए तेज़ कदमों से ऑफिस की ओर भागे जा रहे थे। कोई ईयरफोन लगाए कॉल पर चिल्ला रहा था—“डेडलाइन मिस नहीं होनी चाहिए!” कोई कॉफी का गिलास थामे मीटिंग के लिए लिफ्ट की ओर दौड़ रहा था। हवा में एसी की ठंडक और फास्ट फूड की महक घुली हुई थी। होंडा चौक का चौराहा व्यस्तता का केंद्र था—मेट्रो स्टेशन से निकलते लोग, डिलीवरी बॉय बाइक पर उन्माद की सवारी कर रहे, और ऊँचे टावरों से झाँकती स्क्रिन्स पर स्टॉक मार्केट की खबरें प्लैश हो रही थीं। केतन खड़ा रहा। कानपुर की शांति से ये भागदौड़ उसे अजनबी लग रही थी। दिल फिर धक्-धक् करने लगा। प्रेजेंटेशन का टाइम हो गया था। उसने बैग संभाला और बिल्डिंग की ओर बढ़ा।

काँच के दरवाज़े से अंदर घुसते ही ठंडी हवा का एक तेज़ झोंका उसके चेहरे से टकराया। यह उसका ऑफिस था—गुड़गाँव के साइबर हब में स्थित पच्चीस मंज़िला ‘टेकनोवेटा टावर्स’। लॉबी का संगमरमर का फर्श चमक रहा था। बीच में लगी बड़ी-सी दीवार पर कंपनी का नाम नीली रोशनी में जगमगा रहा था। रिसेप्शन पर बैठी दो युवतियों ने मुस्कराकर उसका स्वागत किया। उन्होंने पूछा, “अठारहवीं मंज़िल?” केतन ने सिर हिलाकर हाँ कहा और लिफ्ट की ओर बढ़ गया।

लिफ्ट में चढ़कर उसने अठारहवीं मंज़िल का बटन दबाया। दरवाज़े बंद होते ही सामने लगे शीशे में उसकी नज़र अपने चेहरे पर पड़ी। वह थोड़ा थका हुआ दिख रहा था, लेकिन उसके चेहरे पर आत्मविश्वास भी साफ़ दिखाई दे रहा था।

अठारहवीं मंज़िल पर उतरते ही उसके सामने एक बड़ा-सा कार्यक्षेत्र फैल गया। चारों ओर सजी मेज़ों पर रखे कंप्यूटरों की नीली रोशनी चमक रही थी। जगह-जगह काँच की दीवारें थीं और व्हाइटबोर्ड पर रंग-बिरंगे नोट चिपके हुए थे। वातावरण में कॉफी मशीन की हल्की आवाज़ और की-बोर्ड की लगातार चलती टक-टक सुनाई दे रही थी।

पूरा ऑफिस काम की भागदौड़ में डूबा हुआ था। कोई अपने ग्राहक से बात कर रहा था, कोई बोर्ड पर योजनाएँ बना रहा था, तो कहीं टीम मीटिंग चल रही थी। पैट्री में लोग चाय-कॉफी और नाश्ते में व्यस्त थे। एक कोने में कंपनी के मुख्य अधिकारी का काँच का केबिन था, लेकिन ज़्यादातर लोगों का ध्यान अपनी स्क्रीन और काम पर ही लगा हुआ था।

केतन की मेज़ भी एक कोने में थी। उस पर दो मॉनिटर, एक हेड सेट और कई ज़रूरी नोट रखे हुए थे। तभी उसके बॉस के केबिन से आवाज़ आई, “केतन, मीटिंग रूम नंबर तीन में आ जाओ। प्रेजेंटेशन शुरू होने वाला है।”

केतन ने अपना लैपटॉप खोला। उसकी धड़कन थोड़ी तेज़ हो गई। इस जगह पर आराम या ठहराव के लिए जगह नहीं थी। यहाँ हर कोई अपने लक्ष्य तक पहुँचने की दौड़ में लगा हुआ था।

कुछ देर बाद केतन का प्रेजेंटेशन पूरा हो गया। मीटिंग रूम से बाहर निकलते हुए उसने घड़ी देखी। दोपहर के भोजन का समय हो चुका था। उसने अपनी फाइलें समेटीं, लैपटॉप बैग में रखा और आराम से कैफ़ेटेरिया की ओर चल पड़ा।

कैफ़ेटेरिया रोज़ की तरह भरा हुआ था। एक कोने में खाली टेबल देखकर वह वहाँ जाकर बैठ गया। ऑर्डर दे दिया – “एक ठंडी कॉफ़ी।” मोबाइल उसने मेज़ पर उल्टा रख दिया और कुर्सी पर पीठ टिका दी।

थोड़ी ही देर में मोबाइल वाइब्रेट हुआ। अनजान नम्बर फ्लैश हो रहा था। केतन ने बिना ज़्यादा सोचे कॉल रिसीव कर लिया।

“हेलो?” उसकी आवाज़ सीधी-सादी, दफ़्तर-सी थी।

उधर से तुरंत एक चमकीली, खुली-सी आवाज़ आई, जिसमें हल्की तेज़ी और बेफिक्री थी, “हैलो केतन! पहचान, कौन?”

उसकी आवाज़ में जोश था – साफ़, ज़रा ऊँची, और ऐसे जैसे हँसी हर शब्द के किनारे पर बैठी हो।

केतन हल्का-सा मुस्कराया, “पहले तुम ही बता दो, मैं गेस मारने में वीक हूँ।”

वो खुलकर हँसी, उसकी हँसी फोन के स्पीकर से भी साफ़ और तेज़ लगी, "अरे वाह, अभी भी उतना ही सीधे हो तुम । मैं अनुश्री शुक्ला बोल रही हूँ... स्कूल वाली अनु ।"

उस हँसी में किसी तरह की झिझक नहीं थी, बस साफ़-साफ़ अपनापन और पुरानी दोस्ती की ठनक।

"ओ... अनु! काफ़ी टाइम हो गया, कहाँ गुम हो गई थी तुम, मुझे लगा घंटाघर वाली अनुश्री शुक्ला किसी दूसरी दुनिया में चली गई हैं?" केतन की टोन सामान्य रही, पर हल्की-सी खुशी साफ़ महसूस हुई – जैसे किसी अच्छे पुराने दोस्त की याद अचानक ताज़ा हो जाए।

"गुम कहाँ थी," अनुश्री ने अपनी वही ठहरी हुई, मगर खुली आवाज़ में कहा, "नीरज से मिली थी कल, उसी ने तुम्हारा नम्बर दिया है।

"अच्छा, नीरज! हम्म -मिला था, वो झील पे!" केतन ने नैपकिन से मेज़ के कोने पर पड़ा पानी साफ़ करते हुए हामी भरी, "

वह ज़रा ऊँची हँसी के साथ बोली," तो पहले ये बताओ कहाँ रहे इतने दिनों तक, याद नहीं आई अपनी अनु की ?"

उसकी आवाज़ का अंदाज़ मस्ती भरा था, पर लहज़ा इतना साफ़ था कि सुनने वाले को फ़ौरन समझ आ जाए – ये लड़की बात घुमाकर नहीं करती।

"मैं तुम्हें भूला ही कब?" केतन ने चुटकी ली, "न जाने कितने दिन घंटाघर की घड़ी को निहारते- निहारते जब थक गया तो गुड़गाँव भाग आया, पर अनुश्री शुक्ला के दर्शन न हो पाए?"

"अच्छा जी, क्या बात है, इतनी दीवानगी इस कलियुग में, धन्य भाग हमारे" अनुश्री ने बिना किसी औपचारिकता के कहा, "तो मिस्टर केतन कहाँ हैं, दर्शन कब दे रहें हैं?"

बोलते समय उसकी आवाज़ में हल्की-सी नकल उतारने वाली टोन आ गई – "सुना है गुड़गाँव में झण्डा गाड़ रहे हैं?"

"हाँ, सही पकड़े हैं, और आप भी तो मास्टर जी बन गई हो" केतन ने घुमाकर कान पकड़ा, "अब तो डर के रहना पड़ेगा पता नहीं कब डंडा पड़ जाए"



“बिलकुल, मास्टर जी बन गई हूँ, तो थोड़ा कायदे से बात करना मुझसे” उसने ज़रा रौब, ज़रा मज़ाक के मिक्स के साथ कहा, “अरे यार ये तो कभी नहीं सोचा था, साला सबसे ज्यादा डर टीचर से ही लगता था” उसकी आवाज़ में जोश था, जैसे वो अपनी ही बात पर खुद एन्जॉय कर रही हो।

दोनों हल्के से हँस पड़े, जैसे दो पुराने सहपाठी किसी कैजुअल रीयूनियन पर हों।

“कानपुर आना जाना लगा रहता है क्या?” अनुश्री ने सीधे, बिना घुमाए-फिराए पूछा।

“हाँ, अब शायद कानपुर ही कर्मभूमि बन जाए” केतन ने खुद को संदेह की नजर से देखा।

“परफेक्ट,” अनुश्री ने तुरंत, उत्साहित और तेज़ लहज़े में कहा, “तब मिलते हैं। नीरज से पहले ही बोल चुकी हूँ – ‘तीनों मिल रहे हैं, बस तारीख़ तुम फाइनल कर लेना।’ मोतीझील चलते हैं, वहीं पानी के बताशे खाएंगे, जैसे स्कूल के बाद खाते थे, बड़ा मज़ा आएगा?” केतन ने खिड़की के बाहर देखते हुए कहा, “हां, मिल सकते हैं।”

तभी उधर से स्कूल की तेज़ घंटी की आवाज़ आई। उसके ऊपर से भी अनुश्री की आवाज़ साफ़ सुनाई दे रही थी, “ओह, मेरी क्लास का टाइम हो गया है फिर बात करते हैं” उसने हँसी के साथ कहा।

“चलो बच्चे इंतज़ार कर रहे होंगे, बाय मिस्टर कॉर्पोरेट”

“बाय मिस टीचर,” केतन ने कहा।

कॉल कट गया। कैफ़ेटेरिया की आवाज़ें फिर साफ़ सुनाई देने लगीं। उसने अपनी थाली की तरफ़ देखा, फिर मोबाइल उठाकर कॉन्टैक्ट लिस्ट में एक नया नाम सेव किया – “Anushree”.

पानी के बताशे गोलगप्पों का कनपुरिया अवतार हैं। ये कानपुर की आत्मा ही कहलाते हैं। फूल बाग से लेकर मोतीझील तक हर नुक्कड़ की शान हैं ये। कुरकुरे-चटपटे गोल-मटोल पूरियाँ मैदा बेसन-सूजी की पतली, भुनी चमकदार चादरों से बनती हैं। बाहर से ये कुरकुरा किला लगता है। अंदर से नाज़ुक राज़ छुपाए रहती हैं। ठेले वाले उँगली की चुटकी से छोटा-सा छेद करता है। फिर झट से तीखा इमली का लाल

ज्वाला-जल पानी भर देता है। उस पानी में पुदीने की ठंडी लहरें तैरती हैं। हींग का धुआँधार धमाका घुला होता है। भुना जीरा की मस्ती बिखरी रहती है। काला नमक की चुभन महसूस होती है। हरी मिर्च का आग का राग गूँजता है। सब मिलकर मसालों का महासमर बनाते हैं। ऊपर चना-आलू का गाढ़ा मसाला झमाझम झरता है। कच्चा प्याज़ की बारिश होती है। चटनी का तूफ़ानी तड़का छिड़कता है। फिर धड़ाम! पूरा बताशा मुँह के अंदर!

## प्यार और तकरार वाली कलेक्टरगंज मेट्रो

गुडगाँव की चमचमाती इमारतें पीछे छूट रही थीं। सुबह की हल्की धूप शीशे की दीवारों पर पड़कर ऐसी चमक रही थी मानो पूरा शहर स्टील और काँच से बना हो। साइबर सिटी की चौड़ी सड़कों पर गाड़ियों का सैलाब दौड़ रहा था, लोग हाथों में कॉफी के कप और कंधों पर लैपटॉप बैग लटकाए अपनी-अपनी मंज़िल की ओर भागे जा रहे थे। उसी भीड़ के बीच केतन भी रेलवे स्टेशन की ओर बढ़ रहा था, लेकिन उसकी रफ्तार बाकी लोगों जैसी नहीं थी। उसके कदमों में जल्दबाज़ी कम और विचार ज़्यादा थे।

ट्रेन ने धीरे-धीरे प्लेटफॉर्म छोड़ा। कुछ ही देर में ऊँची-ऊँची इमारतें पीछे धुँधली पड़ने लगीं और उनकी जगह खुले मैदान, छोटे कस्बे और दूर तक फैले खेत दिखाई देने लगे। खिड़की के पास बैठा केतन बाहर देखता रहा। कहीं सरसों के पीले फूल हवा में झूम रहे थे, कहीं ईंट-भट्टों की लंबी चिमनियाँ आसमान से बातें कर रही थीं, तो कहीं बच्चे पटरियों के किनारे हाथ हिलाकर गुजरती ट्रेन का स्वागत कर रहे थे।

हर बदलता दृश्य उसके भीतर भी कुछ बदल रहा था।

जब ट्रेन कानपुर सेंट्रल पहुँची तो शाम ढलने लगी थी। प्लेटफॉर्म पर उतरते ही कुलियों की आवाज़ें, चाय की महक, समोसे तलने की खुशबू और यात्रियों की भीड़ ने उसका स्वागत किया। वर्षों से परिचित यह शोर उसे अजीब-सी शांति दे रहा था। स्टेशन से बाहर निकलते ही उसने शहर की हवा में गहरी साँस ली। उसमें अपनापन था, स्मृतियाँ थीं और एक अनकहा विश्वास भी।

घर पहुँचते ही उसने आराम करने के बजाय अपने कमरे का दरवाज़ा बंद कर लिया। मोबाइल साइलेंट पर रख दिया, सोशल मीडिया से दूरी बना ली और पूरी ऊर्जा अपने ड्रीम प्रोजेक्ट में लगा दी। देखते ही देखते दीवारें चार्ट, नोट्स और योजनाओं से भर गईं। हर कागज़ पर एक नया विचार था और हर विचार के पीछे एक ही उद्देश्य—युवाओं को आत्मनिर्भर बनाना।

तीन दिनों की अथक मेहनत के बाद जब उसने अपनी सारी फाइलें मेज़ पर फैलाकर देखीं, तो उसे महसूस हुआ कि यह अब महज़ एक कल्पना नहीं रही। यह एक ऐसा सपना बन चुका था जिसे मेहनत और धैर्य से वास्तविकता में बदला जा सकता था।

उसने अपने प्रस्तावित बिज़नेस स्कूल के लिए कई नाम लिखे, काटे और फिर नए नाम सोचे। वह चाहता था कि नाम सुनते ही उम्मीद, नई शुरुआत और आत्मविश्वास का एहसास हो। उसके भीतर का संशय अब धीरे-धीरे विश्वास में बदल रहा था।

रात काफी हो चुकी थी। कमरे की खिड़की से बाहर पूरा मोहल्ला सो चुका था, लेकिन केतन की आँखों में नींद नहीं, एक नई सुबह का उजाला था। उसने फाइल बंद की, कुर्सी से पीठ टिकाई और हल्की मुस्कान के साथ सोचा—

“शायद मेरी मंज़िल सिर्फ़ अपनी सफलता नहीं, बल्कि दूसरों के सपनों को उड़ान देना है।”

शाम ढलने से ठीक पहले मोतीझील का रंग बदलने लगा था। दिन की धूप अब नरम हो चुकी थी, जैसे कानपुर ने टाई खोल दी हो। झील के पानी पर हल्की गुलाबी परछाइयाँ तैर रही थीं और हवा में वही पुरानी शरारत घुली थी—चाय, पकौड़े और बेवजह की बकैती की।

पहले से तय कार्यक्रम के हिसाब के अनुसार केतन मोतीझील की बेंच पर पहले से बैठा था। हाथ में कुल्हड़ की चाय, आँखें झील पर टिकी हुईं। आज मन अजीब तरह से हल्का था—ना गुड़गाँव का बोझ, ना भविष्य की खींचतान। बस इंतज़ार था... अपने लोगों का।

“अबे, तुम यहाँ बैठे हो गुरु!”

पीछे से आवाज़ आई।

केतन पलटा तो नीरज खड़ा था—हाथ में मोबाइल, चेहरे पर वही पुरानी ढीठ मुस्कान।

“क्या हो गुरु, कौन से खयालों में रमे हो भाई? इतनी देर से आवाज़ दे रहे हैं!”

“कुछ नहीं यार,” केतन हँसा, “आज छुट्टी है दिमाग की।”

नीरज बेंच पर धप्प से बैठ गया।

“याद है, कितने साल यहीं बैठकर मौज मारी है हम लोगों ने?”

“हाँ, भाई” केतन बोला, “क्या दिन थे वो, न कोई फिकर न कोई टेन्सन, बस गप्पें ही गप्पें”

“याद है एक बार भगवान दास जी ने पकड़ लिया था यहीं, कितनी दंड बैठक हुई थी, अगले तीन दिन बिस्तर से उठ न पाए थे!” (भगवान दास जी केतन के कला के अध्यापक थे पर बच्चों को डराने की उनके अंदर गजब की कला थी)

दोनों एक साथ हँस पड़े।

उसी वक्त सामने से एक जानी-पहचानी आवाज़ आई—

“हाँ भाई, किस बात के ठहाके लग रहे हैं?”

अनुश्री खड़ी थी। सादा सूट, कंधे पर बैग, चेहरे पर वही खुली हुई मुस्कान—ना बनावटी, ना भारी। अनुश्री का व्यक्तित्व सादगी और आकर्षण का सुंदर मेल था। वह भीड़ में भी अपनी सहज उपस्थिति से अलग दिखाई देती थी। उसका कद मध्यम लेकिन संतुलित था, जिससे उसके व्यक्तित्व में एक स्वाभाविक गरिमा झलकती थी। उसकी चाल में आत्मविश्वास और चेहरे पर अपनापन साफ दिखाई देता था।

उसके लंबे, घने और हल्के लहराते बाल कंधों तक बिखरे रहते थे। कभी-कभी हवा की हल्की लहरें उन्हें चेहरे पर ले आतीं, जिन्हें वह सहजता से पीछे कर लेती थी। उसके बाल उसके शांत और सौम्य व्यक्तित्व को और भी आकर्षक बना देते थे।

उसका चेहरा गोलाई लिए हुए था, जिस पर हमेशा एक खुली और निश्चल मुस्कान बनी रहती थी। उसकी बड़ी-बड़ी आँखों में आत्मविश्वास के साथ-साथ अपनापन भी झलकता था। ऐसा लगता था मानो उसकी आँखें बिना शब्दों के भी बहुत कुछ कह देती हों। उसकी भौहें सुघड़ थीं और होंठों पर हल्की मुस्कान उसकी सबसे अलग पहचान बन जाती थी।

“मैडम आ गई,” नीरज खड़ा होकर बोला, “टीचर जी नमस्ते।”

“नमस्ते बेटा जी?” अनुश्री ने भौह उठाई, “कोई शैतानी तो नहीं हो रही यहाँ पर?”

“चलो, बताओ,” अनुश्री बेंच पर बैठते हुए बोली,  
“तुम लोग वाकई बड़े वाले हो, न कभी फोन न कोई हाल चाल, कौन सी दुनिया में जी रहे हो?”

“और अनुश्री तो रोज याद करती थी पर बेचारी के पास नंबर नहीं था हमारा” केतन के शब्द अचानक भावनाओं में बह गए।

“अरे भाई साब, केतन बाबू तो तीर कमान लेके बैठे हैं, सॉरी शक्तिमान” अनुश्री ने कान पकड़ते हुए, अपनी सदाबहार मुस्कान बिखेर दी।

केतन ने उस मुस्कान के आगे सरेन्द्र करने में ही अपनी भलाई समझी। नीरज ने हाथ उठाकर चाय वाले को आवाज़ लगाई,  
“ए भइया! तीन कुल्हड़ चाय भेजो... और पकौड़े भी, आज डाइटिंग की छुट्टी है।”

चाय वाले ने मुस्कुराकर हामी भरी तो अनुश्री खिलखिला उठी।  
“तुम्हारी ये आदत अभी तक नहीं गई? हर बात में खाने का उदाहरण!”

नीरज ने सीना चौड़ा करते हुए कहा,  
“देखो मैडम, इंसान का पहला प्यार खाना होता है। बाकी सब तो बाद में आता है।”

“और दूसरा प्यार?” अनुश्री ने शरारती मुस्कान के साथ पूछा।  
“दूसरा... फ्री की चाय,” नीरज ने बिना एक पल गँवाए जवाब दिया।

तीनों की हँसी झील के किनारे गूँज उठी।

कुछ ही देर में कुल्हड़ों से उठती भाप और गरमागरम पकौड़ों की खुशबू ने माहौल को और भी अपनापन दे दिया। बातचीत का सिलसिला ऐसा चला कि समय जैसे पीछे लौट गया।

स्कूल की घंटियाँ, क्लास बंक करने की नाकाम कोशिशें, भगवान दास जी की सख्ती, बोर्ड परीक्षा का तनाव और रिज़ल्ट वाले दिन की धड़कनें—एक-एक याद जैसे हवा में तैरने लगी। अनुश्री ने झील की ओर देखते हुए हल्की मुस्कान के साथ कहा, “वैसे केतन, तुम सही कहते थे, कभी-कभी यह झील नैनीताल जैसी दिखती है!”

नीरज कहाँ चुप रहने वाला था, तुरंत बीच में टपक पड़ा, “क्या बात हैं अनु, इसको इतना आज तक कोई नहीं समझ पाया, बस तुम ही समझ पाती हो इसे, बहन को नमन।”

केतन ने कुल्हड़ से चाय की आखिरी घूंट ली और मुस्कुराते हुए जवाब दिया, “भाई मेरा मुँह न खुलवाओ, तुमको समझने वाले लोगों की लंबी लिस्ट है, मीरा ..!”

“अरे.. अरे.. भाई, इसी को तो असली विज्ञान कहते हैं!” नीरज ने अपनी कॉलर झाड़ते हुए शेखी बघारी, “हमें समझना बहुत ही आसान है?”

अनुश्री की हँसी छूट गई, “नीरज भाई, बस करो, नहीं तो अभी मीरा भाभी को समझाना मुश्किल हो जाएगा!”

मीरा का नाम सुनते ही तीनों का ठहाका गूँज उठा। आसपास से गुज़रते कुछ लोगों ने मुड़कर देखा, पर उन तीनों को ज़माने की कोई परवाह नहीं थी।

(मीरा नीरज की मंगेतर थी, जो की पूर्व में सहपाठी भी रह चुकी थी)

धीरे-धीरे हँसी का शोर थमा, तो शाम का बैंगनी रंग और गहरा हो गया। झील के पानी पर जगमगाती रंगीन लाइटों का अक्स तैर रहा था। हवा में हल्की सिहरन थी और पेड़ों की पत्तियाँ सरसरा रही थीं—मानो बरसों पुरानी कोई भूली-बिसरी कहानी दोहरा रही हों।

अनुश्री ने झील की तरफ़ देखते हुए एक गहरी साँस भरी, “सच कहूँ... आज तुम दोनों के साथ बैठकर लग रहा है जैसे किसी ने ज़िंदगी का टेप ही पीछे घुमा दिया हो। बरसों बाद दिल इतना हल्का लगा है।”

नीरज ने मुँह ऊपर करके मुस्कुराते हुए कहा, “हाँ यार, आज जिगरियों से मिलकर गजब फीलिंग आ रही है, दिल गार्डन गार्डन हो गया।”

केतन बस चुपचाप मुस्कुराता रहा। वह कभी पानी की चंचल सतह को देखता, तो कभी नीरज की वही पुरानी उतावली शक्ल और अनुश्री के चेहरे की सहज रंगत को। इतने सालों की दूरी के बाद भी सब कुछ कितना जाना-पहचाना लग रहा था—मानो बीच के सारे गुज़रे साल एक पल में मिट गए हों।

केतन के मन में कई बार आया कि वह अपने नए प्रोजेक्ट का ज़िक्र करे। पर उसने उस ख़याल को भीतर ही दबा दिया। कुछ बातें सही

वक्त पर ही अच्छी लगती हैं, और कुछ शामें ऐसी होती हैं जहाँ कल की फ़िक्र से ज़्यादा बीते दिनों का सुकूँ भारी पड़ता है।

उस पल मोतीझील महज़ पानी का कोई तालाब नहीं लग रही थी, बल्कि उनकी बरसों पुरानी यारी का एक ऐसा आईना थी जिसमें उनकी बेफ़िक्र पुरानी यादें और नादान सपने आज भी सुरक्षित रखे थे।

तभी नीरज की जेब में पड़ा फ़ोन बज उठा। उसने स्क्रीन देखी और मुस्कराते हुए बोला, “तुम दोनों बैठो, मैं दो मिनट में यह कॉल निपटाकर आता हूँ। अगर फ़ोन नहीं उठाया तो समझने वाले कुछ और समझ जाएंगे !”

इतना कहकर वह थोड़ी दूर टहलता हुआ बात करने लगा।

अब बेंच पर सिर्फ़ केतन और अनुश्री थे।

झील के ऊपर शाम धीरे-धीरे उतर रही थी। हवा में हल्की ठंडक घुल गई थी। पानी की सतह पर पड़ती रोशनियाँ टूटकर बिखर रही थीं, जैसे किसी ने चुपके से यादों की गठरी खोल दी हो।

दोनों कुछ देर बिना बोले बैठे रहे।

चुप्पी कभी-कभी अजनबियों के बीच बोझ बन जाती है, लेकिन अपनों के बीच वही चुप्पी सुकून देती है।

अनुश्री ने कुल्हड़ में बची चाय की आखिरी बूँद को देखा और मंद-सा मुस्कराई।

“वक्त कितनी तेज़ी से गुज़र जाता है न?”

केतन ने उसकी तरफ़ देखा और एक लंबी साँस ली, “हाँ... और कई बार तो भनक भी नहीं लगती कि कब साथ चलते-चलते लोग अलग-अलग रास्तों पर निकल गए।”

“तुम्हें याद है स्कूल ख़त्म होने के बाद जब सब अपनी-अपनी हांक रहे थे?” अनुश्री की आँखों में पुरानी चमक लौट आई, “कोई कह रहा था मुझे ये करना है मुझे वो करना है, मुझे तुम्हारी फ़िक्र थी।”

“अच्छा,” केतन ने उसकी तरफ़ देखते हुए कहा, “क्यों?”

अनुश्री हल्का-सा हँसी, “उसका जवाब तो नहीं है मेरे पास।”



केतन ने अपनी नज़रें झील के पानी पर टिका दीं, "फिक्र जाहिर भी की जाती है?"

"कई बार कोशिश की पर .. " अनुश्री ने आंखे झील की तरफ घुमा ली । पास ही एक बच्चा अपने पिता का हाथ थामे टहल रहा था। उसने झील में एक कंकड़ उछाल दिया। छपाक की आवाज़ के साथ लहरें उठीं, दूर तक फैलीं और फिर पानी की सतह पर शांत हो गईं।

अनुश्री झील को निहारते हुए बोली, "एक बात पूछूँ?"

"हम्म..."

"एक बार बता तो देते की गुड़गाँव जा रहे हो, इस तरह से चले गए जैसे कोई वास्ता ही नहीं था?"

केतन ने तुरंत कोई जवाब नहीं दिया। उसने कुछ पल सोचा, फिर बोला, "मुझे लगा तुम .. समझ जाओगी।"

"मोबाईल नंबर भी बदल दिया, शहर भी बदल दिया, दोस्त भी बदल देते।" अनु का चेहरा लाल हो गया ।

केतन अनुश्री की आँखों में छुपे दर्द को ढूँढने लगा ।

अनुश्री ने उसकी तरफ़ देखा। उसकी आँखों में शिकवा नहीं था, बस बरसों पुराना एक अधूरा सवाल था, "जानते हो, कई बार दिल करता था कि बस तुम मिल जाओ एक बार पीटूँगी तुम्हें, फिर लगता था, शायद तुम अपनी नई दुनिया में बहुत आगे निकल चुके हो।"

केतन के चेहरे पर एक फीकी मुस्कान आई, "कोई दुनिया नहीं मेरी, "

"फिर?"

"बस... अपनी ही उलझनों से जूझ रहा था। और मुझे हमेशा लगा कि जब तक खुद पाँव पर न खड़ा हो जाऊँ, तुम पर बोझ क्यों बनूँ, तुम खुद भी तो नौकरी की तैयारी कर रही थी।"

अनुश्री ने तुरंत टोकते हुए कहा, "वाह जी वाह, धन्य हैं आप केतन महाराज, मैं पागलों की तरह लोगों से नंबर मांग रही हूँ, क्या गलती हो गई बस एक बार बस बात हो जाए, एक बार तुम्हारे घर भी गई, मम्मी पापा थे नहीं, कितने महीनों तक मंगनी टालती रही.. और तुम्हें तो कोई फर्क ही ..?"

केतन के होठों पर कोई शब्द नहीं आए, वह अनुश्री को वैसे ही निहारता रहा, जैसे विरह से पीड़ित हिरण ।

करीब पाँच मिनट तक दोनों शांत बैठे रहे ।

फिर अनुश्री ने मुस्कराकर बात का रुख बदलने की नाकाम कोशिश की, "वैसे एक बात तुम्हारी आज भी नहीं बदली।"

"क्या?"

"तुम्हारी यही आदत। सीने में पूरी दुनिया का दर्द दबाकर बैठ जाओगे, लेकिन सामने वाले को कानो-कान ख़बर नहीं होने दोगे।"

थोड़ी देर बाद अनुश्री ने पूछा, "अब वापस कब जाना है गुड़गाँव?"

केतन ने धीरे से सिर ना में हिलाया, "शायद अब वापस न जाऊँ।"

अनुश्री की आँखें फैल गई, "मतलब?"

"सोच रहा हूँ अब यहीं रुकूँ। अपने शहर में... अपने लोगों के बीच कुछ अपना शुरू करूँ।"

अनुश्री के चेहरे पर अनायास ही एक मुस्कान फैल गई, "यह तो बहुत अच्छी बात है!"

"इतना अच्छा लग रहा है तुम्हें?"

"हाँ," उसने झील के दूसरे छोर को देखते हुए कहा, "कुछ शहर हमें कभी पूरी तरह जाने ही नहीं देते केतन... हम चाहे उनसे कितना भी भाग लें।"

फिर वह थोड़ा रुकी और बहुत धीमे स्वर में बोली, "और कुछ रिश्ते भी... बस वहीं ठहर जाते हैं, जहाँ हम उन्हें आधा-अधूरा छोड़ आए थे।"

केतन ने मुड़कर उसकी तरफ़ देखा।

दोनों की नज़रें एक-दूसरे से मिलीं और फिर चुपचाप झील की बहती लहरों पर लौट गईं। सामने पानी बह रहा था, ठंडी हवा चल रही थी और ढलती हुई शाम अपने साथ बरसों का गुबार धीरे-धीरे बहाकर ले जा रही थी।

केतन और अनुश्री की स्कूलिंग कौशलपुरी के ही सनातन धर्म विद्यालय में साथ साथ ही हुई थी, स्कूल के दिनों में केतन और अनुश्री की दोस्ती पूरे क्लास में अलग पहचान रखती थी। दोनों एक-दूसरे के बिल्कुल

उलट थे—अनुश्री हर सवाल का जवाब तुरंत देने वाली, खुलकर हँसने-बोलने वाली लड़की थी, जबकि केतन शांत रहने वाला, अपनी ही सोच में खोया रहने वाला लड़का। लेकिन शायद यही फर्क उनकी दोस्ती की सबसे बड़ी खूबसूरती था। लंच ब्रेक में अक्सर दोनों स्कूल की पिछली सीढ़ियों पर बैठकर बातें किया करते थे। अनुश्री पूरे दिन की गॉसिप सुनाती रहती और केतन बस हल्की मुस्कान के साथ उसे सुनता रहता। कई बार तो ऐसा लगता था कि अनुश्री बोलती कम और केतन की खामोशियों को पढ़ती ज्यादा थी।

बारहवीं के दिनों में दोनों की दोस्ती और गहरी हो गई थी। प्रैक्टिकल फाइल्स से लेकर बोर्ड एग्जाम की तैयारी तक, दोनों लगभग हर वक्त साथ दिखाई देते थे। अनुश्री हमेशा केतन को डांटती रहती कि वह ज़रूरत से ज्यादा सोचता है और कम बोलता है। वहीं केतन को उसकी यही आदत पसंद थी कि वह हर मुश्किल माहौल को भी अपनी हँसी से हल्का बना देती थी। जब भी स्कूल में किसी टीचर की डांट पड़ती, अनुश्री बाद में उसकी इतनी मजेदार नकल उतारती कि केतन अपनी हँसी रोक ही नहीं पाता था। उन दोनों के बीच कभी किसी बड़े वादे की ज़रूरत नहीं पड़ी, क्योंकि अपनापन बिना कहे ही महसूस होता था।

धीरे-धीरे स्कूल खत्म होने लगा और भविष्य की बातें बढ़ने लगीं, लेकिन उन दोनों के बीच की सहजता कभी नहीं बदली। छुट्टी के बाद अक्सर दोनों मोतीझील तक पैदल चले जाते थे। रास्ते भर अनुश्री बोलती रहती और केतन बस उसे देखता हुआ मुस्कराता रहता। शायद तभी से अनुश्री समझ गई थी कि केतन अपने दिल की बातें शब्दों में कम और खामोशियों में ज्यादा कहता है। और केतन भी यह जान चुका था कि उसकी जिंदगी की सबसे सुकून भरी आवाज़ वही थी—अनुश्री की बेफिक्र हँसी।

इधर झील के किनारे से नीरज चिल्लाया,

“ओए! तुम दोनों कोई सीरियल वाला सीन शूट कर रहे हो क्या?”

अनुश्री हँस पड़ी, “हाँ, बस एक विलेन की ज़रूरत थी... तुम आ जाओ तो कमी पूरी हो जाएगी!”

केतन भी हँस दिया। पर इस हँसी के पीछे उसके भीतर कुछ हल्का-सा खुल चुका था—जैसे कोई पुराना, जंग लगा दरवाज़ा।

नीरज की वापसी के साथ ही माहौल फिर से हल्का-फुल्का हो गया। तीनों अपनी-अपनी जगहों से उठे और झील के किनारे-किनारे धीरे-धीरे टहलने लगे। बातें फिर से एकदम आम ज़मीनी मुद्दों पर लौट आई—नीरज के नए बिजनेस का हाल-चाल, कानपुर का अंतहीन ट्रैफ़िक, घर के बच्चों की शरारतें और शहर में बनकर तैयार हुई नई मेट्रो।

“वैसे मानना पड़ेगा गुरु,” नीरज ने दूर सड़क पर बनी एलिवेटेड मेट्रो लाइन की तरफ़ देखते हुए कहा, “कानपुर बदल तो रहा है... अब तो अपने यहाँ भी मेट्रो दौड़ने लगी!”

केतन ने दूर जगमगाते मेट्रो स्टेशन को देखा और हल्का-सा मुस्कराया, “हाँ यार... बचपन में तो यही लगता था कि मेट्रो सिर्फ़ दिल्ली-मुंबई जैसे बड़े शहरों में चलती है। अब अपने शहर की सड़कों के ऊपर भी पटरियाँ बिछ गईं!”

कानपुर में मेट्रो का आना सिर्फ़ एक परियोजना नहीं थी, यह शहर के लंबे इंतज़ार का जवाब था। आईआईटी कानपुर से लेकर कानपुर सेंट्रल होते हुए नौबस्ता तक फैली यह लाइन अब लगभग पूरी तरह तैयार खड़ी थी—जैसे शहर की धड़कनों को जोड़ने वाली नई नस।

लेकिन इस मेट्रो तक पहुँचने का सफ़र इतना सीधा भी नहीं था। इस शहर ने इसके लिए सचमुच बहुत पापड़ बेले थे। फाइलें चलीं, घोषणाएँ हुईं, बजट अटका, फिर चुनाव आए, फिर वादे दोहराए गए। कभी लोग हँसते थे—“अरे कानपुर में मेट्रो? यहाँ तो सड़कें ही पूरी नहीं बनतीं।”

लेकिन शायद शहरों की भी अपनी ज़िद होती है। धूल, जाम, टूटी सड़कों और सरकारी इंतज़ारों के बीच कानपुर धीरे-धीरे अपनी जगह माँगता रहा।

कनपुरियों की नज़र से देखें तो कानपुर हमेशा ऐसा ही शहर रहा है—थोड़ा थका हुआ, थोड़ा बिखरा हुआ, पर भीतर से बेहद ज़िद्दी। यह शहर शोर बहुत करता है, मगर हार जल्दी नहीं मानता। यहाँ के लोग शिकायत भी करेंगे, सरकार को कोसेंगे भी, और अगले ही पल उसी सड़क किनारे खड़े होकर कुल्हड़ की चाय पीते हुए उम्मीद भी बाँध लेंगे।

मेट्रो की चमकती पटरी के नीचे सिर्फ़ सीमेंट और लोहे की परतें नहीं हैं, बल्कि उन लाखों लोगों की रोज़ की थकान भी दबी है जो घंटों जाम में

फँसकर घर लौटते थे। उन छात्रों के सपने हैं जो आईआईटी से शहर के दूसरे छोर तक जल्दी पहुँचना चाहते थे। उन बुजुर्गों की उम्मीद है जो बदलते कानपुर को अपनी आँखों से देखना चाहते थे।

अनुश्री ने आसमान की तरफ देखा, जहाँ शाम अब बैंगनी होने लगी थी। "अजीब है न," उसने धीमे से कहा, "वही झील, वही लोग, बस थोड़े लेट... लेकिन आखिरकार अपनी जगह पर लौट ही आते हैं।"

केतन ने उसकी तरफ देखा और बस चुपचाप उसके साथ चलता रहा। नीरज आगे-आगे चल रहा था, "अरे केतन, याद है जब हम यहाँ रात को चोरी-छिपे आते थे?"

"हाँ, कितनी बार पकड़े गए हैं हम," अनुश्री ने तुरंत जोड़ा, "हम नहीं, सिर्फ़ तुम।"

नीरज ने पीछे मुड़कर देखा, "दोनों मिलकर मेरी बेइज़्ज़ती खराब कर रहे हो, नोटिस कर रहा हूँ।"

तीनों हँस पड़े।

झील पर लाइटें जल चुकी थीं और पानी में उनकी परछाइयाँ काँप रही थीं—जैसे कोई अधूरे सवाल हों। कुछ देर बाद चाय का आखिरी कुल्हड़ भी खाली हो गया।

नीरज ने घड़ी देखी, "चलो भइया, काम पैंतीस हो गया, अब निकलते हैं। कल सुबह फिर वही भागमभाग चालू हो जाएगी। अबे तुम दोनों किसी दिन घर आ जाओ।"

अनुश्री ने मुस्कुराकर सिर हिलाया। केतन बस चुपचाप सुनता रहा और उनके साथ चलता रहा।

गेट के पास आकर तीनों रुके। वही जगह—जहाँ हर मुलाकात खत्म होती है।

नीरज ने हाथ बढ़ाया, "जल्दी मिलते हैं भाई।" और फिर वह चला गया।

अनुश्री ने बैग कंधे पर ठीक किया, "अच्छा लगा आज।"

"मुझे भी," केतन ने कहा। फिर उसने सीधे पूछा, "हाँ... सुना है मंगनी तय हो गई है तुम्हारी?"

अनुश्री ने कुछ कहना चाहा, फिर रुक गई, "खयाल रखना।"

“तुम भी,” केतन ने कहा।

वह मुड़ी और दो कदम चली। फिर बिना पीछे देखे बोली, “कुछ बातें अगर अधूरी रह जाएँ... तो शायद ज़िंदा रहती हैं।”

केतन ने कोई जवाब नहीं दिया।

वह चला, और वह भी। दो अलग दिशाओं में, पर एक ही शहर में।

मोतीझील फिर अकेली रह गई। उसकी लहरें वैसे ही चलती रहीं ।

## सपनों की देहरी पर

केतन अब ज़िंदगी के उस मोड़ पर आ पहुँचा था जहाँ सपने केवल कल्पना नहीं रहते, बल्कि ज़िम्मेदारी का रूप ले लेते हैं। शास्त्री नगर शाखा से बैंक ऋण की सभी औपचारिकताएँ पूरी हो चुकी थीं। पचास लाख रुपये उसके खाते में आ चुके थे, पर उस रकम को देखकर उसे खुशी से ज़्यादा उत्तरदायित्व का एहसास हुआ।

स्वरूप नगर स्थित रतन फील्ड्स में तीन बड़े हॉल किराये पर तय हो चुके थे। वे अभी खाली थे, पर केतन की कल्पना में वहाँ पहले से ही जीवन बस चुका था। उसे लगता था मानो मशीनों की आवाज़ें गूँज रही हों, छात्र उत्साह से सीख रहे हों और हर कोना नई संभावनाओं से भर गया हो।

फर्नीचर का ऑर्डर दिया जा चुका था। कुर्सियाँ, मेजें, अलमारियाँ और व्हाइटबोर्ड आदि सब जल्द ही पहुँचने लगे थे। फैब्रिकेशन लैब की मशीनें बुक हो चुकी थीं और कंप्यूटरों की खरीद भी अंतिम चरण में थी। हर भुगतान के साथ उसके भीतर उत्साह बढ़ता था, लेकिन उसी के साथ एक अनजाना डर भी जन्म लेता था। अब वापसी का कोई रास्ता नहीं बचा था।

इन्हीं व्यस्त दिनों में उसने समय निकालकर अनुश्री और नीरज से मुलाकात की।

तीनों एक शांत कैफ़े के कोने में बैठे थे। कुछ देर तक सामान्य बातें होती रहीं, फिर केतन ने गहरी साँस लेकर कहा,

“मैं एक ऐसा इंस्टिट्यूट बनाना चाहता हूँ जहाँ बच्चे केवल डिग्री लेकर न निकलें, बल्कि अपने पैरों पर खड़े होने का हुनर सीखें। जहाँ उन्हें यह विश्वास मिले कि मेहनत और सही मार्गदर्शन से उनका भविष्य बदल सकता है।”

अनुश्री बिना कुछ बोले उसकी ओर देखती रही। उसकी आँखों में उत्सुकता नहीं, विश्वास था।

“क्या तुमने सचमुच यह तय कर लिया है?” उसने धीरे से पूछा।

केतन हल्का मुस्कराया, पर मुस्कान के पीछे छिपी घबराहट साफ़ दिखाई दे रही थी।

“सच कहूँ तो डर लग रहा है। कभी सोचता हूँ कि अगर असफल हो गया तो? इतने लोगों की उम्मीदें, इतना पैसा, इतनी मेहनत... सब व्यर्थ हो जाएगा।”

अनुश्री ने कुछ पल तक उसकी ओर देखा। फिर बहुत शांत स्वर में बोली,

“केतन, तुम्हें पता है तुम्हारी सबसे बड़ी कमजोरी क्या है?”

“क्या?”

“तुम अपनी क्षमताओं को हमेशा कम आँकते हो। तुम दूसरों में संभावना खोज लेते हो, लेकिन अपने भीतर नहीं। जबकि सच यह है कि तुम जिन सपनों को देखने का साहस करते हो, बहुत से लोग उनके बारे में सोचने से भी डरते हैं।”

केतन चुप रहा।

अनुश्री ने आगे कहा,

“जिस इंसान को दूसरों की उम्मीदें टूटने का डर हो, वह उन्हें तोड़ता नहीं, निभाता है। मुझे तुम्हारे इरादों पर भरोसा है। और जहाँ भरोसा होता है, वहाँ रास्ते अपने आप बनते जाते हैं।”

उसके शब्द किसी सलाह की तरह नहीं, बल्कि मन पर रखे आश्वस्त हाथ की तरह लगे। केतन के भीतर जमा संदेह जैसे धीरे-धीरे पिघलने लगा।

थोड़ी देर बाद उसने अपना पूरा खाका नीरज के सामने रख दिया—हॉल, मशीनें, फैकल्टी, स्किल-आधारित कोर्स, इंडस्ट्री ट्रेनिंग और भविष्य की योजनाएँ।

नीरज ने पूरी बात सुनकर बिना देर किए कहा,

“भाई, यह काम होना ही चाहिए। जहाँ भी ज़रूरत पड़े, मैं साथ हूँ। सप्लायर से बात करनी हो, सेटअप संभालना हो या प्रचार करना हो, तू बस एक बार बोलना।”

शहर जल्द ही एक नए नाम से परिचित होने वाला था—



## **Ketan School of Learning & Skills (KSLS) I**

केतन का सपना अब धीरे-धीरे वास्तविक रूप लेने लगा था। अपने नाम को संस्थान के साथ जुड़ा देखकर उसे गर्व के साथ-साथ एक बड़ी जिम्मेदारी का एहसास भी हुआ। उसे समझ में आ गया था कि यह संस्थान केवल उसकी उपलब्धि नहीं, बल्कि यहाँ आने वाले विद्यार्थियों के भविष्य से जुड़ा एक विश्वास है।

संस्थान की शुरुआत से पहले कई आशंकाएँ उसके मन में थीं।

अगली सुबह से अस्थायी कार्यालय में नई हलचल शुरू हो गई। केतन ने योग्य फैकल्टी की तलाश शुरू की और धीरे-धीरे अलग-अलग क्षेत्रों के अनुभवी लोग उसके साथ जुड़ते गए। मैकेनिकल इंजीनियरिंग, कंप्यूटर, इलेक्ट्रिकल, कम्युनिकेशन, सॉफ्ट स्क्रिप्स, वर्कशॉप और बेसिक मैनेजमेंट जैसे क्षेत्रों के विशेषज्ञों की एक सात सदस्यीय टीम तैयार हो गई। सभी की पृष्ठभूमि अलग थी, लेकिन उनका उद्देश्य एक ही था— विद्यार्थियों को केवल किताबी ज्ञान नहीं, बल्कि ऐसा कौशल देना जो उनके वास्तविक जीवन और भविष्य के काम आए।

इसी बीच संस्थान की प्रवेश प्रक्रिया ने उम्मीद से कहीं तेज गति पकड़ ली। शुरुआत में विद्यार्थियों की संख्या कम थी, लेकिन कुछ ही दिनों में प्रवेश लेने वालों की संख्या तेजी से बढ़ने लगी। देखते ही देखते अस्सी विद्यार्थी संस्थान से जुड़ गए।

स्वरूप नगर कानपुर का वह इलाका है जहाँ शहर की रफ्तार थोड़ी सलीकेदार हो जाती है। चौड़ी सड़कें, दोनों तरफ़ कतार में खड़े पुराने पेड़, और उनके बीच से गुजरती गाड़ियों की धीमी आवाज़ — सब मिलकर इसे बाकी कानपुर से थोड़ा अलग एहसास देते हैं। वर्षों से स्वरूप नगर को कानपुर के सबसे पॉश इलाकों में नंबर एक की पहचान मिलती रही है। बड़े कारोबारियों, डॉक्टरों, वकीलों और पुराने रईस परिवारों के घरों ने इस इलाके को एक अलग प्रतिष्ठा दी है। यहाँ की साफ-सुथरी गलियाँ, व्यवस्थित मकान और शांत वातावरण ऐसा एहसास कराते हैं जैसे शहर की अफरा-तफरी से थोड़ा हटकर कोई सलीकेदार दुनिया बसाई गई हो। स्वरूप नगर की खास बात यह है कि यहाँ आधुनिकता और पुराने कानपुर का अपनापन दोनों साथ चलते हैं। बड़े कोचिंग इंस्टिट्यूट, कैफे और चमचमाती इमारतों के बीच भी

मोहल्ले वाली आत्मीयता बची रहती है। शाम होते-होते रतन फील्ड्स के आसपास की सड़के पीली रोशनी में नहा जाती हैं और पूरा इलाका ऐसा लगता है जैसे शहर की भागदौड़ के बीच किसी ने थोड़ी-सी शांति बचाकर रख छोड़ी हो। यहाँ रहने वाले लोग अकसर मज़ाक में कहते हैं — “कानपुर के फेफड़े अगर नवीन मार्केट है, तो उसकी ठहरी हुई साँस स्वरूप नगर में मिलती है।”

अंदर हॉल के एक कोने में पूजा की पूरी तैयारी थी। लाल कपड़ा बिछा था, फूलों की मालाएँ सजी थीं, दीपक की लौ स्थिर जल रही थी। माँ ने आरती की थाली संभाली और पापा ने सबको पास आने का इशारा किया। धीरे-धीरे पूरा हॉल भर गया। गोविंद जी, नीरज, अनुश्री, ऋषभ और वीरू, सबसे आगे आकर खड़े हो गए। रिश्तेदार, मोतीझील वाला ग्रुप, आस-पड़ोस के लोग, KSLS के सभी टीचर और सामने की कतार में बैठे छात्र—सब हाथ जोड़कर खड़े थे।

मंत्रों की आवाज़ गूँजने लगी। अगरबत्ती की खुशबू पूरे हॉल में फैल गई। केतन माँ-पापा के पास खड़ा था।

माँ ने आरती घुमाते हुए धीमे स्वर में कहा,  
“ईश्वर, इन बच्चों को सही राह दिखावे।”

टीचर्स गंभीरता से सिर झुकाए खड़े थे। कई छात्रों ने पहली बार ऐसी सामूहिक पूजा देखी थी। कुछ की आँखें बंद थीं, कुछ चुपचाप दीये की लौ को देख रहे थे, जैसे अपने भीतर किसी भरोसे को जलते हुए महसूस कर रहे हों।

आरती के बाद पापा ने सबकी ओर देखते हुए कहा,  
“भाई सब लोग मेहनत से आगे बढ़ो, सब अच्छा होएगा”

केतन ने चरण स्पर्श किए। माँ ने उसके माथे पर तिलक लगाया और सिर पर हाथ रखा।

पूजा खत्म होते ही माहौल में हल्की-सी चहल-पहल लौट आई, लेकिन वह शांति अब भी बनी हुई थी। इसके बाद गेट पर रिबन लगाया गया। सभी लोग बाहर आ गए। छात्रों की कतारें बन गईं। कैमरे उठ गए।

केतन के हाथ में कैची दी गई। उसने एक बार पीछे मुड़कर देखा—माँ-पापा, दोस्त, टीचर, रिश्तेदार और सामने खड़े वो छात्र, जिनके लिए यह

जगह एक नई शुरुआत थी। उसने गहरी साँस ली और रिबन काट दिया। तालियों की आवाज़ एक साथ उठी, जैसे सबने मिलकर किसी सपने को स्वीकार कर लिया हो।

हॉल में सब अपनी जगह बैठ चुके थे। हल्की रोशनी, सामने सजे फूल और कुर्सियों पर बैठे छात्र, टीचर, रिश्तेदार और दोस्त—सबकी निगाहें स्टेज पर थीं। केतन माइक के सामने खड़ा था। उसने एक पल के लिए साँस ली, जैसे अपने भीतर बिखरे शब्दों को समेट रहा हो। सभागार में छाए सन्नाटे को चीरती हुई उसकी पहली दस्तक गूँजी—

“नमस्ते...”

शुरुआत बेहद सीधी थी, लेकिन इस एक शब्द ने पूरे हॉल की धड़कनों को जैसे अपनी लय में थाम लिया। केतन का यह रूप वहाँ बैठे लोगों के लिए नया था। उसकी आवाज़ में कोई बनावट नहीं थी, न ही कोई अलंकृत भाषण की बनावटी गर्जना—बस एक बहता हुआ ठहराव था, जिसमें सच की खनक थी।

“आज यहाँ खड़ा होना मेरे लिए आसान नहीं है,” उसने पोलियम को हल्के से थामते हुए अपनी नज़रें सामने बिछी कतारों पर फैलाई, “यह सब एक सपने के सच होने जैसा लगता है...”

उसकी दृष्टि सामने बैठे नौजवानों की आँखों में टिक गई—वे आँखें जो उम्मीद और अनगिनत आशंकाओं से भरी थीं।

“मैं एक ऐसे शहर से आता हूँ जहाँ सपने अक्सर जल्दी बड़े नहीं हो पाते,” केतन की आवाज़ थोड़ी गहरी हुई, “जहाँ पढ़ाई पूरी होने के बाद सबसे बड़ा सवाल यही होता है—अब आगे क्या?”

उसने एक पल का विराम लिया। सन्नाटा और गहरा हो गया।

“मैंने भी वही सवाल खुद से पूछा है... कई बार। और सच कहूँ, तो कई बार मेरे पास उसका कोई जवाब नहीं था।”

पीछे की कतारों में बैठी अनुश्री उसे टकटकी बाँधे देख रही थी। उसकी आँखें चमक रही थीं। वह केतन की उस घबराहट को बहुत अच्छी तरह पहचान रही थी, जो बाहरी दुनिया को नज़र नहीं आ रही थी।

केतन ने अपनी बात का धागा आगे बढ़ाया।

“KSLS किसी एक दिन का लिया गया फैसला नहीं है। यह उन तमाम रातों और अनगिनत दिनों का नतीजा है, जब लगा था कि शायद अब कुछ मुमकिन नहीं होगा... लेकिन फिर भी, हमने अपनी कोशिशों को रुकने नहीं दिया।”

यहाँ आकर उसकी आवाज़ हल्की-सी भारी हो गई, जैसे पुराने संघर्षों का बोझ एक पल के लिए उसकी सांसों पर आ ठहरा हो।

“यह जगह उन बच्चों के लिए है, जो मेहनत करना जानते हैं, लेकिन जिन्हें सही दिशा नहीं मिल सकी। यहाँ हम सिर्फ़ किताबें पढ़ाकर सिलेबस खत्म नहीं करेंगे। यहाँ हम सवाल करना सिखाएँगे, सोच की रीढ़ को मज़बूत करेंगे और हर उस दिल में यह भरोसा जगाएँगे कि कोई भी हुनर कभी छोटा नहीं होता।”

अनुश्री ने अनजाने में ही अपने हाथों की उँगलियाँ आपस में भींच लीं। उसकी आँखें कोर तक भर आईं, लेकिन होठों पर एक गर्वभरी मुस्कान तैर गई। वह जानती थी कि केतन ये बातें किसी लिखे हुए कागज़ से नहीं पढ़ रहा था—वह इन सब शब्दों को खुद जी चुका था।

केतन की नज़रें अब बाईं ओर बैठी शिक्षकों की कतार पर टिक गईं।

“मैं अपने शिक्षकों से एक ही बात कहना चाहता हूँ,” उसने अपनी आवाज़ में एक खास गंभीरता लाते हुए कहा, “आप यहाँ सिर्फ़ एक नौकरी करने नहीं आए हैं। आप यहाँ भविष्य गढ़ने आए हैं। जो बच्चा आज आपकी क्लास में बैठेगा, हो सकता है कल वह दुनिया का रुख बदल दे।”

टीचर्स की कतार में एक हल्की-सी हलचल हुई। कई चेहरों पर एक अनजाने उत्तरदायित्व की गंभीरता और गर्व का भाव तैर गया।

केतन थोड़ा आगे की ओर झुका, जैसे वह सामने बैठे छात्रों के ओर करीब जाना चाहता हो।

“और मेरे छात्रों से...” उसकी आवाज़ में पिता जैसी ममता और एक दोस्त जैसा भरोसा था, “आपसे यह वादा है कि इस छत के नीचे आपकी आवाज़ हमेशा सुनी जाएगी। आपसे कभी यह नहीं पूछा जाएगा कि आप कहाँ से आए हैं, बल्कि यहाँ यह देखा जाएगा कि आप कहाँ तक जाना चाहते हैं।”

अनुश्री को लगा जैसे केतन की यह बात सीधे उसके सीने में उतर गई हो। वह भले ही केतन को देख रही थी, लेकिन उसकी आँखों के सामने अपने ही उन तमाम सपनों की झलकियाँ कौंध गईं जो कभी गुमनामी के डर से सहम गए थे। एक अजीब-सा गर्व उसके पूरे वजूद में भर गया— इतना गहरा गर्व, जिसे दुनिया का कोई शब्द बयान नहीं कर सकता था। केतन ने अपनी निगाहें मोड़कर मंच के कोने में बैठे अपने माता-पिता की ओर देखा।

“मेरे माता-पिता ने मुझे कभी बड़े सपने देखने से नहीं रोका,” उसकी आवाज़ में कृतज्ञता का समंदर उमड़ आया, “और जब मैं खुद अपने ही सपनों से डर गया, तब भी इन्होंने मेरा हाथ थामे रखा।”

माँ की आँखें आंसुओं से छलक उठीं, उन्होंने चुपचाप अपनी साड़ी के पल्लू से उन्हें पोंछा। पापा ने बिना कुछ कहे, धीमी-सी स्वीकृति में अपना सिर झुका लिया—उनकी आँखों की नमी ही उनका सबसे बड़ा जवाब थी।

“और मेरे दोस्त...” केतन मुस्कुराया। उस मुस्कान में पुराने दिनों की बेफिक्री की महक थी। “आप लोगों ने तब भी मुझ पर यकीन किया, जब मेरे पास सिर्फ़ हवा में तैरता एक आइडिया था, ज़मीन का एक टुकड़ा तक नहीं।”

दर्शकों में बैठे नीरज के चेहरे पर एक हल्की-सी हँसी छूट गई। ऋषभ, जो अब तक ढीला बैठा था, उसकी पीठ सीधी हो गई। और वीरू ने, जो लगातार कैमरे के व्यूफाइंडर में आँखें टिकाए हुए था, धीरे से अपना कैमरा नीचे कर लिया।

तभी केतन ने एक पल के लिए अपनी दृष्टि घुमाई और उसकी नज़रें अनुश्री पर जाकर ठहर गईं।

कुछ सेकंड के लिए हवा थम गई। दोनों की नज़रें मिलीं। केतन ने एक शब्द भी नहीं कहा, लेकिन अनुश्री के भीतर जैसे सारा ब्रह्मांड जगमगा उठा। उसकी आँखें चमक उठीं। उसे लगा कि भले ही यह पूरा भाषण दुनिया के लिए हो, लेकिन इसका हर एक शब्द, इसका हर एक स्पंदन सिर्फ़ और सिर्फ़ उसी के लिए था।

केतन ने गहरी सांस ली और पूरे सभागार को समेटते हुए अपने अंतिम शब्द कहे—

“आज मैं आप सब से एक बात कहना चाहता हूँ,” केतन की आवाज़ अब किसी चट्टान की तरह बुलंद थी, “KSLS ईट-सीमेंट की बनी महज़ एक इमारत नहीं है। यह एक भरोसा है। और अगर आप इस भरोसे को निभाने में मेरे साथ खड़े रहेंगे, तो मैं वादा करता हूँ कि यह जगह कभी खाली नहीं जाएगी—न इंसानों से, और न उम्मीदों से।”

पूरे हॉल में एक गहरी खामोशी छा गई।

“अगर आज यहाँ से जाते हुए एक भी बच्चा यह सोचकर घर लौटे कि ‘हाँ, मैं भी कुछ कर सकता हूँ’... तो मैं समझूँगा कि मेरी मेहनत सफल हो गई।”

उसने अपनी बात खत्म की और माइक को धीरे से पोटियम पर रख दिया।

कुछ सेकंड तक सन्नाटा रहा, फिर तालियाँ गूँज उठीं। देर तक।

अनुश्री अपनी जगह पर बैठी थी, आँखें नम थीं, लेकिन मुस्कान गहरी। वह तालियाँ नहीं बजा रही थी। वह बस केतन को देख रही थी। उसे लग रहा था कि आज जो खुशी वह महसूस कर रही है, वह केतन से भी ज़्यादा उसकी अपनी है—क्योंकि उसने इस सपने को जन्म लेते, लड़खड़ाते और आज खड़ा होते देखा था।

खाना खत्म होते-होते सब लोग लॉन में कुर्सियाँ खींचकर गोल घेरा बनाकर बैठ गए। हवा में रातरानी की हल्की खुशबू घुल रही थी और प्लेटों से ज़्यादा आवाज़ अब ठहाकों की आने लगी थी।

वीरू ने ऋषभ की प्लेट की तरफ देखते हुए कहा,

“भाई, आराम से खाओ? रसगुल्ले कहीं भागे नहीं जा रहे हैं !”

ऋषभ ने बिना शर्माए जवाब दिया,

“हमको समझ नहीं आता काहे बात-बात पे तुम्हारी पीपरी बजने लगती है, अबे तुम्हारी काहे जल रही है, पेट मेरा, मुहँ मेरा, भूख मेरी।”

नीरज ने तुरंत फिरकी ली,

“नहीं नहीं भाई तुम खाओ, हमें पता है एयर फोर्स की डाइट, तुम्हारे लिए ही सब बनवाया है, हम लोग तो सिर्फ देखने आए हैं।”

सब ज़ोर से हँस पड़े।

अनुश्री ने नीरज और केतन को एक साथ बैठे देखा और आँखों में शरारत आ गई।

“अरे वाह... तुम दोनों मियां बीवी से कम नहीं हो न।”

नीरज चौंका।

“क्या हुआ, तुम्हें बुरा क्यों लग रहा है?”

“मुझे क्यों बुरा लगेगा” अनु बोली,

“अच्छा, तो फिर केतन बेटा तू शादी कर ले, किसी को तो तेरे लिए बुरा लगे!”

“तुम भी बौड़म हो एकदम! ऐसे कैसे शादी कर लेगा, पहले लड़की को ट्रेनिंग देनी पड़ेगी। नहीं तो बेचारी पूछेगी—‘क्या हुआ?’ और जवाब मिलेगा—‘कुछ नहीं।’ फिर पूछेगी—‘चाय लो?’ जवाब—‘हूँ।’ पाँच साल उसे इशारों की भाषा सीखनी पड़ जाएगी।”

इतना सुनते ही पूरा लॉन हँसी से गूँज उठा।

उस शाम की सबसे खूबसूरत बात यही थी कि किसी को जल्दी घर जाने की नहीं थी।

दोस्त एक-दूसरे की खिंचाई कर रहे थे, पुराने किस्से बीच-बीच में निकल आते थे, कोई किसी की फोटो खींचकर चिढ़ाता, तो कोई प्लेट से मिठाई गायब कर देता।

और केतन...

वह बस सबको देख रहा था।

लॉन में ठहाके गूँजते रहे,

और KSLS की पहली शाम

हँसी के नाम हो गई।





## भाग - 2



## कनपुरिया करोना

**दो साल बीतते-बीतते** KSLS सिर्फ एक इंस्टिट्यूट नहीं रहा, वह शहर की पहचान बन चुका था। नीरज और अनुश्री भी इंस्टिट्यूट का हिस्सा बन चुके थे। जिस जगह कभी अधूरे फर्नीचर और डिब्बों में बंद कंप्यूटर पड़े थे, वहाँ अब सुबह-शाम छात्रों की आवाज़ें गूँजती थीं। नीरज और अनुश्री भी इंस्टिट्यूट के साथ जुड़ चुके थे। रतन फील्ड्स की उस पहली इमारत ने सैकड़ों बच्चों को दिशा दी थी, और उसी भरोसे के सहारे KSLS ने किदवई नगर और काकादेव में अपनी दो नई शाखाएँ खोल लीं। किदवई नगर जहाँ कानपुर दक्षिण का सबसे घनी आबादी वाला और हमेशा जागता रहने वाला इलाका माना जाता है, वहीं काकादेव का नाम सुनते ही पूरे शहर के दिमाग में सबसे पहले “कोचिंग मंडी” की तस्वीर उभरती है। KSLS की हर ब्रांच में वही सोच थी—हुनर को इज्जत और मेहनत को रास्ता। बैनरों पर अब सिर्फ नाम नहीं लिखा होता था, बल्कि छात्रों की कहानियाँ छपी होती थीं, जो इस जगह से निकलकर कहीं नौकरी पा चुके थे, कहीं अपना काम शुरू कर चुके थे।

नवंबर 2019 की ठंड जब हल्की-हल्की रंगत दिखाने लगी थी, तब मोतीझील पर एक नया ताज़ा मुद्दा छा चुका था—‘चीन वाला वायरस’। सुबह पार्क में टहलने वाले बड़े-बुजुर्ग पेट अंदर करने की कसरत कम और इस बीमारी पर अपनी डॉक्टरी झाड़ने में ज्यादा व्यस्त थे।

“अरे गुरु, सुना है वहाँ रोड पर चलते-चलते आदमी लुढ़क जा रहा है!” अग्रवाल जी गंभीर स्वर में बोले।

“अबे हटो! चीन में आबादी इतनी भरी पड़ी है, एकाध कहीं चक्कर खा के गिरा होगा और कोई रील बना के डाल दीस!”

किसी का वाक्य पूरा भी नहीं हो पाता था कि अगला ज्ञानी अपनी मुहर लगा देता—पूरे आत्मविश्वास के साथ।

मोतीझील के बाहर वाली बनारसी की चाय टपरी तो जैसे ‘अंतर्राष्ट्रीय विषाणु अनुसंधान केंद्र’ बन चुकी थी। कुल्हड़ से उड़ती भाप, नमकीन-

मूँगफली की फाँक और मोबाइल स्क्रीन पर तैरते आधी-अधूरी ख़बरों के वीडियो।

“ये देखो भाई, साक्षात लाइव वीडियो आया है!” किशोर अंकल ने मोबाइल की स्क्रीन दिखाते हुए कहा।

“अबे तेरी, ये तो साला सड़क पे बिछे पड़े है लोग, लंका लग गई बे!” भोला भाई ने चौंकते हुए कहा।

“तुम एकदम हौलट हो, इतनी देर से समझा रहे थे, अब पता चला!”

तभी पीछे से कोई कनपुरिया खलीफ़ा कुल्हड़ सरकाते हुए ठहाका मारता—

“अरे भइया! कनपुरियों का इम्यून सिस्टम हल्के में ले रहे हो क्या? बचपन से गंगाजल पिए हैं और हफ़्ते में चार दिन परमट में माथा टेके हैं। कोई आयरस-वायरस अपने सामने नहीं टिकने वाला!”

और पूरी टपरी पर एक ज़ोरदार ठहाका गूँज उठता—मानो उस अनजान बीमारी की ऐसी-तैसी कर दी गई हो।

परमट यानी अपने बाबा श्री आनंदेश्वर महादेव का मंदिर! कानपुर वालों के लिए यह सिर्फ़ मंदिर नहीं, बल्कि शहर का दिल है। गंगा किनारे बसे इस पावन धाम के लिए बुजुर्ग अक्सर कहते हैं—“ज़माना बदल गया, पर परमट बाबा का दरबार वैसा ही है।”

ख़ैर, उस ‘चीन वाले वायरस’ की बातें अब पान की दुकानों से लेकर नौघड़े के कपड़ा बाज़ार तक मिर्च-मसाला लगाकर बेची जा रही थीं।

“अबे चीन वाले कॉकरोच से लेकर चमगादड़ तक सब चबा जाते हैं, तो बीमारी नहीं निकलेगी तो क्या रसगुल्ला निकलेगा!” भोला भाई ने तफरी ली।

“और अपने यहाँ देखो! सुबह-शाम कमल छाप गुटखा रगड़ते हैं, फेफड़ों में ऐसा फ़िल्टर लगा है कि वायरस घुसेगा तो अंदर ही दम तोड़ देगा!”

अगर कोई सीधा-साधा बंदा थोड़ा समझाना भी चाहता, तो भीड़ तुरंत उसे लपेट लेती—“तुमसे बड़ा घोंचू नहीं देखा हमने, ज़्यादा वैज्ञानिक न बनो! यहाँ ठंड में आधा शहर हर साल बीमार होता है, इसमे नया क्या है?”

और बस, दो मिनट में मुद्दा बदलकर क्रिकेट, चुनाव या गुप्ता जी के लड़के की शादी पर पहुँच जाता।

केतन भी यह सब आते-जाते सुनता रहता। उसके लिए ये सब बस टाइमपास गप्पें थीं—किसी दूर देश का झमेला।

“हर साल ठंड में कोई न कोई नया ड्रामा आ ही जाता है,” केतन ने एक दिन टपरी चाय पीते हुए नीरज से कहा, “अभी इन फालतू अफ़वाहों पर दिमाग़ मत खपाओ, ध्यान KSLS के नए एडमिशन पर लगाओ।”

नीरज ने भी बेफ़िक़्री से कंधे उचकाए, “हम तो पहले ही कह रहे थे, तुम्ही हो सोच-सोच के दुबले हुए जा रहे हो!”

मोतीझील की बेंचों पर शाम को महफ़िल जमाने वालों के पास भी अपनी-अपनी धाँसू थोरियाँ थीं।

“लिख के ले लो, दो महीने में सब हवा हो जाएगा!” कनोजिया जी बोले।

“अरे यह सब टीआरपी का चक्कर है कनोजिया, मीडिया वाले डरा रहे हैं।” भोला भाई ने अपनी झोंकी।

“बुद्धि जब बैलों वाली हो तो कम बोलना चाहिए, अबे चीन सरकार सब छुपा रही है, इसीलिए इतना नाटक चल रहा है।” ठाकुर साब ने सबको चुप कर दिया।

कोई कितना भी गंभीर ज्ञान बाँटने की कोशिश करता, कानपुर का माहौल उस गंभीरता की धजियाँ उड़ा देता। शहर का मिज़ाज ही ऐसा था—बड़ी से बड़ी आफ़त को भी चुटकुलों में उड़ा देना।

उस वक्त मोतीझील पर बैठकर चाय की चुस्कियाँ लेते किसी भी बंदे को अंदाज़ा नहीं था कि यह बेफ़िक़्र हँसी और ठहाके कुछ ही महीनों में गुज़रे ज़माने की याद बन जाएँगे। तब तक तो मोतीझील पर वही गाड़ियों का शोर था, गोलगप्पे वालों की वही पुरानी ठेलेबाज़ी थी, और लोग बेझिझक एक ही ग्लास से पानी पीकर अपनी यारी निभा रहे थे।

बीमारी तब तक सिर्फ़ “चीन में चल रही कोई बात” थी—

और कानपुर वालों के लिए दुनिया की हर बड़ी समस्या तब तक छोटी ही रहती है,

जब तक वह सीधे उनके रोज़मर्रा की ज़िंदगी के दरवाज़े पर दस्तक न दे दे।

दिसंबर 2019 के खत्म होते-होते दुनिया के कुछ हिस्सों में असहज सवाल उठने लगे। यह सिर्फ बुखार नहीं था, सिर्फ खाँसी भी नहीं। इसमें एक अनदेखा फैलाव था—ऐसा जो इंसान को इंसान से दूर करता जा रहा था। जनवरी आते-आते यह साफ़ हो गया कि इस बीमारी के लिए सरहदों के कोई मायने नहीं। एशिया से यूरोप, यूरोप से अमेरिका—हर जगह इसकी अलग कहानी थी, लेकिन लक्षणों की भाषा एक जैसी। कहीं इसे “ज़्यादा बढ़ा-चढ़ाकर बताया जा रहा है” कहा गया, कहीं “मौसमी असर” मानकर टाल दिया गया। इस इनकार ने बीमारी को समय दिया—और समय उसका सबसे बड़ा हथियार बन गया।

कुछ देशों में अस्पतालों की गलियाँ भरने लगीं। डॉक्टर थकने लगे, नर्स कम पड़ने लगीं। दुनिया ने पहली बार देखा कि आधुनिक स्वास्थ्य व्यवस्था भी असहाय हो सकती है। न्यूज़ चैनलों पर आँकड़े चलने लगे, लेकिन आँकड़ों के पीछे डर था—वो डर, जो हर देश में अलग भाषा बोल रहा था। कहीं बाज़ार बंद होने लगे, कहीं लोग सड़कों पर उतर आए। यह बीमारी अब केवल स्वास्थ्य का मुद्दा नहीं रही थी, यह समाज, अर्थव्यवस्था और रिश्तों को भी छूने लगी थी।

जनवरी 2020 के आखिरी हफ्ते और फरवरी के शुरुआती दिनों में देश के अलग-अलग हिस्सों से मामले सामने आने लगे। संख्या कम थी, लेकिन पैटर्न साफ़ था। ज़्यादातर लोग यात्रा करके आए थे—कोई पढ़ाई से लौटा था, कोई काम से, कोई छुट्टियाँ बिताकर। सरकारें तैयारी कर रही थीं, लेकिन जनता के मन में अभी पूरा डर नहीं उतरा था।

कानपुर में बीमारी का पहला एहसास किसी धमाके की तरह नहीं आया। वह धीरे-धीरे उतरा—ठंडी हवा की तरह, जो पहले बस गाल छूती है और फिर धीरे-धीरे हड्डियों तक पहुँच जाती है। शुरू में यह सिर्फ़ एक ख़बर भर थी। ख़बरों के अख़बार के एक कोने में सिमटी छोटी-सी लाइन या टीवी स्क्रीन के नीचे तेज़ी से दौड़ती हुई पट्टी।

“शहर में पहला संदिग्ध मामला।”

मोतीझील की सुबह अब भी लगभग वैसी ही लगती थी, लेकिन हवा में कुछ अनमना-सा घुल चुका था। मॉर्निंग वॉक वाले बुजुर्ग अब पहले की तरह कंधा छीलकर नहीं चलते थे। मज़ाक और बकैती अब भी जारी थी, पर उस हँसी के बीच एक अजीब-सी अनजानी झिझक आ घुसी थी।

अगर कोई बेफ़िक्री में खाँस भी देता, तो साथ चल रहे दो लोग बिन कहे दो कदम पीछे खिसक जाते। मुन्ना की टपरी पर कुल्हड़ अब भी गरम चाय से भर रहे थे, पर एक ही ग्लास से पानी पीने या कुल्हड़ शेयर करने में एक पल की खामोशी आ जाती।

कानपुर की सड़कों पर एम्बुलेंस की आवाज़ पहले भी आती थी, लेकिन अब लोग उसे सुनकर रुकने लगे थे। कोई पलटकर देखने लगता, हैलट अस्पताल के बाहर चहल-पहल बढ़ गई थी। अंदर जाने वालों की संख्या सीमित थी, बाहर इंतज़ार करने वालों की आँखों में सवाल थे—जिनके जवाब किसी के पास नहीं थे।

लाला लाजपत राय अस्पताल यानी हैलट अस्पताल उन दिनों कानपुर की धड़कन जैसा हो गया था। वहाँ हमेशा भीड़ रहती थी, लेकिन अब भीड़ में बेचैनी घुल गई थी। इमरजेंसी के बाहर स्ट्रैचर ऐसे भागते दिखते जैसे पूरा शहर अचानक डॉक्टर बन गया हो। कनपुरियों का भरोसा सरकारी अस्पतालों पर हमेशा थोड़ा गुस्से और थोड़ी मजबूरी वाला रहा है — “लाइन लंबी है, पर डॉक्टर सही मिल जाए तो जान बच जाती है।” हैलट, उर्सला और कांशीराम जैसे सरकारी अस्पताल अपनी पुरानी इमारतों, भीड़भाड़ वाले बरामदों और चाय वाले ठेलों के बीच अचानक युद्धभूमि की तरह तैयार होने लगे थे। कहीं ऑक्सीजन पाइप चेक हो रहे थे, कहीं वार्डों की सफाई ऐसी हो रही थी जैसे कोई मंत्री आने वाला हो। नर्सें तेज़ चाल में गुजरतीं और कंपाउंडर ऐसे आदेश देते फिरते जैसे आधे डॉक्टर वही हों।

दूसरी तरफ़ शहर के बड़े प्राइवेट अस्पताल भी अपनी-अपनी चमक सँभालते हुए सतर्क हो गए थे। रीजन्सी अस्पताल के बाहर सैनिटाइज़र की खुशबू और सिक्योरिटी गार्डों की सख्ती दोनों बढ़ गई थीं। मधुराज अस्पताल और कुलवंती अस्पताल में रिसेप्शन की मुस्कान अब मास्क के पीछे छिपने लगी थी। शहर में चर्चा चलती — “भइया, सरकारी में इलाज है और प्राइवेट में बिल का इलाज नहीं है!” कोई कहता, “कोरोना आए या एलियन, कानपुर वाला पहले जुगाड़ खोजेगा।” मेडिकल स्टोर्स पर थर्मामीटर और मास्क ऐसे बिक रहे थे जैसे बरसात से पहले लोग राशन भरते हैं।

फिर भी कानपुर की खासियत यही थी कि डर के बीच भी मज़ाक ज़िंदा रहता था। रिक्शेवाला सवारी से पूछ देता, “मास्क लगाए हो न भइया? हमका क्वारंटीन न करवा देना।” चाय की दुकानों पर लोग बीमारी से ज्यादा इस बात पर बहस कर रहे थे कि “चीन से आया है या राजनीति से।” शहर तैयार था या नहीं, यह किसी को ठीक से नहीं पता था; लेकिन इतना तय था कि कानपुर हर मुसीबत की तरह इसे भी पहले हँसकर देखेगा, फिर भिड़ जाएगा।

इन सब से अनजान केतन KSLS के गेट के बाहर खड़ा होकर चुपचाप बच्चों को नोटिस कर रहा था। कोचिंग के बाहर हमेशा लगने वाला लड़कों का वह बेफ़िक्र हुड़दंग और छात्रों की खिलखिलाती हँसी अब थोड़ी कम पड़ गई थी।

केतन को पहली बार अंदर तक यह गहराई से महसूस हुआ कि यह बीमारी अब महज़ अखबारों की कोई दूर की खबर नहीं रही—यह धीरे-धीरे इस शहर की धड़कन में उतरने लगी है।

कानपुर, जो हमेशा हर बड़ी से बड़ी आफ़त और मुश्किल को एक ज़ोरदार ठहाके में उड़ा देता था, अब पहली बार थोड़ा खामोश होकर कुछ सोचने लगा था।

ये तो बस शुरुआती दृश्य थे—न पूरी तरह डर का साया, न पूरी तरह बेफ़िक्री का माहौल।

बस एक शहर था, जो अब सहमे हुए दिल से यह समझने की कोशिश कर रहा था कि हवाओं का रुख बदल रहा है, और शायद सब कुछ बहुत जल्दी बदलने वाला है।



## भाई लंका लग गई

मार्च की उन शुरुआती सुबहों में एक अजीब-सी सिहरन थी।

मोतीझील का मंज़र भी बदल चुका था। जहाँ कभी सुबह-सुबह ठहाके पानी की लहरों से टकराकर गूँजते थे, वहाँ अब कदमों की आहटें भी गिनी जा सकती थीं। झील के किनारे लगी लोहे की बेंचें लावारिस पड़ी थीं। किनारे खड़े चाय वाले की केतली से भाप तो अब भी उठती, लेकिन उसके पास बैठकर अखबार की सुर्खियों पर तीखी बहस करने वाले पुराने चेहरे जैसे कहीं गायब हो गए थे।

केतन झील के किनारे ठंडे पानी को निहारते हुए टहल रहा था। वह बरसों से रोज़ यहाँ आता था, लेकिन आज उसे लगा जैसे यह वही जगह होकर भी वैसी नहीं रही। हर तरफ़ एक अनमना सन्नाटा पसरा हुआ था।

अचानक उसकी जेब में रखे मोबाइल की वाइब्रेशन से सन्नाटा टूटा। स्क्रीन पर देखा—नीरज का नाम चमक रहा था।

"कहाँ हो?" नीरज की आवाज़ में हमेशा वाली खनक गायब थी।

"मोतीझील..." केतन ने झील के ठहराव को देखते हुए कहा।

उधर से कुछ लम्हों की भारी चुप्पी रही। फिर नीरज की एक भारी सांस सुनाई दी, "भाई... लंका लग गई।"

केतन के होठों पर अनायास ही एक फीकी-सी मुस्कान आ गई। अपने दोस्त के इस पेटेंट जुमले को सुनकर उसने माहौल का तनाव कम करने की कोशिश की, "अब क्या कर दिया तुमने?"

"मैंने नहीं भाई... करोना ने," नीरज की आवाज़ में बेबस बेचैनी थी। "ऋषभ को कोविड हो गया है"।

केतन के चेहरे से मुस्कान धीरे-धीरे पूरी तरह गायब हो गई।

"उसे तेज़ बुखार है। डॉक्टर ने आइसोलेट होने और आराम करने को कहा है," नीरज ने रुककर जोड़ा,

फोन कट गया।

केतन ने मोबाइल जेब में रख लिया, लेकिन उसका हाथ वहीं अटक रहा।

दिन पंख लगाकर गुज़रने लगे, लेकिन हर नया दिन अपने साथ और गहरा अंधेरा लाता। टीवी स्क्रीन पर हर घंटे लाल पट्टियों पर नई खौफ़नाक खबरें कौंधतीं। रोज़ सुबह अखबार का पहला पन्ना बदल जाता और नए मौतों व संक्रमण के आंकड़े दिल दहला देते।

सड़कों का मंज़र बदलने लगा था। लोग एक-दूसरे से हाथ मिलाने से कतराने लगे, दूर से ही हाथ जोड़ लेते। दुकानों और दफ़्तरों के बाहर सैनिटाइज़र की बोतलें सज गईं। हर जुबाँ पर बस एक ही चर्चा थी—क्या स्कूल-कॉलेज और पूरा शहर बंद होने वाला है?

KSLS के गलियारों में भी यह बेचैनी छनकर उतर आई थी। क्लासें चल तो रही थीं, पर ब्लैकबोर्ड पर लिखे फॉर्मूलों से ज़्यादा बच्चों का ध्यान अपनी मेज़ के नीचे रखे मोबाइल पर रहता। हर थोड़ी देर में व्हाट्सएप पर कोई नई अफ़वाह, कोई नया चेतावनी भरा संदेश आता और कमरे की हवा में डर का एक और कतरा घोल देता।

उस शाम, केतन ने कोर टीम की एक आपातकालीन बैठक बुलाई। कॉन्फ़्रेंस रूम में सब मौजूद थे—शिक्षक, मैनेजमेंट के लोग और दोस्त।

केतन ने मेज़ पर अपनी उँगलियाँ आपस में फंसाई और बेहद धीमी आवाज़ में कहा, "अगर कल सरकारी आदेश आ गया और हमें इंस्टिट्यूट बंद करना पड़ा... तो भी याद रखिएगा, बच्चों की पढ़ाई किसी कीमत पर बंद नहीं होनी चाहिए।"

नीरज ने माथे का पसीना पोंछते हुए कहा, "लेकिन कैसे? अगर लॉकडाउन लगा तो बच्चे घर से बाहर नहीं निकलेंगे। हमें ऑनलाइन क्लासों की तरफ़ देखना होगा..."

कमरे में बैठे कुछ वरिष्ठ शिक्षकों के चेहरों पर असमंजस और झिझक के भाव उभर आए। उस दौर में छोटे शहरों के लिए 'ऑनलाइन पढ़ाई' एक अनजानी और जटिल दुनिया जैसी थी।

तभी, कमरे के एक कोने में बैठी अनुश्री ने अपनी चुप्पी तोड़ी।

"हम सब सीख लेंगे," उसकी आवाज़ में एक अद्भुत दृढ़ता थी।  
"तकनीक नई है, पर नामुमकिन नहीं। बच्चे भी सीख लेंगे। इस वक्त

सबसे ज़रूरी यह है कि उन बच्चों को यह महसूस न हो कि इस महामारी में उनका भविष्य कहीं रुक गया है या वे अकेले पड़ गए हैं।"

अगले कई दिन किसी थका देने वाली भागदौड़ में निकल गए। सुबह-सुबह उठकर सरकार के नए दिशानिर्देश और गाइडलाइंस पढ़ना। दोपहर में शिक्षकों के साथ ऑनलाइन सेटअप को लेकर बैठकें करना। शाम को घबराए हुए छात्रों और उनके माता-पिता को फोन पर ढांडस बंधाना। रात को जागकर अगले दिन की रणनीति बनाना... और अगली सुबह उठते ही यह पाना कि रात की बनाई सारी योजनाएँ रद्द हो चुकी हैं क्योंकि हालात और बिगड़ गए थे।

केतन की नींद का वक्त धीरे-धीरे घटकर दो-तीन घंटे रह गया था। खाने का कोई ठिकाना नहीं था। चेहरा ढलने लगा था और आँखों के नीचे काले घेरे गहरे हो गए थे। लेकिन वह किसी से अपनी थकान की एक शिकायत तक नहीं करता था। वह सबके सामने एक चट्टान की तरह खड़ा रहना चाहता था।

लेकिन अनुश्री ने यह बदलाव सबसे पहले और सबसे गहराई से महसूस किया।

एक दोपहर, जब पूरा दफ़्तर खाली हो चुका था, अनुश्री ने चाय का एक भाप उड़ता कप केतन की मेज़ पर रखा। उसने केतन की थकी हुई आँखों में देखते हुए बस इतना पूछा, "आखरी बार ठीक से कब सोए थे?"

केतन ने फ़ौरन अपने चेहरे पर एक झूठी मुस्कान सजाई और बात टालने के अंदाज़ में फाइलें समेटने लगा, "बस... काम थोड़ा ज़्यादा है अनुश्री। सब ठीक है।"

"झूठ," अनुश्री ने बिना पलक झपकाए कहा।

केतन का हाथ फाइल पर ही ठिठक गया। वह थोड़ा चौंककर उसे देखने लगा।

"तुम जब बहुत ज़्यादा परेशान होते हो न," अनुश्री ने चाय के कप की तरफ इशारा किया, "तब चाय ठंडी हो जाती है तुम्हारी।"

केतन ने अपनी मेज़ पर रखे कप को देखा। चाय के ऊपर एक पतली सायँ जम चुकी थी—वह सचमुच पूरी तरह ठंडी हो चुकी थी। उसके पास देने के लिए कोई सफ़ाई नहीं थी।

कुछ दिनों बाद वीरू नोएडा से लौटा। जब वह KSLS के दफ़्तर पहुँचा, तो उसके चेहरे की रंगत उड़ी हुई थी। उसने जो आँखों देखा हाल सुनाया, उसने कमरे में बची-खुची उम्मीदों पर भी बर्फ़ जमा दी।

"बड़े-बड़े कॉरपोरेट दफ़्तर सील हो रहे हैं भाई," वीरू ने हाँफते हुए बताया। "महानगरों से लोग सब कुछ छोड़कर अपने गाँवों की तरफ़ भाग रहे हैं। ट्रेनों बंद की जा रही हैं, सीमाएँ सील हो रही हैं। जो जहाँ है, वहीं कैद होकर रह जाएगा।"

रात काफ़ी गहरी हो चुकी थी। सरकारी आदेश आ चुका था—अगले दिन से पूरे शहर में पूर्ण लॉकडाउन था। दफ़्तर के सभी कर्मचारी और दोस्त अपने-अपने घरों को लौट चुके थे। कॉन्फ्रेंस रूम की बत्तियाँ बुझा दी गई थीं।

लेकिन केतन अपनी कुर्सी से एक इंच भी नहीं हिला था। वह उस घुप्प अंधरे कमरे में मेज़ पर टिके लैंप की पीली रोशनी में अकेला बैठा था।

अनुश्री अपना बैग टांगकर दफ़्तर के मुख्य दरवाज़े तक गई। उसने पीछे मुड़कर देखा, फिर कुछ सोचकर उसके कदम वापस लौट आए।

"चलें?" उसने केतन के पास जाकर धीरे से पूछा।

"तुम जाओ अनुश्री..." केतन ने बिना सिर उठाए कहा।

"और तुम?"

"बस... थोड़ी देर में निकलूँगा।"

अनुश्री ने कोई तर्क नहीं किया। वह चुपचाप उसके सामने वाली कुर्सी खींचकर बैठ गई। कमरे में केवल दीवार पर टंगी पुरानी घड़ी की 'टिक-टिक' की आवाज़ गूँज रही थी, जो भागते हुए वक्त की गवाही दे रही थी। काफ़ी देर तक छाए रहे इस भारी सन्नाटे को आखिरकार केतन की टूटती हुई आवाज़ ने चीरा।

"जानती हो अनुश्री... मुझे सबसे ज़्यादा किस बात से डर लग रहा है?"

अनुश्री ने बिना कुछ कहे, सांत्वना से अपना सिर हिलाया।

"मुझे इस बात से डर नहीं लगता कि KSLS को कितना बड़ा आर्थिक नुकसान होगा..." उसने मेज़ पर अपनी मुट्ठियाँ भींचते हुए कहा, उसकी आवाज़ कांप रही थी, "डर इस बात का है कि कहीं मुझ पर अंधा भरोसा करने वाले इन लोगों का भरोसा न टूट जाए। माँ-पापा ने अपनी पूरी ज़िंदगी की जमापूंजी दांव पर लगा दी। नीरज, ऋषभ और वीरू ने अपने करियर की परवाह किए बिना मेरा हाथ थामा। उन सैकड़ों बच्चों और उनके माँ-बाप ने अपनी उम्मीदें मुझे सौंप दीं... अगर मैं इस तूफ़ान में इन सबको संभाल नहीं पाया... अगर मैं हार गया तो?"

उसका वाक्य हवा में अधूरा लटक गया। एक कसक उसके गले में अटक गई थी।

अनुश्री ने मेज़ पर फैली हुई केतन की फाइलों को समेटा और उन्हें बंद करके एक तरफ रख दिया।

फिर उसने केतन की आँखों में आँखें डालकर पूछा, "तुम्हें पता है केतन, एक इंसान सच में कब हारता है?"

केतन ने अपनी लाल होती आँखों से उसकी तरफ देखा।

"जब वह अकेला सब कुछ उठाने की ज़िद में दूसरों से मदद माँगना छोड़ देता है," अनुश्री ने बहुत शांत, लेकिन गहरे स्वर में कहा।

कमरे में फिर से कुछ लम्हों की खामोशी छा गई, लेकिन इस बार वह खामोशी बोझिल नहीं थी।

अनुश्री ने बेहद सहजता से आगे कहा, "यह इंस्टिट्यूट सिर्फ़ तुम्हारा अकेला का सपना नहीं है केतन। इसमें नीरज का जुनून है, उन बच्चों की उम्मीदें हैं... और मेरी भी सांसें लगी हैं। इसलिए, इसका पूरा बोझ अकेले अपने कंधों पर उठाने की बेवकूफी मत करो। इसे बांटना सीखो।"

केतन की आँखों के कोर से एक आंसू छलककर बह निकला। उसने उसे छिपाने की कोई कोशिश नहीं की।

अनुश्री उठी और खिड़की के पास जाकर बाहर देखने लगी। बाहर सड़क पूरी तरह सुनसान हो चुकी थी, स्ट्रीट लाइट की पीली रोशनी में उड़ती हुई धूल साफ़ दिखाई दे रही थी।

"देखो," उसने खिड़की के कांच पर अपनी उँगली फेरते हुए धीमे से कहा, "रात कितनी भी काली और लंबी क्यों न हो केतन... सुबह होने से उसे दुनिया की कोई ताकत नहीं रोक सकती।"

केतन ने अपनी आँखें पोंछीं और अपने होठों पर आई एक हल्की मुस्कान के साथ पूछा, "तुम हमेशा अपने साथ इतनी उम्मीद कहाँ से लेकर चलती हो?"

अनुश्री मुड़ी। उसकी आँखों में एक अजीब-सा समर्पण और गहराई थी।

"मैं हमेशा उम्मीद लेकर नहीं चलती," उसने सच स्वीकारते हुए कहा, "लेकिन जब-जब तुम उम्मीद छोड़ने लगते हो... तब-तब मुझे तुम्हारे हिस्से की उम्मीद भी खुद रखनी पड़ती है।"

किसी भयानक तूफ़ान की शुरुआत में यही सबसे बड़ा मोड़ होता है—जब इंसान यह स्वीकार कर लेता है कि वह अमर नहीं है, और उसे भी किसी आत्मीय के सहारे की ज़रूरत है।

## अरे भइया, कानपुर है... इतनी जल्दी हार थोड़ी मानेगा

टीवी स्क्रीन पर प्रधानमंत्री का गंभीर चेहरा उभरा। आवाज़ में एक अजीब-सा भारीपन था, और जब वह ऐतिहासिक वाक्य हवा में गूँजा—  
"आज रात बारह बजे से पूरे देश में संपूर्ण लॉकडाउन..."—तो लगा जैसे समय की धारा अचानक कटकर दो हिस्सों में बँट गई हो। एक तरफ़ बीते हुए कल की बेफ़िक्र दुनिया थी, और दूसरी तरफ़ चौखट के पार खड़ी एक पूरी तरह बंद, अनजान और रहस्यमयी दुनिया।

उसी दौर में सात समुद्र पार की दुनिया भी बहुत तेज़ी से ढह रही थी। इटली और स्पेन के ऐतिहासिक शहर वीरान पड़े थे। न्यूयॉर्क जैसी कभी न सोने वाली नगरी की सड़कों पर सन्नाटा चीख रहा था। न्यूज़ चैनलों पर अब ख़बरें नहीं, केवल मौत के भयावह आँकड़े थे। सरहदें, पासपोर्ट, मिसाइलें और बेहिसाब धन—इंसानी सभ्यता का कोई भी घमंड उस अदृश्य विषाणु के आगे काम नहीं आ रहा था। विज्ञान और तकनीक पर नाज़ करने वाली दुनिया अचानक घुटनों पर आ चुकी थी।

और कानपुर? अपने ही मिज़ाज में जीने वाला वह शहर पहली बार सचमुच सहमा हुआ दिखाई दिया।

जिन सड़कों पर रात दो-दो बजे तक चाय की चुस्कियों के साथ राजनीति और सिनेमा पर गर्मा-गर्मी चलती थी, वहाँ अब ख़ौफ़नाक सन्नाटा पसरा था। नवीन मार्केट के आधे ढले शटर, बिरहाना रोड की थमी हुई रफ़्तार और घंटाघर के चौराहे पर अपनी ही परछाई से डरते लोग... शहर का हर कोना जैसे थम गया था। गंगा के घाटों पर जहाँ सुबह की आरती और शाम की भीड़ साथ-साथ बहती थी, वहाँ अब सिर्फ़ हवाओं की सरसराहट थी। हैलट अस्पताल के बाहर एम्बुलेंसों की कतारें दिन-ब-दिन लंबी होती जा रही थीं। दवा से ज़्यादा अफ़वाहें दौड़ रही थीं—कोई काढ़े को संजीवनी बता रहा था, तो कोई कपूर सूँघने की सलाह दे रहा था।

फिर भी, कानपुर अपने अलहदा अंदाज़ से पूरी तरह बाज़ नहीं आया था। किसी गली में लोग अपनी छतों पर खड़े होकर एक-दूसरे का हाल पूछ लेते, तो कहीं मोहल्ले के नौजवान चुपके से बूढ़े दंपतियों के दरवाज़े पर दूध और दवाइयाँ रखा आते। डर बहुत गहरा था, लेकिन उस डर के बीच कानपुरिया जिजीविषा की एक अजीब-सी ज़िद भी तैर रही थी—  
*"अरे भइया, कानपुर है... इतनी जल्दी हार थोड़ी मानेगा!"*

उधर केतन ने अपने कमरे में लैपटॉप खोला और KSLS को डिजिटलाइज़ करने के काम में जुट गया। मोबाइल लगातार बज रहा था—कभी ख़राब नेटवर्क का सिग्नल, तो कभी ऐप के जटिल फ़ीचर्स को समझने की ज़होज़हद।

टीम का हर सदस्य अपने-अपने मोर्चे पर डटा था। नीरज घर बैठकर स्टूडेंट्स की लंबी सूचियाँ तैयार कर रहा था। अनुश्री बोर्ड के बजाय छोटी-सी स्क्रीन के हिसाब से पूरे पाठ्यक्रम को नए सिरे से ढालने में लगी थी। और वीरू नोएडा में बैठा-बैठा सर्वर, लिंक्स, टाइमिंग्स और रिकॉर्डिंग्स की तकनीकी पेचीदगियों को संभाल रहा था। हर कोई थका हुआ था, आँखों में नींद भारी थी, लेकिन रुकने का ख़्याल किसी के दिमाग़ में नहीं आया।

जब पहली क्लास की लाइव स्ट्रीम शुरू हुई, तो कंप्यूटर की स्क्रीन पर छोटे-छोटे खानों में बच्चों के चेहरे उभर आए—कुछ घबराए हुए, कुछ उत्सुकता से मुस्कराते हुए, तो कुछ अपने कमरों के किसी शांत कोने से झेंपते हुए झांकते हुए।

लेकिन जैसे-जैसे दिन हफ़्तों में और हफ़्ते महीनों में बदलने लगे, महामारी का वह शुरुआती ज़ब्बा आर्थिक दबाव की कठोर धरातल से टकराकर चूर-चूर होने लगा।

केतन के लिए रातें सबसे मुश्किल हो गई थीं। दिन भर दफ़्तर में या स्क्रीन के सामने वह मुस्कराता रहता, लेकिन रात को घर लौटते ही ज़िम्मेदारियों का भारी बोझ उसकी छाती पर आ टिकता। उसने KSLS के विस्तार के लिए बैंक से लोन लिया था—जब सब ठीक था, तब किश्तें आसान लगती थीं। अब वही ईएमआई (EMI) हर महीने की पहली तारीख़ को किसी ज़ल्लाद की तरह उसके सामने आ खड़ी होती। ऊपर



से शिक्षकों की सैलरी, कर्मचारियों का घर चलाना, और उस विशाल बिल्डिंग का रेंट...

डाइनिंग टेबल अब खाना खाने की जगह नहीं रही थी; वह बैंक के नोटिसों, अनपेक्षित खर्चों और अधूरी सूचियों से पटी रहने वाली हिसाब-किताब की मेज़ बन चुकी थी।

नींद अब केतन के लिए एक पुरानी याद बन गई थी। बिस्तर पर लेटे-लेटे उसका दिमाग लगातार गणित बिठाता रहता—*अगर इस महीने आधी फ़ीस भी नहीं आई तो? अगर दो महीने और यही हाल रहा तो बैंक वाले क्या करेंगे? अगर किसी कर्मचारी का वेतन रोकना पड़ा, तो मैं उसकी आँखों में कैसे झाँकूँगा?* वह आधी रात को उठता, बालकनी में आकर खड़ा हो जाता। ठंडी हवा उसके चेहरे को छूती, पर उसके सीने के भीतर जल रही आग को शांत नहीं कर पाती।

छह महीने गुज़र गए। शुरू-शुरू में ऑनलाइन क्लासों की स्क्रीन जो बच्चों के मुस्कुराते चेहरों से भरी रहती थी, धीरे-धीरे उस पर काले डिब्बे बढ़ने लगे। कैमरे बंद होने लगे—पहले खराब इंटरनेट का बहाना आया, फिर घर में बीमारी की खबरें, और अंत में सिर्फ़ एक गहरा सन्नाटा।

नीरज की बनाई हुई छात्रों की सूची हर हफ़्ते छोटी होती जा रही थी। फ़ीस का आना लगभग ठप्प हो चुका था, लेकिन ज़िम्मेदारियाँ अपने समय पर दरवाज़ा खटखटा रही थीं। केतन की दुनिया अब सिमटकर दफ़्तर, घर, बालकनी और सामने दिखते सुनसान आसमान तक रह गई थी।

केबिन के भीतर धुंधलका गहराने लगा था, पर केतन ने लाइट जलाने की ज़हमत नहीं उठाई। मेज़ पर काँच के फ्रेम में जड़ी एक पुरानी तस्वीर रखी थी—तीन-चार साल पुरानी, जब कानपुर की एक चाय की टपरी पर वे सब जमा थे।

अचानक फ़ोन की घंटी बजी। सन्नाटे में वह आवाज़ किसी तेज़ झटके की तरह लगी। केतन ने बिना स्क्रीन देखे ही रिसीवर कान से लगा लिया।

“हाँ वीरू...”

दूसरी तरफ़ सन्नाटा था। एक भारी, घुटता हुआ सन्नाटा। कुछ सेकंड बाद वीरू की बेहद टूटी और काँपती हुई आवाज़ उभरी—

“केतन... ऋषभ चला गया यार।”

केतन के हाथ जैसे एक पल में बेजान हो गए। मोबाइल उँगलियों से छूटकर मेज़ पर गिरा और दूर जा अटका। पर उसे उठाने या कुछ पूछने का होश किसे था? वह कुर्सी की टेक से टिका, सामने सफ़ेद दीवार के एक ख़ाली हिस्से को टकटकी बाँधे ताकता रहा। आँखें एकदम सूखी थीं। कभी-कभी सदमा इतना भयानक होता है कि इंसान का दिमाग़ उस सच्चाई को अपने भीतर उतरने ही नहीं देता।

कुछ देर बाद केबिन का भारी दरवाज़ा हल्के से खुला। अनुश्री अंदर आई। कमरे के अंधरे में उसने केतन के बुत बने चेहरे और मेज़ पर पड़े फ़ोन को देखा। हालात का अंदाज़ा लगाने के लिए उसके लिए इतना ही काफ़ी था।

उसने काँपते स्वर में बस एक नाम पुकारा, “ऋषभ...?”

केतन ने कोई जवाब नहीं दिया, बस धीरे से अपनी आँखें मूँद लीं।

अनुश्री चुपचाप आकर उसके बगल में बैठ गई। दोनों घंटों बिना एक शब्द बोले उस स्याह कमरे में बैठे रहे। उस भयानक ख़ामोशी के आगे सांत्वना का हर शब्द बहुत छोटा और बेमानी लग रहा था।

अगले दिन जब वे ऋषभ के घर पहुँचे, तो वहाँ की आबोहवा किसी का भी कलेजा चीर देने के लिए काफ़ी थी। वहाँ रोने का कोई शोर नहीं था, बस एक बोझिल, मार देने वाली ख़ामोशी पसरी थी।

ऋषभ की माँ बार-बार शून्य में ताकते हुए घर के मुख्य दरवाज़े की तरफ़ देख लेती थीं—मानो उन्हें अब भी यही आस हो कि उनका बेटा अपनी फ़ौजी वर्दी में मुस्कुराता हुआ चौखट पार करेगा और कहेगा, ‘माँ, बड़ी तेज़ भूख लगी है, कुछ खाने को दो!’ उसके पिता एक कोने में गुमसुम बैठे थे।

केतन की नज़र दीवार पर टंगी ऋषभ की उस आदमकद तस्वीर पर जा टिकी, जिसमें वह गर्व से अपनी वर्दी पहने खड़ा था। तभी केतन की स्मृति में बरसों पुराना एक पल ज़िंदा हो उठा। एक रात यूँ ही टपरी पर

चाय पीते-पीते ऋषभ ने मज़ाक में कहा था, 'अबे केतन, अगर मैं सरहद पर कभी पहले निकल लिया न... तो मेरी माँ का खयाल रखना, समझे?'

तब केतन और नीरज ने उसे डांटकर चुप करा दिया था। पर आज वही हँसी-मज़ाक एक हकीकत बनकर केतन के सीने में आरी की तरह चल रहा था।

शाम को जब तिरंगे में लिपटी उसकी देह भैरव घाट पहुँची, तो महामारी के कड़े नियमों का पहरा था। ऋषभ की माँ ने रोते हुए काँपते हाथों से अपने बेटे को आखिरी बार छूना चाहा, पर पीपीई किट पहने कर्मचारियों ने उन्हें दूर ही रोक दिया। उनकी पथराई आँखों में तैरता वह बेबस सवाल पूरी इंसानियत को शर्मसार कर रहा था।

जब पिता ने काँपते हाथों से चिता को मुखाग्नि दी, तो वीरू ने अपना चेहरा दोनों हाथों में छिपा लिया। नीरज बच्चों की तरह बिलख-बिलखकर रो पड़ा।

और केतन?

वह धधकती चिता की उठती लपटों को टकटकी बाँधे देखता रहा। उसे लग रहा था कि उस आग में सिर्फ़ उसके दोस्त का देह नहीं जल रहा, बल्कि यारी की दुनिया राख हो रही थी।

उसने उठते धुएँ की तरफ़ देखते हुए मन ही मन कहा—'ये क्या हुआ... ऊपर वाला इतना निर्दयी हो सकता है क्या?'

गुरूब होते सूरज की लालिमा चिता के काले धुएँ में पूरी तरह से विलुप्त हो गई।

## बस पनकी वाले बाबा कृपा कर दें

तीन हफ्तों से बंद उस मकान का दरवाज़ा जब खुला, तो अंदर एक ऐसी गँभीर और बोझिल ठंडक ने अगवानी की, जिसका ताल्लुक मौसम से कम और भीतर के टूटे हुए मन से ज़्यादा था। परदे आधे खिसके हुए थे। बाहर दोपहर की चटक धूप थी, लेकिन वह चौखट पर ही ठिठककर रह गई थी—मानो अंदर के पसरे सन्नाटे को छेड़ने से डर रही हो।

सामने खिड़की के पास रखी मेज़ पर पुरानी फ़ाइलों का ढेर बिखरा पड़ा था—KSLS के कागज़ात, अधूरे हिसाब, छात्रों की सूचियाँ... सब कुछ उसी हाल में धूल फांक रहा था, जैसे किसी ने बीच में ही सबकुछ छोड़कर अपने हाथ खींच लिए हों।

घर की दीवार पर टंगी पुरानी घड़ी टिक-टिक करके चल तो रही थी, पर उसकी आवाज़ अब समय नहीं बता रही थी; वह बस मकान के ख़ालीपन को और गहरा कर रही थी। सोफ़े पर केतन की वही शर्ट पड़ी हुई थी, जो उसने उस मनहूस दोपहर को उतारी थी जब ऋषभ के गुज़र जाने की ख़बर आई थी। उसे देखकर लगता था जैसे उस एक दिन के बाद से इस घर में समय की सुई हमेशा के लिए अटक गई हो।

दरवाज़ा दोबारा खुला। नीरज और अनुश्री अंदर आए।

नीरज की चाल में थकान थी—ऐसी थकान जो लंबी दूरी तय करने से नहीं, बल्कि किसी गहरे सदमे का बोझ ढोने से आती है। अनुश्री की आँखें सूजी और लाल थीं, जैसे वह पूरे रास्ते अपने आँसू बहने से न रोक पाई हो। कमरे में कदम रखते ही दोनों की नज़रें केतन पर जा टिकीं। वह कोने में रखी कुर्सी पर झुके कंधों के साथ बैठा हुआ था। उसका शरीर तो वहाँ मौजूद था, लेकिन उसकी आत्मा कहीं दूर, किसी स्याह अंधेरे में भटक रही थी।

"यार... तू फ़ोन क्यों नहीं उठा रहा है?" नीरज ने अपनी भारी आवाज़ में सन्नाटे को चीरा।

केतन ने सिर नहीं उठाया। उसकी नज़रें ज़मीन की एक बेजान दरार पर टिकी रहीं।

अनुश्री ने कमरे में बिखरे पड़े अवसाद को देखा और भींचे गले से बोली, "क्या हाल बना रखा है यह..."

दोनों वही पास के सोफ़े में बैठ गए, दीवारों को एकटक देखते रहे, किसी को कुछ सूझ नहीं रहा था।

नीरज खामोसी तोड़ते हुए गहरी और ठंडी साँस खींची। "केतन... हमें तुमसे एक ज़रूरी बात करनी है।"

केतन ने बहुत धीरे से कुर्सी पीछे सरकाई और सपाट आवाज़ में कहा, "बोलो।"

नीरज की आवाज़ अचानक लड़खड़ाने लगी, "इंस्टिट्यूट... कुछ दिनों के लिए बंद करना पड़ेगा।"

वे शब्द केवल हवा में नहीं गूँजे, बल्कि सीधे फर्श पर गिरे और कांच की तरह चकनाचूर हो गए। कमरे की दीवारें जैसे और नज़दीक आ गईं और बाहर की सुनसान गली का सत्राटा कमरे के भीतर तक फैल गया।

"क्या मतलब...?" केतन ने अपनी बुझी हुई आँखों से नीरज को देखा।

नीरज ने नज़रें चुरा लीं, "रेंट नहीं जा पाया... मकान मालिक ने और इंतज़ार करने से मना कर दिया। आज सुबह ही वह गेट पर ताला लगाकर चला गया।"

केतन की निगाहें सामने दीवार पर टंगी उस तस्वीर पर चली गईं—उद्घाटन वाले दिन की तस्वीर। वही खिलखिलाते चेहरे, वही उम्मीदें...

"ऋषभ चला गया..." उसके सूखे होठों से एक फुसफुसाहट निकली, "...और अब क्या जाना बाकी रह गया है, मुझे फ़र्क नहीं पड़ता, बेच दो सब कुछ"

अनुश्री घुटनों के बल उसके पास बैठ गई और उसका हाथ थामकर बोली, "तुम यह क्या बातें कर रहे हो केतन? हालात ही ऐसे बन गए हैं। थोड़ा समय दो, सब ठीक हो जाएगा।"

"कुछ ठीक नहीं होगा अनु..." केतन ने खिड़की के पार देखते हुए कहा। बात अधूरी रह गई। रसोई से आती बर्तनों की धीमी आहट के बीच चाय की सौंधी महक कमरे में तैर गई। माँ हाथ में चाय की दो ट्रे लिए बाहर आईं। उन्होंने न किसी से कुछ पूछा, न ही किसी की आँखों में झांका। बस चुपचाप कप मेज़ पर रखे और भारी कदमों से वापस लौट गईं।

उनके जाते हुए कदमों की आहट बता रही थी कि घर की हर ईंट इस दुख में बराबर की साझेदार थी।

केतन खिड़की के बाहर देखता रहा। वही पीली स्ट्रीट लाइट, बंद दुकानों के ढले हुए शटर और सूनी सड़क।

"क्या किया जाए भाई..." केतन की आवाज़ टूटने लगी, "ऋषभ का चेहरा आँखों के सामने से हट ही नहीं रहा है।"

अनुश्री ने उसके हाथ को और कसकर भींच लिया, "मुझे तो समझ ही नहीं आ रहा कि तुमसे क्या कहूँ..."

"उसके घरवालों का बुरा हाल है," नीरज ने सिर झुका लिया, "इकलौता बेटा था उनका।"

केतन ने कुछ कहना चाहा, लेकिन गले में फँसी कसक ने आवाज़ बाहर नहीं आने दी। "साला, ज़िंदगी का क्या मतलब बचा है अब?"

अनुश्री के सन्न का बाँध टूट गया, "यह नहीं होना चाहिए था केतन... यह सबकुछ बहुत भयावह लग रहा है।"

घर में फिर से वही भयानक सन्नाटा पसर गया। दीवार पर लटके कैलेंडर का पन्ना बाहर की हल्की हवा से हिल रहा था—मानो याद दिला रहा हो कि दुनिया का समय नहीं रुका है, पर उस कमरे में बैठा इंसान दो मौतों के बीच हमेशा के लिए ठहर गया था: एक अपने जिगरी दोस्त की और दूसरी अपने ख़्वाब की।

देर रात जब दोस्त चले गए और घर का दरवाज़ा बंद हुआ, तो लगा जैसे बची-कुची आवाज़ें भी बाहर ही छूट गईं। अंदर सिर्फ़ घड़ी की टिक-टिक थी और बाहर सड़कों पर एम्बुलेंसों की लगातार गूँजती सायरन की चीखें।

रात के दो बज रहे थे। एम्बुलेंसों की वे आवाज़ें अब किसी एक गाड़ी की नहीं लग रही थीं; वे पूरे कानपुर शहर की एक सामूहिक, बदहवास और टूटी हुई साँस जैसी प्रतीत हो रही थीं।

कमरे में बल्ब जल रहा था, पर उसकी रोशनी में कोई ताप नहीं था। केतन बिस्तर के किनारे बैठा हुआ अपनी हथेली को घूर रहा था। दिमाग़ में हफ़्तों का सारा मलबा एक साथ घूम रहा था—ताले में जकड़ा

इंस्टिट्यूट, ऋषभ का हंसता हुआ बेजान चेहरा, अनुश्री के पोंछे हुए आँसू।

तभी माँ के कमरे की तरफ़ से एक धीमी, लेकिन बेहद बदहवास दस्तक हुई।

माँ चौखट पर खड़ी थीं। उनका चेहरा पीला पड़ चुका था और होंठ बुरी तरह काँप रहे थे—“केतन... पापा को साँस लेने में बहुत तकलीफ़ हो रही है...”

एक पल में केतन के पूरे शरीर का खून जैसे पैरों में उतर गया। उसे लगा किसी ने उसके पैरों तले से ज़मीन खींच ली हो। वह बदहवास होकर पापा के कमरे में भागा।

पापा बिस्तर पर अधलेटे थे। उनकी छाती तेज़ी से ऊपर-नीचे हो रही थी। साँस ऐसे टूट-टूटकर आ रही थी मानो हवा और फेफ़ड़ों के बीच कोई अदृश्य चट्टान आ खड़ी हुई हो। आँखों में एक गहरा खौफ़ था और होंठ सूखकर सफ़ेद पड़ चुके थे। कमरे की वही हवा, जो रोज़ जीवन देती थी, अब जानलेवा महसूस हो रही थी।

केतन ने काँपते हाथों से पानी का गिलास आगे किया, लेकिन पापा घूँट भी नहीं ले पाए। सिरहाने बैठी माँ बेबसी में हाथ जोड़कर पनकी वाले हनुमान जी का नाम बुदबुदा रही थीं।

एम्बुलेंस को फ़ोन करने और उसके पहुँचने के बीच के वे दस मिनट समय के साधारण टुकड़े नहीं थे; वे खौफ़ के वे कतरे थे जो धीरे-धीरे दिल पर गिरकर उसे छलनी कर रहे थे।

जब एम्बुलेंस पहुँची, तो उसकी नीली बत्ती की कौंध ने घर की दीवारों पर एक भयावह दृश्य रच दिया—नीला, सफ़ेद, फिर गहरा नीला। जैसे ज़िंदगी और मौत एक साथ कोई भयावह नाच नाच रही हों। स्ट्रेचर अंदर आया और पापा को उस पर लिटाया गया। माँ ने पापा का हाथ कसकर थाम रखा था। केतन बाहर खड़ा होकर सिर्फ़ यह देख रहा था कि अगर वह हाथ छूट गया, तो शायद सब कुछ हमेशा के लिए छूट जाएगा।

सड़कें सुनसान थीं, लेकिन हैलट अस्पताल की ओर जाने वाला रास्ता गाड़ियों से भरा पड़ा था। हर सौ मीटर पर कोई न कोई एम्बुलेंस सायरन

बजाती दौड़ रही थी। पूरा शहर जैसे एक ही खौफनाक दिशा में बहा जा रहा था।

हैलट के कोविड सेंटर का दरवाज़ा खुला तो अंदर का दृश्य किसी दूसरे ही लोक का था। वहाँ रोशनी तेज़ थी, पर कोई उजाला नहीं था। सौ बिस्तरों वाले उस केंद्र में, जो कभी जनाना अस्पताल हुआ करता था, अब हवा में दवाइयों की तीखी गंध, ऑक्सीजन सिलेंडर की फुफकार और मौत की ठंडी आहट घुली हुई थी।

गंभीर मरीज़ों को न्यूरो वाली इमारत में भेजा जा रहा था—वार्ड का वह नाम सुनते ही परिजनों के चेहरे पर मौत की परछाई उतर आती थी। चारों तरफ़ स्ट्रेचरों पर सफ़ेद चादरों में लिपटे बेजान शरीर रखे थे। कोई नाम नहीं, कोई चेहरा नहीं... सिर्फ़ आकृतियाँ। केतन को लगा कि वह किसी अस्पताल में नहीं, बल्कि मौत के किसी विशाल वेटिंग रूम में खड़ा है।

पापा को जैसे-तैसे एक बेड मिला। ऑक्सीजन का मास्क उनके चेहरे पर चढ़ाया गया और मॉनिटर की 'बीप-बीप' की आवाज़ सत्राटे को चीरने लगी। हर एक बीप के साथ केतन की अपनी धड़कन भी अटकती और चलती। माँ बाहर गलियारे में ज़मीन पर बैठी पल्लू से आँखें पोंछ रही थीं और जुबान पर वही एक रट थी—"बस पनकी वाले बाबा कृपा कर दें..."

चार दिन और चार रातें उस अस्पताल के ठंडे गलियारे में काँच के इस पार और उस पार घिसटती रहीं। पीपीई किट में भागते डॉक्टर और नर्सें इंसानों से ज़्यादा चलती-फिरती परछाइयाँ लग रहे थे।

चार दिनों की इस जंग के बाद एक सुबह डॉक्टर ने बाहर आकर एक संक्षिप्त सूचना दी, "ऑक्सीजन लेवल अब 90 के पार है। हालत स्थिर हो रही है।"

माँ की आँखों में आँसू छलक आए, लेकिन उस अस्पताल ने सबको यह सिखा दिया था कि यहाँ हर अच्छी ख़बर के पीछे एक नया डर छिपा होता है। केतन इन चार दिनों में एक गहरे अवसाद में डूब चुका था—वह पापा के सामने मुस्कुराता, लेकिन बाहर आकर ठंडी दीवारों से टेक लगाकर रो पड़ता।



इसी बीच एक दोपहर मास्क लगाए अनुश्री, नीरज और वीरू अस्पताल के बाहर पहुँचे। काँच की खिड़की के पार से जब उन्होंने पापा को कुछ बेहतर स्थिति में लेटे देखा, तो उन तीनों की आँखों में भी हफ्तों बाद एक हल्की सी राहत तैर गई।

बाईस लंबे और भयानक दिनों के बाद आखिरकार पापा को डिस्चार्ज मिला।

घर लौटना किसी जंग को जीतकर वापस आने जैसा था। जब वे ऑटो से मोहल्ले की गली में दाखिल हुए, तो मंज़र बदला हुआ था। कई घरों पर ताले लटके थे, कुछ दरवाज़ों पर काली पट्टियाँ बँधी थीं। कोई बाहर खड़ा होकर बात नहीं कर रहा था—डर ने हर घर की दीवार को और मोटा कर दिया था।

पापा घर आ गए थे, लेकिन अस्पताल उनके भीतर से पूरी तरह नहीं निकला था। रात में ज़रा सी खाँसी आते ही वे चौंककर उठ बैठते। अनुश्री रोज़ फ़ोन करके हाल-चाल लेती, पर हर कॉल की घंटी बजते ही केतन का दिल आज भी एक पल के लिए बैठ जाता—कि कहीं यह फ़ोन कोई नई बुरी ख़बर लेकर तो नहीं आया?

पापा की साँसें अब स्थिर थीं, लेकिन शहर के आसमान पर ख़ौफ़ का साया अब भी गहरा था। हर ढलती शाम के साथ हर चेहरे पर वही एक अनकहा सवाल तैरता रहता—'अगला नंबर किसका?'

लेकिन उस गिरते हुए शहर और ढहती हुई दुनिया के बीच, अपने पिता के कमरे से बाहर आते हुए केतन ने खिड़की के पार जलती हुई पीली स्ट्रीट लाइट को देखा। उसका शरीर थका हुआ था, मन ज़ख्मी था, लेकिन भीतर कहीं—राख के नीचे दबी हुई एक बहुत बारीक चिंगारी ने फिर से सुलगना शुरू कर दिया था। सफर अभी ख़त्म नहीं हुआ था।

## भैरव घाट की हाज़िरी

आठ महीने बीत चुके थे। कानपुर अब बीमारी के नाम से काँपता तो था, मगर उसके साथ जीना भी सीखने लगा था। शहर की चाल पहले जैसी बेफिक्र नहीं रही, पर पूरी तरह टूटी भी नहीं। नवीन मार्केट की गलियों में आधे खुले शटरों के बीच फिर से मोलभाव की आवाज़ें लौटने लगी थीं। बिरहाना रोड पर कपड़ों की दुकानें ग्राहक को देखकर ऐसे मुस्कुरातीं जैसे कोई पुराना रिश्तेदार महीनों बाद लौटा हो। नवीन मार्केट में लड़के अब भी काला चश्मा पहनकर खुद को नायक समझते घूमते थे, बस फर्क इतना था कि जेब में रूमाल के साथ मुँह ढकने वाला कपड़ा भी रहने लगा था।

लेकिन सबसे ज़्यादा चोट कानपुर की खाने-पीने वाली आत्मा पर पड़ी थी। ठगु के लड्डू की दुकान पर अब भी भीड़ लगती, मगर लोग डिब्बा लेते समय दूरी बनाकर खड़े रहते। बिरहाना रोड के समोसे पहले जैसी गर्म बहसों के बीच नहीं खाए जा रहे थे; अब लोग जल्दी से बंधवाकर निकल जाते। बदनाम कुल्फी का स्वाद अब भी वही था, पर कुल्फी खाते हुए लोगों की हँसी थोड़ी दब गई थी। चुन्नीगंज से लेकर स्वरूप नगर तक चाट वालों के ठेले फिर लगने लगे थे, लेकिन गोलगप्पे वाला अब हर पाँच मिनट में हाथ धोता दिखाई देता। कनपुरियों के लिए यह सबसे अजीब समय था—शहर खुल भी रहा था और डर भी रहा था। काकादेव की कोचिंग मंडी में फिर से विद्यार्थियों की भीड़ लौटने लगी थी। किराए के कमरों में रहने वाले लड़के छतों पर बैठकर यही चर्चा करते—“परीक्षा पहले होगी या फिर से सब बंद हो जाएगा?” चाय वाले की दुकान पर राजनीति, बीमारी और क्रिकेट तीनों बराबर चल रहे थे। उधर परेड और घंटाघर की तरफ़ पुराने कारोबारी अपनी दुकानों के बाहर कुर्सी डालकर बैठने लगे थे, जैसे सिर्फ़ मौजूद रहना भी एक तरह की लड़ाई हो।

गंगा किनारे शाम की हवा फिर चलने लगी थी। आनंदेश्वर मंदिर में घंटियाँ फिर बजतीं, हालांकि भीड़ पहले जैसी नहीं रही थी। लोग माथा टेकते हुए अब एक अतिरिक्त प्रार्थना भी जोड़ देते—“बस घर बचा रहे

बाबा।" शहर ने समझ लिया था कि महामारी जल्दी जाने वाली नहीं, इसलिए उसने अपने पुराने तरीके से उससे समझौता कर लिया था। डर अब भी था, मौत अब भी खबर बन रही थी, लेकिन कानपुर की मौज भी ज़िंदा थी। वही मौज जो हर मुसीबत के बीच चाय की भाप में कहती थी—"अरे भइया, ज़िंदगी है... कट ही जाएगी।"

पिछले आठ महीनों में केतन अपने जीवन के सबसे बुरे दौर से गुजर चुका था। हर दिन कोई नई घटना होती, और हर घटना उसके भीतर किसी न किसी हिस्से को तोड़ देती। दुख अब उसके लिए अपवाद नहीं रहा था, वह उसकी दिनचर्या बन चुका था। सुबह उठते ही किसी की बीमारी की खबर, दोपहर में किसी की मौत का संदेश, और रात को किसी घर के बुझ जाने की कहानी—यही उसका समय हो गया था। ज़िंदगी जैसे धीरे-धीरे मौत की भाषा बोलने लगी थी।

उस दिन भी कुछ अलग नहीं था। माँ ने धीमी आवाज़ में बताया कि पड़ोस के ठाकुर साहब और उनकी पत्नी दोनों का शव घर में मिला है। वे बेचारे अपने बच्चों तक को खबर नहीं कर पाए। कई दिनों से दरवाज़ा नहीं खुला था, और घर से आती दुर्गंध ने मिश्रा अंकल को मजबूर कर दिया कि एम्बुलेंस को सूचना दें। जब दरवाज़ा तोड़ा गया, तो भीतर सन्नाटा था—ऐसा सन्नाटा जिसमें दो ज़िंदगियाँ हमेशा के लिए चुप हो चुकी थीं। यह सुनते ही केतन के भीतर कुछ बैठ गया। उसे लगा जैसे कोई शब्द नहीं, कोई आवाज़ नहीं, बस एक भारी पत्थर उसके सीने पर रख दिया गया हो।

यह सब अब डरावना नहीं, बल्कि भयावह हो चुका था। लोग एक-एक करके काल के मुख में जा रहे थे, और कोई उन्हें रोक नहीं पा रहा था। किसी को विदा करने के लिए घर में भीड़ नहीं होती थी, न शोर होता था, न रोने की खुली आवाज़, बस बंद दरवाज़ों के पीछे सिसकियाँ और खामोश अंतिम संस्कार।

केतन आत्मिक रूप से कमजोर होता जा रहा था। उसका मन हर दिन थोड़ा और खाली हो जाता। वह सोचने लगा था—क्या यह सच है या कोई लंबा, डरावना सपना? क्या वाकई लोग ऐसे तड़प-तड़प कर दुनिया छोड़ रहे हैं? क्या यही मनुष्य का अंत है—अकेले कमरे में, बिना किसी अपने के स्पर्श के? वह जब भी ऐसी खबर सुनता, तो भीतर से

द्रवित हो उठता। उसके अंदर हज़ारों करुण अश्रु हिलोरें मारने लगते, जैसे कोई अदृश्य सागर उसके सीने में भर रहा हो। उसे लगने लगा कि वह किसी और ही संसार में पहुँच गया है—एक ऐसे संसार में जहाँ हर ओर पीड़ा है, और हर चेहरे पर अधूरी विदाई।

धीरे-धीरे उसका मन लोगों के लिए उदारता और ममता के समुद्र में डूबने लगा। वह हर मरते हुए चेहरे में अपने पिता को देखने लगा, हर बुझते हुए घर में अपनी माँ का डर, और हर सिसकती आवाज़ में अपना भविष्य। उसका हृदय ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगा, जैसे भीतर कोई युद्ध चल रहा हो। उसे लगने लगा कि लाखों तड़पते लोग उसे पुकार रहे हैं—मानो कह रहे हों, “ओ केतन, आज ज़रा हमें बचा ले...” उसे लगा जैसे किसी ने उसके पैरों को पकड़ लिया है, जैसे कोई अदृश्य हाथ उसे पीछे खींच रहा है, जैसे सारी पीड़ा उसी के भीतर उतरना चाहती हो।

उसके चारों ओर सब धुँधला होने लगा। साँस भारी हो गई। दिल जैसे सीने में ठहर-सा गया। और अचानक वह चीख उठा—एक ऐसी चीख जिसमें डर भी था, बेबसी भी, और करुणा भी। उसके बाद सब कुछ अंधेरे में डूब गया, और वह बेहोश होकर बिस्तर पर गिर पड़ा।

केतन कभी निराशावादी नहीं था। वह हमेशा मानता आया था कि अंधेरे के बाद उजाला होता है, कि हर दुख के बाद कोई न कोई राह निकलती है। पर बीते दिनों और वर्तमान परिस्थितियों ने उसे जो अनुभव कराया था, उसने उसकी आस्था को भी थका दिया था। अब उसके भीतर शायद ही कोई ऐसी जगह बची थी जहाँ आशा की किरण आराम से टिक सके।

विश्व स्तर पर बीमारी का स्वरूप किसी एक देश या एक शहर की कहानी नहीं रह गया था। वह पूरी धरती पर एक साथ उतरा आया अंधकार था। मानचित्र अब केवल सीमाएँ नहीं दिखाते थे, बल्कि लाल बिंदुओं में बदलते जा रहे थे—हर बिंदु एक शहर, हर शहर एक कराह। इटली की सड़कों पर सन्नाटा था, जहाँ कभी संगीत और हँसी गूँजती थी। न्यूयॉर्क की ऊँची इमारतों के बीच एम्बुलेंसों की आवाज़ दिन-रात गूँज रही थी। स्पेन के अस्पतालों में बिस्तर कम पड़ गए थे, और चीन के शहरों में खामोशी कानून बन चुकी थी।

टीवी स्क्रीन पर दुनिया एक ही दृश्य दिखा रही थी—डॉक्टर थके हुए चेहरे लिए खड़े थे, नर्सों की आँखों में नींद नहीं थी, और मरीज़ ऑक्सीजन के सहारे साँस गिन रहे थे। कहीं खेल के मैदान अस्पताल बन गए थे, कहीं स्कूलों की इमारतों में स्ट्रेचर लग गए थे। हवाई अड्डे वीरान थे, ट्रेनों रुकी हुई थीं, और समुद्र किनारे शहर ऐसे लगते थे जैसे समय ने उन्हें छोड़ दिया हो।

लोग अपने ही घरों में कैद थे। खिड़कियों से झाँकती आँखें आसमान से सवाल करती थीं—“यह कब खत्म होगा?” शादी के घर सूने थे, अंतिम संस्कार में गिने-चुने लोग। दुनिया ने पहली बार जाना कि दूरी भी ज़रूरी हो सकती है, और छूना भी ख़तरा बन सकता है।

अखबारों में अब खबरें नहीं, आँकड़े छपते थे। हर सुबह नई संख्या—कितने संक्रमित, कितने अस्पताल में, कितने... अब नहीं रहे। भाषाएँ अलग थीं, पर दर्द एक जैसा था। किसी की माँ इटली में रो रही थी, किसी का बेटा ब्राज़ील में, और किसी का पति भारत में।

यह बीमारी सिर्फ़ शरीर पर नहीं उतरी थी, यह सभ्यता पर सवाल बन गई थी। आधुनिक विज्ञान भी घुटनों पर आ गया था, और इंसान को समझ आया कि वह कितना असहाय है। धर्म, धन, ताक़त—सब इस बीमारी के सामने बराबर हो गए थे। पूरी दुनिया एक ही कमरे में बंद कैदी जैसी लग रही थी—डरी हुई, थकी हुई, और किसी चमत्कार की प्रतीक्षा में।

और इसी वैश्विक अंधेरे में, हर देश, हर शहर, हर घर अपने-अपने तरीके से लड़ रहा था—कोई डॉक्टर बनकर, कोई माँ बनकर, कोई अकेले कमरे में बैठकर बस ज़िंदा रहने की कोशिश करता हुआ। यह सिर्फ़ महामारी नहीं थी, यह मानवता की सबसे बड़ी परीक्षा बन चुकी थी।

अगली सुबह एम्बुलेंस की आवाज़ से केतन की नींद खुली। सायरन अब उसे जगा नहीं रहा था, बल्कि भीतर कहीं कुछ हिला देता था। वह बिस्तर पर कुछ पल बैठा रहा, जैसे अपने शरीर को याद दिला रहा हो कि उसे उठना है। सिर भारी था, आँखों में जलन थी, पर उसने खुद को संभाला। मुँह पर पानी डाला, कपड़े बदले, और बिना किसी से कुछ कहे घर से निकल पड़ा।

घड़ी में सुबह के पाँच बज रहे थे। वह बहुत दिनों बाद झील की ओर गया था। रास्ता वही था, पर माहौल बदला हुआ। दुकानें बंद थीं, चाय की केतली नहीं जली थी, और सड़कों पर चलने वाले लोग भी ऐसे लग रहे थे जैसे अपने-अपने डर उठाए चल रहे हों।

झील के पास पहुँचकर वह बेंच पर बैठ गया। पानी शांत था, पर उस शांति में भी उदासी घुली हुई थी। पहले यहाँ सुबह टहलने वालों की भीड़ होती थी—हँसते बुजुर्ग, दौड़ते बच्चे, योग करते लोग। आज वहाँ गिनती के लोग थे, और उनके चेहरों पर मुस्कान नहीं, बस जल्दी लौट जाने की बेचैनी थी।

बगल में हैलट अस्पताल दिखाई दे रहा था। उसके गेट पर भीड़ लगी थी। कुछ लोग ज़मीन पर बैठे थे, कुछ दीवार से टिके खड़े थे। कोई फोन पर बात कर रहा था, कोई चुपचाप आसमान देख रहा था। ऐसा लग रहा था जैसे सब किसी अदृश्य कतार में खड़े हों—खबर की कतार में।

केतन की नज़र एक वृद्ध पर टिक गई। वह धोती-कुर्ते में था, कंधे पर पुराना गमछा डाला हुआ। हाथ में एक छोटा-सा थैला था, जैसे उसमें पूरी दुनिया समेट लाया हो। वह अस्पताल के गेट की तरफ बार-बार देखता, फिर झील की तरफ, फिर फिर से गेट की ओर। उसकी आँखों में इंतज़ार था—लंबा, थका हुआ इंतज़ार।

केतन कुछ देर उसे देखता रहा। फिर हिम्मत जुटाकर उठ गया और धीरे से उसके पास जाकर बोला, “बाबा... किसी का इलाज चल रहा है अंदर?”

वृद्ध ने उसकी तरफ देखा। आवाज़ धीमी थी, पर भारी, “हाँ बेटा... मेरा लड़का है।”

केतन चुप हो गया। कुछ पल बाद बोला, “कितने दिन हो गए?”

वृद्ध ने उँगलियों से गिनने की कोशिश की, फिर हारकर बोला, “गिनती भूल गया हूँ... दिन-रात सब एक जैसे हो गए हैं।”

केतन बेंच पर उसके पास बैठ गया, “अकेले आए हो?”

“हाँ... उसकी माँ तो चल नहीं पाती। मैंने कहा, मैं बैठ जाऊँगा यहाँ... जब बाहर आएगा, मुझे सबसे पहले दिख जाएगा।” उसने अस्पताल के

गेट की ओर देखा, “कल बोला था डॉक्टर ने—आज शायद बात करवा देंगे... बस उसी इंतज़ार में हूँ।”

केतन की छाती भारी हो गई, “आपने कुछ खाया?”

वृद्ध ने गमछे से मुँह पोंछा, “सुबह पानी पिया था... भूख लगती नहीं बेटा। पेट में नहीं, दिल में दर्द भरा है।”

कुछ पल दोनों चुप बैठे रहे। सामने से एक स्ट्रेचर निकला। सफ़ेद चादर ढकी हुई थी। वृद्ध ने तुरंत नज़र हटा ली। वह धीरे से बोला, “जब बच्चा छोटा था, बुखार होता था तो पूरी रात गोद में बैठा रहता था... आज वही बच्चा अंदर है, और मैं बाहर...” उसकी आवाज़ टूट गई, “भगवान से रोज़ एक ही बात कहता हूँ—मुझे ले लो, उसे छोड़ दो... पर भगवान भी शायद बहुत थक गए हैं आजकल।”

केतन की आँखें भर आई, “आपका लड़का ठीक हो जाएगा, बाबा।”

वृद्ध ने हल्की-सी मुस्कान की, “तू कह रहा है, इसलिए मान लेता हूँ बेटा... वरना यहाँ तो हर आदमी उम्मीद के सहारे ही बैठा है।”

अस्पताल के अंदर से एक नर्स बाहर निकली। वृद्ध तुरंत खड़ा हो गया, “मेरा लड़का... वार्ड नंबर चार...”

नर्स ने फाइल देखी, “अभी ऑक्सीजन स्थिर है... शाम को डॉक्टर बात करेंगे।”

वृद्ध ने हाथ जोड़ दिए, “भगवान तुझे खुश रखे बिटिया...” वह फिर बेंच पर आकर बैठ गया।

केतन उठा, “मैं रोज़ यहीं आता हूँ बाबा... अगर कुछ चाहिए हो, बता देना।”

वृद्ध ने उसकी ओर देखा, “बस बैठ जाना कभी-कभी... आदमी को आदमी दिख जाए, यही बहुत है।”

केतन झील की ओर चल पड़ा। सूरज अब निकल रहा था। रोशनी फैल रही थी, पर उसके साथ-साथ अस्पताल की भीड़ भी बढ़ रही थी। उसने सोचा—दुनिया सच में बदल चुकी है। अब सुबह चिड़ियों की आवाज़ से नहीं, एम्बुलेंस के सायरन से होती है। और ज़िंदगी... अब साँस से नहीं, रिपोर्ट से मापी जाती है।

झील का पानी शांत था, पर किनारे खड़ा शहर डरा हुआ था। और केतन... उस डर के बीच खड़ा रहना सीख रहा था।

अगली सुबह जब केतन मोतीझील की तरफ़ निकला, तो वहाँ का दृश्य उसकी आत्मा को भीतर तक झकझोर गया। किनारे पर कुछ लावारिस शव पड़े थे—न कोई पहचान, न कोई रोने वाला। चारों तरफ़ एक भारी, घुटन भरा सन्नाटा पसरा था और झील की शांत लहरें यूँ किनारे से टकरा रही थीं मानो वे भी इस लाचारी पर बिलख रही हों।

केतन का गला सूख गया और उसके कदम वहीं जम गए। काँपते हाथों से उसने फ़ोन निकाला और नीरज को मिलाया। उसकी आवाज़ पूरी तरह भर्राई हुई थी—

“नीरज... यहाँ झील किनारे... कुछ लाशें पड़ी हैं यार। कोई देखने वाला नहीं है...”

नीरज कुछ पल स्तब्ध रहा, फिर संभालकर बोला कि वह तुरंत पहुँच रहा है।

केतन के लिए वह इंतज़ार भारी पड़ रहा था। वह उन लाचार देहों से नज़र नहीं हटा पा रहा था। कुछ ही देर में नीरज हाँफ़ता हुआ पहुँचा। बेनाम, बेपहचान शवों को देखकर उसका कलेजा भी काँप उठा।

“अब क्या करेंगे केतन?” नीरज की आवाज़ में घबराहट साफ़ थी।

केतन ने कुछ देर खामोश रहकर अपनी हिचक तोड़ी और दृढ़ता से बोला, “लगता है कोई डर के मारे इन्हें यहीं छोड़ गया है। अगर हमने कुछ नहीं किया तो यह ऐसे ही सड़ते रहेंगे। इंसान हैं यार... अंतिम संस्कार का इतना हक़ तो इनका भी बनता है।”

नीरज पहले झिझका—हालात का डर और महामारी का साया बड़ा था—पर केतन की आँखों में बहती पीड़ा और संकल्प ने उसका मन बदल दिया। दोनों ने तुरंत नगर निगम से संपर्क किया, एक एम्बुलेंस की व्यवस्था की और उन शवों को लेकर सीधे भैरव घाट का रुख़ किया।

भैरव घाट—कानपुर का वह ठिकाना जहाँ शहर की हर भागदौड़ और हर कहानी आकर ख़त्म हो जाती थी। गंगा किनारे बसा यह श्मशान कोई डरावनी जगह नहीं था; यहाँ जलती चिताओं की लपटों के बीच बहती हवा जैसे खुद धीमे से कहती—‘चलो भइया, बहुत भाग लिए, अब



थोड़ा विश्राम कर लो।' यहाँ मौत को भी कनपुरिया अंदाज़ में ही अपनाया जाता था—जहाँ पंडित लकड़ी सजाते-सजाते राजनीति छाँटने लगते और घाट का कर्मचारी चाय का कुल्हड़ थमाकर कहता, 'का भइया, अंत में सबकी हाज़िरी यहीं लगनी है।'

लेकिन महामारी के इस दौर में भैरव घाट का वह चिर-परिचित सुकून खत्म हो चुका था। जहाँ कभी दिन में गिनती की चिताएँ जलती थीं, वहाँ अब आग बुझने का नाम नहीं ले रही थी। दिन और रात का फ़र्क मिट चुका था, लकड़ियों के ढेर कम पड़ गए थे और घाट के कर्मचारी थकान से चूर थे। गंगा किनारे उठता काला धुआँ ऐसा लगता मानो पूरे कानपुर की साँसें आसमान में घुट रही हों। अब विदाइयों में वह ठहराव भी नहीं बचा था—जल्दी-जल्दी मंत्र पढ़े जाते और अगली चिता सजा दी जाती।

केतन और नीरज जब घाट पर पहुँचे, तो चारों ओर धुएँ की घनी परत, माँस और राख की अजीब-सी गंध फैली थी। चार इलेक्ट्रिक दाह-संस्कार मशीनें बिना रुके लगातार चल रही थीं। उनके सामने पड़े अधजले और क्षत-विक्षत शव देखकर ऐसा लगता था मानो इंसानियत की आखिरी उम्मीद भी राख हो रही हो।

नीरज ने मुँह पर कपड़ा कसते हुए फुसफुसाकर कहा, "देख रहा है केतन... यह सिर्फ़ मौत नहीं है, यह मौत का तांडव है।"

केतन ने आँखें मूँद लीं। डर उसके भीतर तक उतर चुका था, दिल तेज़ी से धड़क रहा था, पर उसने ख़ुद को संभाला।

दोनों ने कर्मचारियों के साथ मिलकर शवों को उठाना शुरू किया। जलकर सिकुड़ी हुई हड्डियाँ और क्षत-विक्षत देह उठाकर आगे बढ़ाना उनके मन-मस्तिष्क को तोड़ रहा था। एक शव को उठाते समय जब हड्डियों की हल्की चटचटाहट केतन के हाथों में महसूस हुई, तो उसकी रूह काँप गई। हवा में उड़ती चिंगारियाँ बार-बार उनके चेहरों पर गिर रही थीं, पर कोई रोने वाला नहीं था, कोई मदद को आगे आने वाला नहीं था।

सब कुछ पूरा होने के बाद जब आग की अंतिम लपटें धीमी पड़ीं, तो दोनों थके-हारे वहीं सीढ़ियों पर बैठ गए। चेहरे पर राख जमा थी, पर सीने में एक अजीब-सा सुकून था कि वे बेबस देह बिना मान-सम्मान के राख नहीं हुईं।

तभी केतन की नज़र लगातार मशीनों के पास काम कर रहे कर्मचारियों पर गई। मास्क के पीछे उनकी आँखें ख़ौफ़ और अटूट थकान से भरी थीं।

केतन उठकर धीरे से उनके पास गया, “आप लोगों को... डर नहीं लगता?”

एक कर्मचारी ने पीठ सीधी करते हुए भारी आवाज़ में कहा, “बच्चा... डर तो हर शव को हाथ लगाते लगता है... पर क्या करें? अपने ही रिश्तेदार इन्हें यहाँ लावारिस छोड़ के भाग जाते हैं।”

पास खड़े दूसरे कर्मचारी ने मास्क थोड़ा नीचे किया और नम आँखों से बोला, “भैया, अगर हम लोग एक दिन भी हाथ रोक लें न, तो दिन भर में कम से कम दुई हज़ार लाश यहाँ सड़ने लगेंगी।”

केतन स्तब्ध खड़ा रहा। उन कर्मचारियों के हाथ काँप रहे थे, आँखें धुँसे से लाल थीं, पर वे बिना रुके काम में जुटे थे।

केतन ने महसूस किया—चारों तरफ़ मौत और इस भयावह अंधकार के बीच भी, फ़र्ज़ और इंसानियत की एक लौ अभी भी ज़िंदा थी, और वही इस शहर की सबसे बड़ी ताक़त थी।

## धुंध के पार की धूप

“अनु... कल हमे कुछ शव झील किनारे मिले, हम और केतन उनका दाह संस्कार करने गए थे भैरव घाट ।” नीरज सारी घटना एक बार में कह गया। नीरज की आवाज़ फोन में धीमी थी, पर हर शब्द भारी था।

अनुश्री ने फोन अपने कान के पास पकड़ा, पर उसके होंठ हिल नहीं रहे थे। जैसे ही उसने नीरज के शब्द सुने, उसके भीतर एक हल्की-हल्की सिहरन दौड़ गई।

केतन का घर सुनसान और अंधकारमय था। उसके माता-पिता गाँव जा चुके थे, वीरू ने उन्हें सुरक्षित गाड़ी से भेज दिया था। कमरे में हर चीज़ ज्यों की त्यों थी—टेबल पर बिखरी किताबें, कुर्सी आधी पलटी हुई, और खिड़कियों से धुंधली चाँदनी आ रही थी। घर में अब केवल उसके कदमों की हल्की गूँज थी।

तभी दरवाज़े पर हल्की, स्थिर दस्तक हुई।

“केतन बेटा ... मैं गोविंद हूँ।”

केतन ने दरवाज़ा खोला। गोविंद जी (केतन के हाई स्कूल टीचर), सामने खड़े थे। उनके चेहरे पर गंभीरता और दया दोनों झलक रहे थे।

दोनों काफी देर तक बिना बोले बैठे रहे ।

“सर, पिछले ग्यारह महीनों ने मुझे तोड़ के रख दिया है, ये बीमारी मेरे दोस्त ऋषभ को खा गई। पापा जैसे तैसे बच के आए है, इसका कोई अंत है की नहीं .... कुछ दिनों पहले जो मैंने भैरव घाट में देखा वह वास्तव में दिमाग से नहीं निकल पा रहा है । “उसकी आवाज़ रुकी।

गोविंद जी ने उसकी बात गंभीरता से सुनी। कुछ देर चुप रहने के बाद बोले,

“केतन बेटा, जो कुछ हो रहा है, वह सचमुच बहुत कष्टदायक है। उसे शब्दों में बयान करना आसान नहीं है। शायद यही तुम्हारे डर की वजह भी है। लेकिन डरना स्वाभाविक है। असली साहस तो तब है, जब इंसान डर के बावजूद अपने दायित्व को निभाए।”

केतन ने धीरे से सिर हिलाया। गोविंद जी की बातों में उसे एक अजीब-सी ताकत महसूस हो रही थी।

गोविंद जी ने आगे कहा,

“जीवन में मुश्किलें और बुरे समय आते रहते हैं। यही समय इंसान की असली परीक्षा लेते हैं। जो व्यक्ति अपने डर पर काबू पाकर सही काम करता है, वही अंदर से मजबूत बनता है। तुमने जो किया है, वह सिर्फ साहस की बात नहीं है, बल्कि इंसानियत के प्रति तुम्हारी जिम्मेदारी को भी दिखाता है।”

केतन की आँखें नम हो गईं। गुरु के शब्द धीरे-धीरे उसके मन में उतर रहे थे।

गोविंद जी ने कहा,

“एक बात हमेशा याद रखना, बेटा। डर को पूरी तरह खत्म नहीं किया जा सकता, लेकिन उसे अपने ऊपर हावी होने से रोका जा सकता है। यही असली हिम्मत है। तुम अकेले नहीं हो। तुम्हारे भीतर भी बहुत ताकत है। बस उस पर भरोसा रखो।”

दोनों की बातचीत चल ही रही थी कि कमरे के दरवाजे पर हल्की-सी आहट हुई। अनुश्री और नीरज वहाँ दिखाई दिए।

दोनों ने अंदर आते ही आदर से सिर झुकाकर प्रणाम किया।

नीरज सामने वाली कुर्सी पर बैठ गया और अनुश्री धीरे से केतन के पास वाले सोफे पर बैठ गई।

गोविंद जी ने दोनों की ओर देखा। उनके चेहरे पर गंभीरता थी, लेकिन आँखों में अपनापन था।

“तुम दोनों ठीक हो न?” उन्होंने पूछा।

नीरज और अनुश्री ने सिर हिलाकर हामी भर दी। दोनों की आँखों में हल्की चिंता साफ दिखाई दे रही थी।

गोविंद जी ने फिर केतन की ओर देखते हुए कहा,

“तुमने जो किया है, वह सिर्फ किसी एक व्यक्ति के लिए नहीं है। उसका महत्व समाज और इंसानियत के लिए भी है। जब चारों तरफ मुश्किलें हों, तब भी अगर हम अपना कर्तव्य निभाते रहें, तभी हालात बदल

सकते हैं। इसलिए बेटा, डर को अपने ऊपर हावी मत होने देना। अपने ज्ञान और साहस का इस्तेमाल करो और समाज के लिए अपना योगदान देते रहो।”

केतन ने धीरे-धीरे सिर उठाया। उसकी आँखों में भय और संकोच की जगह अब निश्चय और साहस दिखने लगा।

अनुश्री ने बगल में बैठकर उसका हाथ हल्का थामा। नीरज ने सामने बैठकर सर की बातें गंभीरता से सुनी।

नीरज और गोविंद जी कुछ देर बाद चले गए।

अनुश्री ने धीरे से कहा,

“केतन... यार तुम क्या चीज हो, मेरा तो सुनके ही बुरा हाल हो गया, और भैरव घाट, राम बचाए ।

केतन कुछ पल चुप रहा। उसकी आँखों में अभी भी भय और थकान की परछाई थी।

“अनु... यार पता नहीं क्यों उन लाशों को देखकर मन पसीज सा गया” लगा ये बेचारे किसी के तो कुछ लगते ही होंगे ।

अनुश्री ने उसके हाथ अपने हाथों में ले लिए। उसकी आवाज़ में कोमलता और शक्ति दोनों का स्पर्श था।

“केतन... बड़े बड़े हारी मान लेते हैं जो तुमने किया है वो किसी के बस का नहीं”

केतन ने धीरे से सिर झुकाया। उसकी आँखें नम हो गईं।

“अनु... कभी-कभी लगता है... क्या करवाएगी ये बीमारी, और क्या क्या देखना बाकी रह गया है?”

अनुश्री ने उसके गाल पर हल्का हाथ रखा। उसकी आँखों में समझदारी और करुणा की चमक थी।

“केतन... जो होगा देखा जाएगा, तुम अकेले नहीं हो। मैं यहाँ हूँ, और हमेशा रहूँगी।”

कतई आँखों से आँसू टपकते ही केतन ने अचानक अनुश्री की ओर झुक कर उसे आलिंगन कर लिया।

अनुश्री ने उसे धीरे से गले लगा लिया, उसके सिर पर हाथ फेरते हुए। कमरे में एक शांत और सुरक्षित ऊर्जा फैल गई।

केतन ने लगभग बीस मिनट तक उसी अवस्था में रहकर अपने भीतर की बेचैनी और भय को धीरे-धीरे शांति में बदलने दिया।

उस छोटे-से कमरे में जैसे समय ने अपने कदम रोक दिए थे। केतन का सिर अनुश्री के कंधे पर टिका था और उसकी साँसें धीरे-धीरे अपनी बिखरी हुई लय वापस पा रही थीं। अनुश्री की हथेलियों की गर्माहट उसके सिर से होकर जैसे सीधे उसके भीतर उतर रही थी।

अनुश्री ने उसे वैसे ही थामे रखा। उसके हाथों की धीमी हरकतों में कोई जल्दबाज़ी नहीं थी, केतन को महसूस हुआ कि वह कितने दिनों से अपने भीतर पत्थर बनता जा रहा था। उसे लग रहा था जैसे किसी ने उसके भीतर लंबे समय से कसकर बंधी गाँठों को धीरे-धीरे खोलना शुरू कर दिया हो।

कमरे की हल्की पीली रोशनी केतन के चेहरे पर पड़ रही थी। उसकी आँखों में वही कोमल स्थिरता थी जो तूफ़ान के बीच किनारे जैसी लगती है। केतन ने धीरे से आँखें बंद कर लीं। उसे महसूस हुआ कि अनुश्री की धड़कनें उसके सीने से टकराकर एक नई शांति का निर्माण कर रही हैं। उस क्षण दोनों के बीच की सारी सीमाएँ टूट चुकी थीं। वहाँ न बीमारी का भय था, न नियमों का बोझ, न भविष्य की चिंता। बस दो थके हुए मन थे, जो एक-दूसरे की उपस्थिति में कुछ देर के लिए संसार का भार उतार देना चाहते थे।

धीरे-धीरे केतन की उँगलियों की पकड़ ढीली हुई, लेकिन उसका सिर अब भी अनुश्री के कंधे से लगा रहा। कमरे में फैली निस्तब्धता अब बोझिल नहीं, सुकून भरी लग रही थी। उस पल वे दोनों उस भयावह दुनिया से कुछ दूर निकल आए थे। अनुश्री की हथेली अब भी उसके बालों पर ठहरी थी और केतन को लग रहा था जैसे लंबे अँधेरे के बाद किसी ने उसके भीतर एक छोटा-सा दीपक जला दिया हो।

कमरे की खिड़की के पल्लों से छनकर आती सुबह की वो पहली पीली धूप, जो सीधे बिस्तर के कोने पर बिखरी थी, उसमें धूल के महीन कण तैर रहे थे। कानपुर की वो सुबह रोज़ जैसी नहीं थी। हवा में अब भी एक अजीब सा भारीपन था, जैसे शहर ने रात भर जागकर कोई बहुत बड़ा दंश झेला हो, मगर उस धूप की छुआन में एक दिलासा भी था। केतन ने जब धीरे से अपनी आँखें खोलीं, तो उसे सबसे पहले अनुश्री की साँसों

की वो धीमी, लयबद्ध आवाज़ सुनाई दी जो कमरे के सन्नाटे को बेहद आहिस्ता से काट रही थी। अनुश्री वहीं पास रखी कुर्सी पर सिर टिकाए सो रही थी। उसके चेहरे पर थकान की नीली लकीरें साफ दिख रही थीं, आँखों के नीचे जागने के काले घेरे थे, मगर उसकी उंगलियाँ अब भी केतन के हाथ के एक हिस्से को छुए हुए थीं—जैसे नींद की आगोश में भी उसे यह डर हो कि कहीं केतन किसी अनजाने सन्नाटे में दोबारा न खो जाए।

केतन ने बिना हिले-डुले, सिर्फ अपनी नजरों से अनुश्री के उस शांत चेहरे को देखा। ऐसा नहीं था कि दर्द चला गया था; दर्द वहीं था, कलेजे के किसी कोने में धंसा हुआ, मगर अनुश्री की इस मौजूदगी ने उस रिसते हुए जख्म के ऊपर एक मरहम जैसी ठंडी परत चढ़ा दी थी।

अनुश्री की पलकें धीरे से हिलीं और उसने अपनी आँखें खोलीं। केतन को जागता हुआ और अपनी तरफ देखता हुआ पाकर उसकी आँखों में एक पल के लिए वही पुरानी घबराहट आई, उसने अपनी सूजी हुई आँखों से केतन को देखा, और उसके होंठों पर एक ऐसी मुस्कान तैर गई जिसे शब्दों में ढालना मुमकिन नहीं था। उसने केतन का हाथ थोड़ा और कसकर थाम लिया, मानो वह यह तसल्ली कर रही हो कि जो सामने है, वह कोई ख्वाब नहीं, हकीकत है।

"तबीयत कैसी है अब? रात में बुखार तो नहीं आया?" अनुश्री की आवाज़ में फिक्र की मिठास थी, जो बनावट से कोसों दूर होती है। वह आवाज़ जो भारी थी, पर उसमें एक ऐसी आत्मीयता थी जो सीधे रूह में उतरती चली गई।

केतन ने सिर्फ ना में सिर हिलाया। उसके हलक से आवाज जैसे फूटने को तड़प रही थी, पर शब्द कम पड़ रहे थे। उसने अनुश्री के हाथ को अपने माथे से लगा लिया। । इस एक पल में, उन दोनों के बीच एक अजीब सी, बिल्कुल नई 'जागृति' का जन्म हो चुका था।

दोनों के बीच का मौन इतना गहरा था कि कमरे की दीवारों पर टंगी घड़ी की सुइयाँ भी जैसे ठहर कर इस पल को देखना चाहती थीं। महामारी ने भले ही चेहरों पर मास्क लगा दिए थे, लोगों को एक-दूसरे से दूर छिटक दिया था, रिश्तों के बीच अविश्वास की एक दीवार खड़ी कर दी थी—मगर इस वक़्त, इस कमरे के भीतर, केतन और अनुश्री के बीच

की हर दूरी, हर झिझक पिघलकर गंगा जी के पानी जैसी निर्मल हो चुकी थी। उनके भीतर अब कोई हड़बड़ाहट नहीं थी, न आगे की कोई चिंता। बस एक ठहराव था, जैसे कोई नाव बनारस के घाटों से निकलकर गंगा के शांत पानी में बिना पतवार के बह रही हो।

भैरव घाट की भयावह स्मृतियाँ धीरे-धीरे धुंधली पड़ने लगी थीं, लेकिन उन दिनों ने केतन और अनुश्री के बीच एक ऐसा बंधन गढ़ दिया था जिसे शब्दों में बाँधना आसान नहीं था। वह प्रेम अचानक नहीं आया था; वह अनगिनत जागी हुई रातों, साझा भय, मौन प्रार्थनाओं और एक-दूसरे की उपस्थिति से उपजा था। ऐसा लगता था मानो जीवन ने दोनों की आत्माओं को अलग-अलग रास्तों से चलाकर एक ही किनारे पर ला खड़ा किया हो।

कुछ दिनों बाद जब केतन पहली बार पूरी तरह स्वस्थ होकर मोतीझील पहुँचा, तो अनुश्री पहले से ही उसी पुरानी बेंच पर बैठी थी। झील का पानी हल्की हवा से काँप रहा था और पेड़ों की परछाइयाँ लहरों पर बिखर रही थीं।

केतन उसके पास बैठ गया।

“जानती हो अनु,” उसने मुस्कुराते हुए कहा, “पहले मैं यहाँ शोर सुनने आता था। अब तुम्हारे साथ बैठकर खामोशी सुनने आता हूँ।”

अनुश्री ने उसकी ओर देखा और धीरे से बोली, “शायद इसलिए कि अब तुम्हारे भीतर का शोर कम हो गया है।”

दोनों हल्के से हँस पड़े। फिर लंबे समय तक किसी ने कुछ नहीं कहा। उनके बीच मौन भी संवाद बन चुका था।

धीरे-धीरे यह उनकी दिनचर्या बन गई। शाम ढलते ही दोनों मोतीझील पहुँच जाते। कभी घंटों पानी को निहारते रहते, कभी बच्चों को खेलते देखते, कभी दूर उड़ते पक्षियों के पीछे अपनी कल्पनाएँ भेज देते। राहगीरों को वे बस दो शांत लोग दिखाई देते, लेकिन उनके भीतर भावनाओं का एक पूरा संसार बहता रहता।

एक दिन चाय की कुल्हड़ हाथ में लिए अनुश्री ने पूछा, “अगर तुम्हें जीवन दोबारा शुरू करने का मौका मिले, तो सबसे पहले क्या बदलोगे?”



केतन ने बिना सोचे उत्तर दिया, “कुछ भी नहीं... क्योंकि अगर रास्ते बदल गए होते, तो शायद मैं तुम तक नहीं पहुँच पाता।”

अनुश्री की आँखें कुछ पल के लिए झुक गईं। उसने कहा, “फिर तो मैं भी अपने सारे दुख सँभाल कर रखूँगी... क्योंकि वही मुझे तुम्हारे पास लाए।”

उस दिन मोतीझील की हवा कुछ और ही मधुर लगी।

समय बीतने लगा। लोगों ने ध्यान देना शुरू किया कि दोनों लगभग रोज़ साथ दिखाई देते हैं। लेकिन उनके संबंध में कोई दिखावा नहीं था। वे भीड़ में भी एक-दूसरे के लिए शांत आश्रय थे। कभी-कभी घंटों तक केवल किताबें पढ़ते रहते। कभी किसी पुराने गीत की दो पंक्तियाँ याद करके मुस्कुरा देते।

केतन के भीतर एक गहरा परिवर्तन आ चुका था। जो युवक कुछ समय पहले मृत्यु और निराशा के दृश्यों से टूटने लगा था, वही अब हर सुबह नए उत्साह से उठता। उसे लगता जैसे जीवन ने उसे दूसरा अवसर दिया हो, और उस दूसरे अवसर का सबसे सुंदर रूप अनुश्री की संगति में प्रकट हुआ हो।

एक शाम सूरज लालिमा बिखेर रहा था। केतन ने बहुत धीमे स्वर में कहा, “अनु, लोग कहते हैं भगवान मंदिरों में मिलते हैं। मुझे लगता है, भगवान वहाँ मिलते हैं जहाँ कोई बिना शर्त तुम्हारा दुःख अपने हिस्से का बना ले।”

अनुश्री ने उसकी बात ध्यान से सुनी। फिर मुस्कुराकर बोली, “और मुझे लगता है भगवान हमें इसलिए मिलते हैं ताकि हम एक-दूसरे के लिए सहारा बन सकें।”

“तो क्या तुम मेरे लिए वही हो?”

“अगर तुम्हें जीवन की ओर वापस ले आई हूँ,” उसने सहजता से कहा, “तो शायद ईश्वर ने मुझे उसी काम के लिए भेजा होगा।”

केतन ने उत्तर नहीं दिया। उसकी आँखों में कृतज्ञता थी, जैसे उसे अपने प्रश्न का उत्तर मिल चुका हो।

उनका प्रेम अब शब्दों से आगे निकल चुका था। वह अधिकार से अधिक विश्वास था, आकर्षण से अधिक अपनापन था, और निकटता से अधिक

आत्मीयता। कई बार दोनों को लगता कि वे दो अलग व्यक्तित्व नहीं, बल्कि एक ही विचार की दो अभिव्यक्तियाँ हैं—एक बोलता तो दूसरा बिना सुने समझ जाता, एक उदास होता तो दूसरे की आँखें स्वयं नम हो जातीं।

कभी-कभी शाम गहरा जाती और पार्क लगभग खाली हो जाता। तब अनुश्री आकाश में चमकते पहले तारे की ओर इशारा करके कहती, “देखो, कितना अजीब है... पूरी रात में लाखों तारे होते हैं, लेकिन आँख सबसे पहले उसी एक को खोज लेती है।”

केतन मुस्कुराकर उत्तर देता, “शायद प्रेम भी ऐसा ही होता है। दुनिया में करोड़ों लोग होते हैं, पर मन किसी एक को अपना आसमान मान लेता है।”

हवा में खामोशी तैरती रहती, झील की सतह पर हल्की लहरें उठतीं और दोनों उसी बेंच पर बैठे रहते—घंटों, बिना किसी जल्दी के। उनके लिए समय मानो अपनी गति खो चुका था। जीवन की भागदौड़, महामारी की भयावह स्मृतियाँ, भविष्य की अनिश्चितताएँ—सब कुछ उस शांत जल के किनारे कुछ देर के लिए ठहर जाता।

मोतीझील अब उनके लिए केवल एक जगह नहीं रह गई थी। वह उनके प्रेम की मौन साक्षी बन चुकी थी—वह जगह, जहाँ दो अनजान-सी आत्माओं ने एक-दूसरे में भरोसा पाया था; जहाँ टूटते हुए हौसले को फिर से जीने की वजह मिली थी और जहाँ केतन ने पहली बार महसूस किया था कि जीवन के सबसे बड़े चमत्कार किसी असाधारण घटना में नहीं, बल्कि उस हाथ में छिपे होते हैं, जो सबसे कठिन समय में भी आपका साथ छोड़ने से इनकार कर दे।

मोतीझील के किनारे बैठकर केतन को अक्सर लगता कि प्रेम केवल दिल में जन्म लेने वाला कोई भाव नहीं है। प्रेम तो वह शांत और उजली शक्ति है, जो इंसान को उसके भीतर से बदल देती है। जो टूट चुका हो, उसे फिर से जोड़ देती है; जो हार चुका हो, उसके भीतर उम्मीद जगा देती है और जो अकेला पड़ गया हो, उसे यह विश्वास दिलाती है कि इस दुनिया में अब भी कोई है, जो उसके साथ खड़ा है।

शायद इसी वजह से मोतीझील की हर लहर, हर हवा का झोंका और वहाँ बिताया हुआ हर पल अब केतन के लिए सिर्फ एक स्मृति नहीं था। वह उसके जीवन का वह हिस्सा बन चुका था, जिसे वह चाहकर भी अपने से अलग नहीं कर सकता था।



## भाग – 3



## अस्सी की सुबह और स्मृतियों का विसर्जन

वर्ष 2023 की एक अलसायी हुई, मखमली भोर थी। समय की सुई अपने स्वभाव के अनुसार **लगभग दो साल आगे खिसक** चुकी थी। कोविड का दौर थम चुका था पर इन दो वर्षों ने केतन के जीवन का भूगोल भी बदला था और उसके भीतर के पुराने कोलाहल को एक शांत, गंभीर नदी में तब्दील कर दिया था। जीवन की पिछली उथल-पुथल और अतीत के वो भारी दिन—सब कुछ जैसे काल के कपाल पर दर्ज होकर बहुत पीछे छूट चुके थे। केतन अब आगे बढ़ चुका था, पर उसके भीतर की रूह अब भी किसी ऐसे उत्तर की तलाश में थी जो उसे ठहराव दे सके।

और शायद इसीलिए, वह इस समय बनारस के अस्सी घाट की सबसे ऊपरी पक्की सीढ़ी पर, घुटनों को मोड़े, दोनों हाथों में मिट्टी का कुल्हड़ थामे बैठा था।

'सुबह-ए-बनारस' अपने पूरे अनूठे शबाब पर थी। अस्सी घाट का चरित्र किसी एक रंग में रंगा नहीं था, वह तो जीवन और एकांत के बीच की धूप-छाँव का एक अल्हड़ अखाड़ा था। अस्सी का अल्हड़पन ही उसकी आत्मा है—यहाँ की हवा में एक ऐसी बेफिक्री घुली है जो दुनिया के किसी कोने में नहीं मिलती। घाट के एक छोर पर जहाँ पीतांबरी पहने, माथे पर त्रिपुंड लगाए वैदिक बटुक भारी कछुआ-दीपक हाथों में थामे, पूरे ओज और सस्वर मन्त्रोच्चार के साथ गंगा आरती कर रहे थे; डमरू की थाप और शंखनाद से अस्सी का आकाश थरथरा रहा था। तो वहीं ठीक बगल में, उसी सीढ़ी पर एक अवधूत अपनी फटी गूदड़ी बिछाए, एक आँख मूँदे, भांग की तरंग में मगन होकर जाने किस शून्य को निहार रहा था। विदेशी सैलानियों का एक दल कैमरों के महंगे लेंस सँभाले इस रहस्यमयी संस्कृति को विस्मय से देख रहा था, और उनके ठीक पीछे दो स्थानीय नवयुवक 'हर हर महादेव' का हुंकार भरकर गंगाजी में ऐसी अल्हड़ छलांग लगा रहे थे मानो ब्रह्मांड का सारा सुख इसी एक डुबकी में सिमट आया हो। यहाँ वैराग्य भी अल्हड़ था और उल्लास भी। 'पप्पू चाय वाले' की अड़ी जैसी तरंग यहाँ हर चेहरे पर तैर रही थी—जहाँ

राजनीति से लेकर अध्यात्म तक पर ऐसा बेबाक शास्त्रार्थ चल रहा था कि वक्त्र भी थमकर कहे, "गुरू, ज़रा चाय की चुस्की पूरी कर लेने दो!"

केतन ने कुल्हड़ से उठती अदरक और इलायची की भाप को अपनी साँसों में समेटा। गरमाहट उसके हलक से उतरती हुई छाती तक गई, तो उसकी नजरें सामने पसरी हुई अनंत, नीली गंगा पर ठहर गईं। गंगा की लहरों को देखते ही केतन का मन अनायास ही अपनी जड़ों की ओर, यानी कानपुर के घाटों की तरफ दौड़ गया।

कैसा अद्भुत कंट्रास्ट था! कहाँ बनारस के ये भव्य, कलात्मक और विशाल पक्के घाट—जहाँ सदियों का इतिहास, राजा-महाराजाओं के वैभव और संतों की तपस्या हर एक पत्थर पर नक्काशी बनकर उत्कीर्ण थी, और कहाँ उसके अपने कानपुर के घाट! केतन को सरसैया घाट, अटल घाट और भैरव घाट की याद आई। कानपुर के घाटों पर बनारस जैसी दार्शनिकता या भव्य उत्सवधर्मी चकाचौंध नहीं थी; वहाँ तो एक अजीब सी औद्योगिक अक्खड़ता, श्रम की महक और निश्छल, ठेठ देसीपन था। कानपुर की गंगा के किनारों पर मिलों के सायरनों की गूँज, शुक्लागंज के रेतीले धक्के और कनपुरिया 'भौकाल' घुला था। कानपुर के घाटों पर सुबह-सुबह कोई मोक्ष नहीं ढूँढ़ता था, वहाँ तो लड़के पानी में 'पनसोखा' मारकर अपनी मर्दानगी और जिंदादिली का ढिंढोरा पीटते थे। कानपुर के घाट केवल शांत वैराग्य के गवाह नहीं थे, वे संघर्ष के गवाह थे। लेकिन बनारस? बनारस तो विसर्जन को भी महा-उत्सव बना देता था। कानपुर के घाटों पर गंगा एक कर्मठ साझीदार की तरह कनपुरियों के पसीने और उनके संघर्षों को धोती थी, जबकि बनारस में आकर वही गंगा जीवन की अंतिम यात्रा का आलिंगन बन जाती थी। कानपुर की गंगा में कर्म का वेग था, तो काशी की गंगा में विश्राम का ठहराव।

तभी अस्सी के घाट पर दूर से आते डमरू के नाद के साथ 'हर हर महादेव' का एक ऐसा गगनभेदी जयकारा गूँजा जिसने केतन के विचारों की तंद्रा को भंग कर दिया। यह उद्घोष बाबा विश्वनाथ की नगरी के उस केंद्र से आ रहा था, जो इस पूरे शहर की धड़कन है। केतन का ध्यान बाबा काशी विश्वनाथ के उस नव-निर्मित भव्य गलियारे की ओर गया, जिसने काशी के प्राचीन स्वरूप को आधुनिकता के साथ एक



अद्भुत धागे में पिरो दिया था। काशी विश्वनाथ केवल एक मंदिर नहीं थे, वे तो इस शहर के राजा थे और यहाँ का हर नागरिक उनका गण। केतन ने महसूस किया कि काशी का बाबा विश्वनाथ से वही रिश्ता है जो एक बच्चे का अपनी माँ की गोद से होता है। चाहे जीवन में कितनी ही उथल-पुथल क्यों न हो, जब जीव विश्वनाथ की चौखट पर माथा टेकता है, तो उसके सारे संताप, सारे घाव उसी गर्भगृह के सन्नाटे में विलीन हो जाते हैं। बाबा का वह स्पर्श, वह भस्म, और वह चंदन—मनुष्य को यह अहसास करा देता है कि संसार में जो कुछ भी छूट रहा है, वह सिर्फ एक भ्रम है; शाश्वत तो केवल यह शिवत्व है।

अस्सी घाट की ठंडी, पुरवा हवा के एक झोंके ने जब केतन के चेहरे को छुआ, तो उसने अपनी आँखें बंद कर लीं। इन दो सालों में उसने दुनिया की भागदौड़ में चाहे जो रास्ता चुना हो, लेकिन केतन के भीतर का वह लड़का, जो कानपुर की गलियों से निकला था, आज यहाँ अस्सी पर आकर जैसे पूरी तरह पिघल गया था।

गंगा की लहरों पर सुबह की पहली किरणें सोने की तरह बिखर रही थीं और उन लहरों पर श्रद्धालुओं द्वारा छोड़े गए मिट्टी के छोटे-छोटे दीये तैर रहे थे। केतन ने उन दीयों को देखा। कुछ दीये लहरों के थपेड़ों से बुझ रहे थे, तो कुछ पूरी जिंदादिली से लहरों की छाती पर सवार होकर आगे बढ़े जा रहे थे। उसने महसूस किया कि उसकी जिंदगी भी तो इसी गंगा जैसी है—कानपुर की ऊबड़-खाबड़ गलियों, मिलों के कोलाहल और जीवन के थपेड़ों से बहती हुई, आज काशी के इस शांत, गंभीर और आध्यात्मिक किनारे पर आकर ठहर गई थी।

अस्सी के इस घाट ने, बाबा विश्वनाथ की इस हवा ने, उसके अतीत के सारे भारीपन को अपने भीतर समेट कर उसे पूरी तरह खाली कर दिया था। अब भीतर सिर्फ एक गहरी, शांत जागृति थी। यह वो चेतना थी जो जीवन के सबसे कठिन दौर से गुजरने के बाद भीतर उतरती है। केतन को अब समझ आ रहा था कि जीने के असली मायने क्या हैं। जिंदगी का असली सत्य इस बहते हुए प्रवाह में था, जो बिना कुछ कहे, बिना कोई वादा किए, आगे बढ़ता जाता है।

केतन ने कुल्हड़ की आखिरी चुस्की ली, मिट्टी के उस पात्र को घाट के एक कोने में रखा, और गंगा मैया को हाथ जोड़कर प्रणाम किया। अतीत

का विसर्जन हो चुका था। 2023 की सुबह ने केतन को एक नया जीवन, एक नया दृष्टिकोण दे दिया था। वह सीढ़ियों से नीचे उतरा, उसकी चाल में कानपुर का वह पुराना अल्हड़पन था, और आँखों में काशी का ठहराव।

अस्सी घाट की उस दार्शनिक जागृति को फोन की एक तीखी वाइब्रेशन और घंटी की सुरीली धुन ने झटके में भंग कर दिया।

केतन ने अपनी जेब से फोन निकाला। स्क्रीन की चमकीली सतह पर एक नाम चमक रहा था—'निशा'।

उसने स्क्रीन स्वाइप कर फोन कान से लगाया। उधर से बेहद कोमल लहजे में एक लड़की की आवाज आई, "केतन सर! कहाँ हैं आप? यहाँ इंस्टिट्यूट पर सारी तैयारियाँ पूरी हो चुकी हैं। उद्घाटन का समय करीब आ रहा है और अतिथि भी आने लगे हैं। सब आपका ही इंतजार कर रहे हैं।"

केतन के चेहरे पर एक मुस्कान तैर गई। उसने गंगा की आखिरी लहर को प्रणाम करते हुए कहा, "बस निशा, पहुँच रहा हूँ। पाँच मिनट।"

फोन रखकर केतन अस्सी घाट की पक्की सीढ़ियों को लांघता हुआ तेजी से बाहर मुख्य सड़क की ओर आ गया। उसने चलते-चलते ही अपने ड्राइवर को फोन मिलाया। जैसे ही वह घाट के बाहर पहुँचा, भीड़ को चीरती हुई काले रंग की चमचमाती हुई फॉर्च्यूनर कार ठीक उसके सामने आकर रुकी। कार पर बनारस की सुबह की धूप सोने की तरह चमक रही थी। ड्राइवर ने फुर्ती से नीचे उतरकर पीछे का दरवाजा खोला। केतन कार के भीतर बैठा और मखमली सीट पर टिक गया। कार बनारस की संकरी पर जीवंत गलियों से निकलकर, लंका चौराहे की भीड़भाड़ को सलीके से काटती हुई आगे बढ़ चली।

लंका चौराहे पर मालवीय जी की प्रतिमा को पार करते ही कार एक आलीशान, आधुनिक इमारत के सामने आकर रुकी, जिसे गेंदे के फूलों और गुब्बारों से बेहद सुंदर तरीके से सजाया गया था। मुख्य द्वार पर बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा था—'KSLS'।

जी हाँ, यह KSLS की 12वीं शाखा (ब्रांच) थी, जिसके भव्य उद्घाटन के अवसर पर आज केतन खुद बनारस आया हुआ था। इमारत के बाहर अभी से ही विद्यार्थियों और उनके अभिभावकों की एक लंबी कतार लगी

हुई थी। लोग सुबह से ही प्रवेश (एडमिशन) के लिए फॉर्म थामे अपनी बारी की प्रतीक्षा कर रहे थे। बनारस की इस नई शाखा में प्रवेश पाने की यह होड़ कोई नई बात नहीं थी, पिछले दो सालों में देश के हर कोने में यही दृश्य आम हो चुका था।

पिछले दो साल केतन के लिए किसी जादुई और अकल्पनीय स्वप्न जैसे थे। इन दो सालों में देश के अलग-अलग हिस्सों में 11 शाखाएँ पहले ही खुल चुकी थीं और यह 12वीं शाखा काशी की पावन धरती पर कदम रख रही थी। महामारी के उस भीषण दौर ने जब पूरी दुनिया की रफ्तार थाम दी थी, तब हर कोई सहमा हुआ था। लेकिन केतन? केतन ने उस संकट को एक आपदा नहीं, बल्कि एक गहरी सुधारवादी चुनौती की तरह लिया था। जीवन और मृत्यु को इतने करीब से देखने के बाद उसके भीतर का डर हमेशा के लिए समाप्त हो गया था। और जिस मनुष्य के भीतर से असफलता का भय निकल जाए, उसे हराना असंभव हो जाता है।

संकट का वह कठिन दौर खत्म होते ही, जहाँ दूसरे व्यवसायी मंदी के डर से संभल-संभल कर कदम रख रहे थे, वहीं केतन ने एक ऐसी लंबी और साहसी छलांग लगाई जिसने पूरे शिक्षा बाजार को चौंका दिया। उसने कानपुर की उस ठेठ जिंदादिली को अपनी व्यावसायिक नीति का हिस्सा बनाया—यानी जोखिम लेने से कभी न डरना। केतन ने देखा कि पारंपरिक शिक्षा प्रणाली युवाओं को केवल डिग्रियाँ दे रही थी, रोजगार नहीं। उसने जमीनी सच्चाई को समझा, लोगों की बदली हुई आवश्यकताओं को परखा और KSLS के पाठ्यक्रम को पूरी तरह व्यावहारिक और उद्योग-केंद्रित बना दिया।

KSLS का यह नया प्रयोग एक बहुत बड़ी क्रांति साबित हुआ। केतन ने केवल पढ़ाया नहीं, बल्कि कॉर्पोरेट जगत की सीधी माँग के अनुसार युवाओं को तैयार किया। परिणाम यह हुआ कि देश की बड़ी-बड़ी कंपनियों ने KSLS के छात्रों को हाथों-हाथ लेना शुरू कर दिया। देखते ही देखते KSLS पूरे देश में 'सबसे अधिक प्लेसमेंट देने वाला इंस्टिट्यूट' बन गया। सफलता का यह आंकड़ा इतना प्रामाणिक और शत-प्रतिशत था कि युवा इस पर आँख मूँदकर विश्वास करने लगे।

यही कारण था कि अब KSLS की किसी भी नई शाखा के खुलने से पहले ही वहाँ प्रवेश के लिए कतारें लगनी शुरू हो जाती थीं। माता-पिता को लगता था कि अगर बच्चे का दाखिला KSLS में हो गया, तो उसका भविष्य सुरक्षित है। सीट सीमित थीं और चाहने वाले हजारों, इसलिए हर शाखा के बाहर सुबह से ही एक मेला सा लग जाता था।

यह केतन के उस अटूट संकल्प की कहानी थी जो राख से उठकर आसमान छूने की शक्ति रखती थी। आज वह सिर्फ एक व्यवसायी नहीं था, बल्कि शिक्षा जगत का एक चमकता हुआ सितारा बन चुका था जिसकी गति को भांपना किसी के बस की बात नहीं थी।

कार का दरवाजा खुला तो वहाँ सबसे आगे अभय सिंह खड़े थे, जो KSLS के मुख्य समन्वयक (को-ऑर्डिनेटर) थे। अभय सिंह ने आगे बढ़कर पूरे आदर के साथ केतन का स्वागत किया। उनके ठीक बगल में निशा हाथ में फूलों का गुलदस्ता लिए खड़ी थीं, और उनके पीछे इंस्टिट्यूट के नवनियुक्त शिक्षकों की पूरी टीम और सैकड़ों उत्साही छात्र-छात्राएं मौजूद थे।

कतार में खड़े छात्रों और उपस्थित शिक्षकों ने जब अपने मार्गदर्शक—केतन को देखा, तो पूरा परिसर 'हर हर महादेव' के गगनभेदी जयकारों और तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज उठा। अभय सिंह और निशा ने केतन को भीतर आने का रास्ता दिया। केतन ने कार से बाहर कदम रखा, कैमरों की रोशनियाँ चमकीं और केतन अपनी पूरी टीम और छात्रों के इस अपार स्नेह को स्वीकार करते हुए, बनारस के इस नए क्षेत्र को जीतने के लिए आगे बढ़ गया।

KSLS की इस 12वीं शाखा की भव्यता सचमुच देखते ही बनती थी। बनारस की प्राचीन, सनातन चेतना के बीच यह गगनचुंबी इमारत आधुनिकता और उन्नत तकनीक का एक अद्भुत जयघोष थी। विशाल दीवारें, कलात्मक इंटीरियर्स और छतों से लटकती हुई आधुनिक रोशनियाँ पूरे परिसर को एक दिव्य और ऊर्जावान चमक से सराबोर कर रही थीं। चारों ओर लगी बड़ी-बड़ी डिजिटल स्क्रीनों पर इंस्टिट्यूट की गौरवशाली उपलब्धियाँ और इतिहास रचने वाले छात्रों के प्लेसमेंट के आँकड़े दहाड़ रहे थे। अत्याधुनिक कंप्यूटर लैब्स, ऊँचे और हवादार व्याख्यान कक्ष (क्लासरूम्स) और हर एक कोने से उठती हुई एक

अदम्य सकारात्मक ऊर्जा—यह परिसर चीख-चीख कर गवाही दे रहा था कि यहाँ केवल कागजी डिग्रियाँ नहीं बांटी जातीं, बल्कि यहाँ युवाओं के भाग्य और उनके सपनों को गढ़ा जाता है।

परिसर की इस बेजोड़ भव्यता को निहारते हुए केतन बिना एक पल भी रुके, पूरी शालीनता, आत्मविश्वास और सँभले हुए कदमों से सीधे मुख्य सभागार की ओर बढ़ा और मंच (स्टेज) पर चढ़ गया। मंच पर आते ही उसने पोज़ियम पर रखा माइक अपने हाथ में थाम लिया।

उस समय नीचे का दृश्य रोंगटे खड़े कर देने वाला था। अभय सिंह, निशा, इंस्टिट्यूट के सभी नवनियुक्त प्राध्यापक और सैकड़ों छात्र-छात्राएं अपनी सांसें रोके, अत्यंत उत्सुकता और श्रद्धा से केतन को सुनने के लिए आँखें टिकाए बैठे थे। पूरे सभागार में एक ऐसा सन्नाटा छा गया था, मानो हवा ने भी बहना रोक दिया हो। केतन ने एक बार अपनी गहरी नजरों से सामने बैठे उस जनसैलाब को देखा, माइक को थोड़ा पास लाया, उसकी मुट्ठी कसी और एक बेहद जोशीली तथा भावपूर्ण आवाज में बोलना प्रारंभ किया:

"हर हर महादेव!

आज बाबा विश्वनाथ की इस पावन, अविनाशी नगरी में, माँ गंगा के साक्षीत्व में खड़े होकर जब मैं आप सबकी आँखों में कुछ कर गुजरने की छतपटाहट देख रहा हूँ, तो मेरे भीतर का युवा केतन भी हिलोरें मार रहा है! आज आप KSLS की इस चमचमाती हुई इमारत को देख रहे हैं, इसकी भव्यता को देख रहे हैं, देश भर में गूँजती इसकी 12 शाखाओं को देख रहे हैं। लेकिन मेरे भाई-बहनों... मैं आज आपको इस मंच से यह बताने आया हूँ कि KSLS केवल ईंट, गारे, पत्थर और काँच से बनी कोई निर्जीव इमारत नहीं है! KSLS एक जिद्दी विचार है, एक ऐसा जलता हुआ संकल्प है, जो जीवन के सबसे घने और सबसे काले अंधेरे की छाती चीरकर बाहर निकला है!

आज से ठीक दो साल पहले याद कीजिए... जब पूरी दुनिया घुटनों पर आ चुकी थी, जब समय सहमकर थम गया था, तब हम सबने एक बेहद खौफनाक और जानलेवा दौर का सामना किया था। एक ऐसा समय, जब हमारे अपनों की सांसें दांव पर थीं, जब भविष्य के नाम पर केवल गहरा सन्नाटा और निराशा थी। मैंने भी उस आग में तपकर अपने जीवन

का एक बहुत बड़ा हिस्सा खोया है। मैंने अपने सबसे अजीज भाई, अपने मित्र ऋषभ को खोया, जिसकी मुस्कुराती हुई तस्वीर आज बाहर प्रवेश द्वार पर हमारे हौसलों को देख रही है। उस कठिन दौर ने मुझे जीवन का सबसे बड़ा सच सिखाया। उसने मुझे सिखाया कि जब परिस्थितियाँ आपको तोड़ने के लिए अपनी पूरी ताकत लगा दें, जब संघर्ष आपकी चरम सीमा पर हो, तब आपके पास केवल दो ही विकल्प बचते हैं—या तो आप कायरों की तरह घुटने टेककर परिस्थितियों के गुलाम बन जाएं, या फिर उन थपेड़ों की आँखों में आँखें डालकर सीना तानकर खड़े हो जाएं और चीखकर कहें कि 'तुम चाहे जितना प्रहार कर लो, मेरा हौसला तोड़ने की औकात तुम्हारे संकट में नहीं है!'

याद रखना मेरे दोस्तों, संघर्ष का मतलब केवल सुबह से शाम तक गधे की तरह मेहनत करना नहीं होता। संघर्ष का असली और जीवंत अर्थ है—अपनी असफलताओं के मलबे पर, अपनी राख पर खड़े होकर फिर से एक नया आसमान छूने का अटूट माद्दा रखना! जब मैंने KSLS की नींव रखने की सोची थी, तो दुनिया मुझ पर हंसती थी। मेरे पास कोई बहुत बड़ा बैंक बैलेंस नहीं था, न ही बड़े-बड़े उद्योगपतियों का वरदहस्त था। मेरे पास अगर कुछ था, जोखिमों से टकरा जाने का अक्खड़पन और आँखों में एक ज़िद... एक ऐसी तड़प कि मुझे इस देश के युवाओं को उस सड़े-गले ढर्रे से बाहर निकालना है जहाँ डिग्रियाँ तो अलमारी में सजती हैं, पर हाथ रोजगार के लिए तरसते हैं!

KSLS की सबसे बड़ी विशेषता यह नहीं है कि यह आज पूरे भारतवर्ष में 'सबसे अधिक प्लेसमेंट देने वाला नंबर वन इंस्टिट्यूट बन चुका है। हमारी असली ताकत, हमारी रीढ़ की हड्डी हमारा वह पाठ्यक्रम और हमारी सोच है, जो किताबी पन्नों से नहीं, बल्कि जिंदगी की भट्टी में जलकर और बाजार की कड़वी हकीकत को परखकर तैयार की गई है।

और इस महान यात्रा में, जो सबसे पवित्र, सबसे मजबूत धागा है, वह है—एक शिक्षक और एक छात्र का आत्मीय संबंध! हमारे KSLS में शिक्षक केवल वेतन के लिए ब्लैकबोर्ड पर चॉक घिसने वाले मार्गदर्शक नहीं हैं, वे आपके जीवन के कुरुक्षेत्र में आपके कृष्ण हैं, आपके सारथी हैं! गुरु और शिष्य का संबंध यहाँ केवल क्लासरूम की दीवारों तक सीमित नहीं रहता। यह वह खून का रिश्ता है जो छात्र के भीतर छुपे हुए

डर और उसकी हीनभावना को लात मारकर बाहर निकालता है और उसे एक विजेता में बदल देता

मैं आज काशी के अपने सभी युवा शेरों से, यहाँ बैठे एक-एक छात्र से बस यही आह्वान करने आया हूँ—जिंदगी कभी भी मखमली रास्तों पर नहीं चलती। रास्ते ऊबड़-खाबड़ होंगे, चुनौतियाँ आएंगी, कभी-कभी ऐसा मोड़ भी आएगा जब लगेगा कि अब सब कुछ खत्म हो चुका है, अब कोई रास्ता नहीं बचा। लेकिन उस वक्त आँखें बंद करना और याद रखना कि गंगा का प्रचंड प्रवाह पहाड़ों और पत्थरों की बंदिशों से कभी थमता नहीं है, वह चट्टानों को चीरकर अपना रास्ता खुद बनाता है! जोखिम लेने से कभी मत डरना! अगर तुम्हारे भीतर सीखने की भूख है, जीतने की ज़िद है और सीने में लड़ने का जज्बा है, तो इस ब्रह्मांड की कोई ताकत तुम्हारी सफलता का रास्ता नहीं रोक सकती!

KSLS तुम्हारी इस लड़ाई में, तुम्हारे हर एक संघर्ष में, तुम्हारी जीत का शंखनाद बनने के लिए तुम्हारे साथ एक वज्र की ढाल बनकर खड़ा है! आइए, आज बाबा विश्वनाथ की इस पवित्र धरती से अपने पुरुषार्थ का एक नया इतिहास लिखें!

उठो, लड़ो और फतह करो! बहुत-बहुत धन्यवाद! हर हर महादेव!"

जैसे ही केतन के मुँह से आखिरी शब्द निकला और उसने माइक पोडियम पर रखा, पूरा सभागार कुछ पलों के लिए एकदम सन्न रह गया। केतन की आवाज का वो जोश और शब्दों में घुली भावुकता सीधे युवाओं के सीने में तीर की तरह उतर चुकी थी। और फिर, अचानक पूरे हॉल में तालियों और गगनभेदी जयकारों का एक ऐसा ज्वालामुखी फटा कि पूरी इमारत हिल उठी! छात्रों की आँखों में अब आँसू भी थे और कुछ कर गुजरने का दावानल भी। अभय सिंह और निशा की आँखें गर्व से नम थीं और वे खड़े होकर लगातार तालियाँ बजा रहे थे। केतन मंच से नीचे उतरा, उसकी आँखों में एक नई चमक थी। आज बनारस की धरती पर KSLS के एक ऐसे अजेय युग का शंखनाद हो चुका था जिसे थामना अब किसी के बस में नहीं था।

उद्घाटन का वह भव्य, ऐतिहासिक और ऊर्जा से ओतप्रोत कोलाहल अब धीरे-धीरे पीछे छूट रहा था। सफलता की गूँज, बधाईयों का ताँता और तालियों की गड़गड़ाहट को अपने भीतर समेटे हुए केतन, निशा

और अभय सिंह अब होटल के लिए प्रस्थान करने वाले थे। बनारस की इस 12वीं शाखा को स्थापित कर केतन ने पूर्वचल के इस सबसे बड़े केंद्र पर अपनी विजय पताका फहरा दी थी। वह कल संध्या तक यहीं काशी की आध्यात्मिक गोद में विश्राम करने वाला था, और इसके ठीक बाद उसे सीधे नैनीताल के लिए प्रस्थान करना था। नैनीताल की वह पहाड़ी शाखा भी अब लगभग पूरी तरह सज-धजकर तैयार थी, जो KSLS के इस स्वर्णिम रथ का अगला पड़ाव बनने जा रही थी। केतन की आँखों में एक सुदूर, गहरी चमक थी; कानपुर की तंग गलियों के बीच जिस सपने का बीज बोया गया था, वह अब नैनीताल की झीलों और वादियों को छूने जा रहा था—उसका वह वर्षों पुराना स्वप्न अब अपनी पूर्णता को प्राप्त कर रहा था।

कार एक बार फिर बनारस की सड़कों पर अपनी गति पकड़ चुकी थी। गाड़ी के भीतर का वातावरण बाहर के कोलाहल और बनारसी धूप से इतर अत्यंत शांत, सुसज्जित और वातानुकूलित था। केतन पीछे की मखमली सीट पर पूरी सहजता से विश्राम की मुद्रा में बैठा हुआ था और निशा ठीक उसके बगल में अपनी डायरी और टैबलेट सँभाले बैठी थी। अभय सिंह आगे ड्राइवर के बगल वाली सीट पर हमेशा की तरह मुस्तैद और सतर्क भाव से विराजमान थे। यहाँ से 'होटल ताज' लगभग तीन किलोमीटर की दूरी पर था, और कार लंका के रास्तों से होती हुई नरिया चौराहे की ओर बढ़ रही थी।

केतन ने अपनी थकान को पीछे ढकेलते हुए सीट पर थोड़ा और आराम से टिक कर कहा, "अभय जी, आज का यह आयोजन केवल एक उद्घाटन नहीं था, यह एक उत्सव था। बनारस की इस धरती पर आपकी और निशा की महीनों की तपस्या आज इस इमारत के कोने-कोने में साफ झलक रही थी।"

अभय सिंह ने आगे की सीट से पीछे की ओर सम्मानपूर्वक मुड़ते हुए, अपने चेहरे पर हमेशा रहने वाली उस गंभीर मुस्कान के साथ कहा, "सर, यह सब आपके उस दूरदर्शी नेतृत्व और अटूट भरोसे का प्रतिफल है जो आपने हम पर जताया। बनारस का युवा एक अरसे से सही दिशा की तलाश में था, आज KSLS के रूप में उन्हें उनका भविष्य मिल गया है।"



अभय सिंह का चरित्र और उनका व्यक्तित्व ही ऐसा था कि कोई भी अजनबी उन पर पहली नजर में अपना सर्वस्व भरोसा सौंप दे। लगभग पैंतीस-छत्तीस वर्ष की परिपक्व आयु के अभय सिंह के चेहरे पर बनारसी बुद्धिमत्ता, ठहराव और एक कुशल प्रशासक का सलीका झलकता था। उनका चौड़ा, साफ और उजला भाल (माथा), घनी, सलीके से कटी और संवारी हुई दाढ़ी उनके पूरे व्यक्तित्व को एक अद्वितीय गरिमा प्रदान करती थी। अभय सिंह KSLs के उन मजबूत और विश्वसनीय स्तंभों में से थे, जो पर्दे के पीछे रहकर व्यवस्था को बिना किसी चूक के संचालित करते थे।

तभी केतन के ठीक बगल में बैठी निशा ने अपनी खनकती हुई आवाज में चर्चा को आगे बढ़ाया, "सर, अभय सर तो अपनी तारीफ कभी अपने मुंह से नहीं करेंगे, लेकिन सच यह है कि पिछले एक पखवाड़े से इन्होंने रात की नींद नहीं ली है।"

केतन ने सहज भाव से निशा की ओर देखा और उसके चेहरे पर एक सयानी मुस्कान तैर गई। निशा... जो इस पूरे सफर में केवल केतन की मुख्य व्यावसायिक सहयोगी (चीफ कोऑर्डिनेटर) नहीं थी, बल्कि KSLs के बढ़ते साम्राज्य की सबसे सुंदर, कुशाग्र और ऊर्जावान पहचान बन चुकी थी। निशा मूल रूप से कानपुर के बेहद संभ्रांत इलाके स्वरूप नगर की रहने वाली थी, और उसकी रगों में एक गजब का अभिजात्य सलीका, आधुनिकता और सौंदर्य घुला हुआ था।

वह अत्यंत सुंदर थी—एक ऐसा नैसर्गिक, दिव्य और शालीन सौंदर्य जो किसी को भी एक पल के लिए सम्मोहित कर दे और ठहरकर आदर से देखने पर विवश कर दे। उसका रंग कंचन सा साफ, उजला और दमकता हुआ था, जिस पर कार की खिड़की के काँच से छनकर आती बनारस की कंचन धूप एक मखमली आभा बिखेर रही थी। उसकी आँखें बड़ी, केवल जैसी गहरी और अत्यंत चंचल थीं, जिनमें एक तीक्ष्ण बुद्धिमत्ता, व्यावसायिक दूरदर्शिता और एक अनकही आत्मीयता का वास था। उसकी सुघड़, लंबी और गोरी उँगलियाँ जब हवा में कोई फाइल या टैबलेट थामती थीं, तो उसकी एकाग्रता और कार्यकुशलता देखते ही बनती थी। उसके लंबे, रेशमी काले और घने बाल उसके दाहिने कंधे पर एक सलीके से बंधे हुए थे, जो उसकी लंबी, सुराहीदार

और गोरी गर्दन की खूबसूरती को और भी अधिक उभार रहे थे। उसने आज इस ऐतिहासिक उद्घाटन के पावन अवसर पर हल्के आसमानी और नीले रंग की एक बेहद शालीन, कलात्मक बनारसी हैंडलूम की साड़ी पहनी हुई थी, जो उसकी छरहरी, सुगठित और गरिमामय देह-यष्टि पर पूरी तरह खिल रही थी। उसकी नाक तीखी और तोते की चोंच सी सुघड़ थी, और जब वह बात करते हुए हल्की सी मुस्कान बिखेरती थी, तो उसके गालों पर पड़ने वाले हल्के उभार उसकी सादगी और तेज को और भी गहरा कर देते थे। निशा के पूरे वजूद में एक ऐसा अद्भुत सम्मोहन और प्रभाव था, जहाँ व्यावसायिक चतुरता और स्त्री-सुलभ गरिमा एक साथ हाथ थामे चलते थे।

केतन ने खिड़की से बाहर वाराणसी की जीवंत सड़कों और गंगा के समानांतर चलते रास्तों को देखते हुए एक लंबी, गहरी सांस ली। उसने धीमे स्वर में कहा, "जानती हो निशा, जब मैं कानपुर में मोतीझील के किनारे सुबह के घने कोहरे को घटते और लहरों से टकराते देखता था, तो अक्सर अकेले बैठकर सोचता था कि क्या कभी हमारा यह विचार, हमारा यह छोटा सा प्रयास उन ऊंचे और दुर्गम पहाड़ों तक पहुँच पाएगा? क्या हम शिक्षा और रोजगार के इस पुल को वहाँ तक ले जा पाएंगे? और आज देखो, कानपुर की मोतीझील से शुरू हुई वह यात्रा, अब नैनीताल की शांत झीलों और वादियों से आलिंगन करने जा रही है। यह मेरे लिए सिर्फ एक और ब्रांच का खुलना नहीं है निशा, यह संघर्ष और उस आदि-अंत की पूर्णता है।"

निशा ने केतन के चेहरे पर आए उन भावुक, दार्शनिक भावों को बहुत गहराई से महसूस किया। उसने अपनी कोमल आवाज के साथ कहा, "सर, मोतीझील से लेकर नैनीताल तक का यह रास्ता भले ही भूगोल की किताबों में कुछ सौ किलोमीटर का हो, पर इस रास्ते के हर एक मील के पथर पर आपने जो अपना खून-पसीना और अपना अटूट हौसला लगाया है, उसे KSLS के इस परिवार ने बहुत करीब से महसूस किया है। यह सपना अब सिर्फ आपका अकेले का नहीं रहा सर, यह अब हम सबका, उन हजारों छात्रों का साझा संकल्प बन चुका है।"

आगे की सीट पर बैठे अभय सिंह ने भी पूरी गंभीरता और आदर से सहमति में अपना सिर हिलाया। कार अब 'होटल ताज' के भव्य और

शाही मुख्य द्वार के भीतर दाखिल हो रही थी। केतन ने खिड़की के शीशे से ऊपर आसमान की ओर देखा। अतीत के सारे थपेड़ों और तूफानों से लड़कर जो लंबी छलांग उसने दो साल पहले लगाई थी, उसकी मंजिल अब उसके सामने बाहें फैलाए खड़ी थी। बनारस की धरती पर विजय का शंखनाद हो चुका था, और कार के रुकते ही केतन के कदम अब नैनीताल के अगले शिखर को फतह करने के लिए पूरी तरह तैयार थे।

होटल ताज के उस भव्य और शाही गलियारे की मखमली ज़मीन पर तीनों के कदमों की आहट भी मानो कालीन निगल रही थी। दोपहर की सफलता का शोर अब कमरों के बंद दरवाज़ों के पीछे ठहर चुका था। केतन अपने सुइट के भीतर दाखिल हुआ, जबकि निशा और अभय सिंह अपने-अपने कमरों की ओर बढ़ गए ताकि शाम के लिए खुद को तैयार कर सकें।

शाम ढलते ही बनारस का मिजाज पूरी तरह बदल गया। केतन के कमरे की विशाल काँच की खिड़की से बाहर का दृश्य किसी सुंदर चित्र जैसा लग रहा था। क्षितिज पर गहरा नीला आकाश घिर आया था और गंगा की छाती पर घाटों की टिमटिमाती रोशनियाँ आकार लेने लगी थीं। दूर अस्सी घाट की ओर से आती डमरू की थाप और शंखनाद की गूँज हवा में तैरती हुई कमरे के भीतर तक आ रही थी।

कमरे के भीतर मद्धम पीली लाइटें जल रही थीं। मेज पर नैनीताल की नई शाखा के आर्किटेक्चरल ब्लूप्रिंट्स, बजट की एक्सेल शीट्स, इंटीरियर डिज़ाइन्स के नक्शे और लैपटॉप खुले पड़े थे। बनारसी कड़क चाय के तीन खाली कुल्हड़ मेज के एक कोने में रखे थे, जो इस बात की गवाही दे रहे थे कि यहाँ एक बहुत गंभीर और रणनीतिक चर्चा चल रही थी। यह KSLS की उस 13वीं शाखा को अंतिम रूप देने का समय था, जो केतन के जीवन का सबसे बड़ा व्यक्तिगत और व्यावसायिक स्वप्न बनने जा रही थी।

केतन अब एक बेहद रिलैक्स्ड लुक में था। उसने गहरे नीले रंग की कॉटन शर्ट पहनी थी, जिसकी आस्तीनें कोहनी तक मुड़ी हुई थीं और नीचे चारकोल ग्रे रंग का फॉर्मल ट्राउज़र था। को-ऑर्डिनेटर अभय सिंह अपना ब्लेज़र उतारकर सफेद रंग की फॉर्मल शर्ट और ब्लैक ट्राउज़र्स में बैठे थे।

वहीं केतन के ठीक बगल में बैठी निशा पर ही पूरे कमरे की निगाहें ठहरती थीं। वह दोपहर की भारी बनारसी साड़ी को बदलकर अब एक बेहद स्मार्ट और प्रोफेशनल इंडो-वेस्टर्न अवतार में थी। उसने हल्के जैतूनी रंग (ऑलिव ग्रीन) का एक आरामदायक लंबा कॉटन कुर्ता पहना था, जिसके साथ ब्लैक एंकल-लेंथ पैट्स पेयर की थी। उसके रेशमी काले, घने बाल जो दोपहर में खुले थे, अब एक ऊँची पोनीटेल में सलीके से बंधे थे, जिससे उसकी सुराहीदार गर्दन और तीखे, नक्काशीदार नयन-नक्ष और भी प्रखर लग रहे थे।

मेज पर पसरे हुए एक बड़े से नक्शे पर अपनी उँगली टिकाते हुए केतन ने अपनी आवाज़ को थोड़ा धीमा और गंभीर किया, "अभय जी, नैनीताल हमारे बाकी सेंटर्स की तरह नहीं है। पहाड़ों का भूगोल जितना खूबसूरत होता है, इंफ्रास्ट्रक्चर के लिहाज से वहाँ की चुनौतियाँ उतनी ही कठिन होती हैं। मुझे सीधे फाइनल नंबर्स बताइए।"

अभय सिंह ने अपने लैपटॉप की स्क्रीन को केतन की तरफ घुमाते हुए कहा, "सर, हमने नैनीताल के 'तल्लीताल' मुख्य बाज़ार के पास जो हेरिटेज बिल्डिंग ली है, उसका कुल एरिया 8500 स्क्वायर फीट है। पहाड़ों में खराब मौसम के कारण पावर कट और इंटरनेट का ठप होना आम बात है। इसके समाधान के लिए हमने वहाँ 50 KVA का एक साइलेंट जनरेटर इंस्टॉल करवा दिया है। साथ ही, दो अलग-अलग कंपनियों से इंटरनेट की कनेक्टिविटी ली है, ताकि क्लासरूम में बैठे छात्रों को एक सेकंड का भी व्यवधान न झेलना पड़े। तीन हाई-टेक कंप्यूटर लैप्स में कुल 150 आधुनिक कंप्यूटर पूरी तरह लग चुके हैं।"

निशा ने अपनी फाइल से कुछ पन्ने निकालते हुए चर्चा को आगे बढ़ाया, "और सर, सबसे बेहतरीन डेटा हमारे प्री-रजिस्ट्रेशन का है। उत्तराखंड के कुमाऊं और गढ़वाल दोनों क्षेत्रों के युवाओं से जो रिस्पॉन्स हमें मिला है, उसकी उम्मीद खुद मुझे भी नहीं थी। वहाँ के युवाओं में पारंपरिक नौकरियों को छोड़कर 'एडवांस्ड डेटा एनालिटिक्स' और 'डिजिटल आर्किटेक्चर' सीखने की सबसे ज्यादा माँग है। हमारे पास नैनीताल में कुल 400 सीटें हैं सर, लेकिन कल शाम तक हमारे पास 1214 कन्फर्म प्री-बुकिंग एप्लीकेशन्स आ चुके हैं। यानी अपनी ओपनिंग से पहले ही हम तीन गुना ओवर-सब्सक्राइब्ड हैं। इसके अलावा, मैंने दिल्ली और

चंडीगढ़ की 15 बड़ी टेक-कंपनियों के साथ नैनीताल के लिए एक खास 'ऑन-कैंपस प्लेसमेंट ड्राइव' का समझौता (MoU) साइन कर लिया है। अब पहाड़ों के टैलेंट को रोजगार के लिए मैदानों में भटकना नहीं पड़ेगा, कंपनियां खुद पहाड़ चढ़कर आएंगी।"

केतन ने उस नक्शे पर हाथ फेरते हुए एक लंबी, गहरी सांस ली। उसकी आँखों के सामने अतीत के वो शुरुआती दिन घूम गए जब वह अकेले बैठकर भविष्य की कल्पना करता था।

उसने भावुक स्वर में कहा, "अद्भुत! बहुत शानदार काम किया है तुम दोनों ने। निशा, फैकल्टी का क्या स्टेटस है? पहाड़ों पर अच्छे और अनुभवी प्रोफेसर्स को लंबे समय तक रोके रखना सबसे टेढ़ी खीर होती है।"

निशा ने अपनी आँखों में एक चमक लाते हुए तुरंत उत्तर दिया, "सर, उसका भी फुल-प्रूफ इंतजाम हो चुका है। हमने दिल्ली और गुड़गांव के अपने कोर सेंटर्स से 6 सीनियर प्रोफेसर्स को अगले 6 महीने के लिए नैनीताल भेजा है। उन्हें हमने वहीं मल्लीताल में लेक-व्यू अपार्टमेंट्स दिए हैं, जिससे वे बेहद खुश और उत्साहित हैं।

अभय सिंह ने अंतिम फाइल को बंद करते हुए कहा, "सर, 5 जून की सुबह 11 बजे का समय नैनीताल के रिबन-कटिंग के लिए लॉक कर दिया गया है। लोकल एडमिनिस्ट्रेशन और वीआईपी इन्विटेशनस की लिस्ट निशा ने खुद री-चेक कर ली है। "

केतन अपनी कुर्सी से खड़ा हुआ और खिड़की के पास जाकर रुक गया। बाहर अब बनारस पूरी तरह से रोशनियों के एक जादुई समंदर में तब्दील हो चुका था। घाटों पर जलते हुए दीयों और बल्बों की कतारें ऐसी लग रही थीं मानो आसमान के तारे ज़मीन पर उतर आए हों।

उसने अपनी कलाई घड़ी पर समय देखा, निशा, अभय जी... चलिए, माँ गंगा का बुलावा आ गया है। अस्सी की शाम की महा-आरती का समय हो रहा है, और हम बनारस में रहकर इस अलौकिक पल को नहीं छोड़ सकते। यहाँ से लौटकर फिर सीधे हमें पहाड़ों की ओर बढ़ना है।"

निशा के चेहरे पर भी एक खूबसूरत मुस्कान बिखर गई। उसने फुर्ती से अपना टैबलेट और डायरी बैग के भीतर रखी। अभय सिंह ने मुस्कुराते हुए आदर से सिर हिलाया। केतन, निशा और अभय, तीनों अपने

दायित्वों के भारीपन को कमरे की मेज पर ही छोड़कर, बनारस की इस सुप्रसिद्ध और भव्य 'गंगा आरती' के प्रवाह में खुद को बहा देने के लिए सुइट से बाहर निकल गए।

होटल ताज के भव्य मुख्य द्वार से निकलकर कार जब दशाश्वमेध घाट की ओर बढ़ी, तो बनारस का शाम का चरित्र पूरी तरह बदल चुका था। सड़कों पर भक्तों, संतों और सैलानियों का एक ऐसा सैलाब उमड़ रहा था जो सिर्फ एक दिशा में बढ़ रहा था—माँ गंगा के आलिंगन की ओर।

घाट पर पहुँचते ही भीड़ और कोलाहल के बीच अभय सिंह ने मुस्तैदी से रास्ता बनाया। केतन और निशा उनके पीछे-पीछे संभलते हुए आगे बढ़े। जब वे तीनों वीआईपी बजरे (बड़ी नाव) पर सवार हुए, तब तक गंगा की लहरों पर शाम की मखमली श्यामता पूरी तरह घिर चुकी थी। घाट की सीढ़ियों पर हजारों-हजार लोग एकटक सामने बने सात लकड़ी के ऊँचे तख्तों को निहार रहे थे।

तभी शंखनाद हुआ। घंटियों की एक सुरम्य गूँज उठी और पीताम्बरी धोती व अंगवस्त्र पहने सात वैदिक बटुकों ने जैसे ही धूप और कपूर के भारी दीपकों को हाथों में उठाया, दशाश्वमेध घाट का पूरा दृश्य अलौकिक हो उठा। 'नमामि गंगे' के सस्वर पाठ, डमरू की थाप और धूप के सुवासित धुएँ के बीच महा-आरती का वो शंखनाद केवल एक धार्मिक आयोजन नहीं था, वह एक ऐसा सम्मोहन था जो आत्मा को झंकृत कर दे। जब जलते हुए महादीपकों की विशाल लपटें आसमान की ओर उठीं, तो उनकी सुनहरी रोशनी गंगा की लहरों पर नाचने लगी। पूरा वातावरण एक दिव्य, अदम्य और भावपूर्ण ऊर्जा से भर उठा।

केतन बजरे की मुंडेर पर हाथ टिकाए, आँखों में विस्मय और भीतर एक शांत ठहराव लिए उस अलौकिक दृश्य में डूबा हुआ था। दीपकों की वह सुनहरी आभा उसके चेहरे पर पड़ रही थी। ठीक उसी पल, उसके बगल में खड़ी निशा की नजरें आरती से हटकर सहज रूप से केतन की ओर घूमिं। आरती की रोशनी निशा के दमकते हुए चेहरे और उसकी बड़ी, गंभीर आँखों पर एक मखमली आभा बिखेर रही थी। उसकी तीखी नाक और चेहरे पर झूलती बालों की एक लट उसकी सादगी को और भी गहरा कर रही थी।

तभी केतन ने भी अपनी गर्दन घुमाई और दोनों की नजरें आपस में मिल गईं।

जैसे ही दोनों की आँखें मिलीं, दीपकों की उठती हुई लपटों के बीच केतन के दिल में एक तीखा दर्द उठा और उसे अचानक अनुश्री की याद आ गई। अनुश्री..... अतीत की उस एक स्मृति ने केतन को भीतर तक झकझोर कर रख दिया। उसने अपनी पलकें झुका लीं, एक गहरी सांस ली और खुद को सँभाला।

आरती संपन्न हुई। चारों ओर 'हर हर महादेव' का जयकारा गूँज उठा।

बजरे से उतरकर तीनों वापस गाड़ी की ओर बढ़े। वापसी के उस तीन किलोमीटर के सफर में गाड़ी के भीतर एक गहरा सन्नाटा पसरा हुआ था। अभय सिंह आगे की सीट पर चुपचाप बनारस के ट्रैफिक को देख रहे थे, और पीछे केतन खिड़की के बाहर भागती हुई रोशनियों को निहार रहा था, जबकि निशा शांत भाव से बैठी थी।

जब गाड़ी होटल ताज के शाही पोर्च में आकर रुकी, तो तीनों नीचे उतरे। केतन ने अभय और निशा की तरफ देखा, चेहरे पर वही पुरानी सँभली हुई मुस्कान वापस लाते हुए कहा, "आज का दिन बहुत लंबा रहा। आप दोनों आराम कीजिए, कल हमें पहाड़ों की ओर रुख करना है।"

निशा ने धीरे से सिर हिलाया, "गुड नाइट, सर।"

तीनों अपने-अपने कमरों की ओर बढ़ गए। केतन जब अपने सुइट के भीतर पहुँचा, तो वह सीधे खिड़की के पास गया, जहाँ से दूर गंगा की लहरें अब शांत बह रही थीं। बनारस फतह हो चुका था, बिजनेस की दुनिया में उसका रंग जम चुका था... पर पहाड़ों की इस अगली यात्रा पर निकलने से पहले, केतन के दिल के किसी कोने में अनुश्री की वह याद एक सुलगते हुए सवाल की तरह जिंदा थी।

बनारस के आलीशान होटल ताज के सुइट में पसरे मद्धम नीले सन्नाटे के बीच, केतन ने जैसे ही अपनी आँखें मूँदीं, वर्तमान की सारी चमक-दमक एक झटके में ओझल हो गई। समय का पहिया पीछे घूमा और वह सीधे जाकर रुका दो साल पहले के उस खौफनाक और जानलेवा दौर पर।

साल 2021 का वह समय केतन के जीवन का सबसे काला अध्याय था। महामारी का वो क्रूर तांडव अभी थमा ही था कि केतन का पूरा वजूद मलबे में तब्दील हो चुका था। उसका जमा जमाया इंस्टिट्यूट बंद हो चुका था, बैंक अकाउंट खाली हो चुका था और सबसे बढ़कर, उसका भाई जैसा यार ऋषभ हमेशा के लिए इस दुनिया से विदा हो चुका था। अवसाद और लाचारी के उस चरम बिंदु पर केतन एक चलती-फिरती लाश बन गया था।

महामारी के उस खौफ़नाक बवंडर के बीच, अनुश्री ही केतन की ज़िंदगी का आखिरी किनारा थी—उसकी डूबती हुई साँसों का एकमात्र संबल। पर अतीत की वह आखिरी मुलाक़ात आज भी केतन के सीने पर पत्थर की तरह भारी महसूस होती थी। हमेशा की तरह दोनों मिले थे, बातें हुई थीं। अनुश्री के चेहरे पर वही चिर-परिचित, रहस्यमयी शांति तैर रही थी। केतन को कहाँ मालूम था कि उस शांत चेहरे के पीछे क्या तूफ़ान पल रहा है, और उसका हाथ थामने का वह अहसास आखिरी बार नसीब हो रहा है।

उस मुलाक़ात के ठीक दो-तीन दिन बाद से अचानक अनुश्री का फ़ोन उठना बंद हो गया।

शुरुआत में केतन को लगा कि शायद वह किसी काम में व्यस्त होगी, लेकिन जब पूरा दिन और पूरी रात बीत गई और कोई कॉल-बैक नहीं आया, तो उसके भीतर एक डर घर करने लगा। वह लगातार नंबर डायल करता रहा; फ़ोन की हर घंटी के साथ उसके दिल की धड़कनें नगाड़े की तरह बजती थीं। दूसरी तरफ़ से सिर्फ़ सन्नाटा था। घबराकर वह बदहवास हालत में नीरज के पास भागा।

नीरज ने जो बताया उसने केतन के पैरों तले की ज़मीन खिसका दी। नीरज ने कहा, “केतन, दो दिन पहले अनुश्री का एक छोटा-सा मैसेज आया था। उसने बस इतना लिखा कि वह देहरादून जा रही है। उसके बाद से हमने भी कई बार फ़ोन मिलाया, पर वह किसी की कॉल नहीं उठा रही।”

देहरादून? अचानक? बिना किसी को एक शब्द बताए?

केतन का दिमाग़ सुन्न हो गया। सच जानने के लिए वह तुरंत घंटाघर में अनुश्री के घर की ओर भागा। वहाँ पहुँचा तो मुख्य गेट पर बड़ा-सा



ताला लटक रहा था और सन्नाटा पसरा था। तभी पड़ोस के मिश्रा जी बाहर आए। केतन की बदहवासी देखकर उन्होंने पास आकर धीमे स्वर में कहा, “बेटा केतन, दो दिन पहले ही अनुश्री और उसके मम्मी-पापा सामान समेटकर निकल गए। पूछने पर बस इतना बोले कि देहरादून जा रहे हैं... बहुत जल्दबाज़ी में थे सब।”

मिश्रा जी की बातें सुनकर केतन का कलेजा मुँह को आ गया। वह उसी बंद घर की सीढ़ियों पर बैठ गया। उसकी रातों की नींद उड़ गई। केतन और नीरज ने हर मुमकिन कोशिश की, हर उस परिचित को फ़ोन मिलाया जो अनुश्री को जानता था, पर नतीजा सिफ़र था। अनुश्री का फ़ोन चालू था, घंटी बराबर जा रही थी, लेकिन वह किसी का फ़ोन नहीं उठा रही थी—न केतन का, न नीरज का, और न ही वीरू का। वह एक ही झटके में पूरी दुनिया से कट चुकी थी।

इसके बाद के दो-तीन महीने केतन के लिए किसी ज़िंदा नर्क से कम नहीं थे। वह चौबीसों घंटे सिर्फ़ इसी एक उलझन में घुटता रहा कि आख़िर अनुश्री इस तरह क्यों चली गई? उसने ऐसा क्या कर दिया था? अगर कोई बहुत बड़ी मजबूरी भी थी, जब वह अपनी ज़िंदगी के सबसे कठिन और क्रूर दौर से गुज़र रहा था, जब उसे सबसे ज़्यादा किसी अपने की ज़रूरत थी, तब अनुश्री का इस तरह ख़ामोशी से चले जाना उसके सीने में एक सुलगता हुआ ज़ख़्म दे गया।

वह हर सुबह इसी उम्मीद में उठता कि शायद आज उसका फ़ोन आ जाए। रातों को अचानक चौंककर उठता और मोबाइल की रोशनी में उसका नाम तलाशता, पर दूसरी तरफ़ बस एक डरावना सन्नाटा था। इस बेबसी और अनसुलझे सवालोंने धीरे-धीरे उसके दुख को गुस्से में बदल दिया।

और आख़िरकार, उसी कसक, उसी असहनीय टीस और ख़ुद को साबित करने की ज़िद की आग से कोविड के उस दौर के बीच KSLs दोबारा खड़ा हुआ। केतन ने अपने अतीत के उस दर्द को ही अपनी सबसे बड़ी ताक़त बना लिया। वह दिन-रात पागलों की तरह काम में जुट गया। उसने ऐसे जोखिम लिए और ऐसी रणनीतियाँ बनाईं जिन्होंने शिक्षा जगत को हिलाकर रख दिया। देखते ही देखते, उस अकेले लड़के

की ज़िद और गुस्से ने KSLS की 12 शाखाओं का एक अजेय साम्राज्य खड़ा कर दिया।

आज दो साल बाद, होटल ताज के सुइट में लेटे हुए भी केतन के दिल के सबसे अंधेरे कोने में वह 'टीस' आज भी जस की तस ज़िंदा थी। वह अनुश्री से बेपनाह नफरत करने लगा था। उसने तय कर लिया था कि वह अपनी ज़िंदगी में कभी उससे बात नहीं करेगा, उसका नाम तक नहीं लेगा। उसके लिए अनुश्री अतीत का वह काला पन्ना थी जिसे उसने हमेशा के लिए फाड़कर फेंक दिया था। वह इस सच को दुनिया में किसी से डिस्कस नहीं करता था, अभय और निशा भी सिर्फ उसकी कामयाबी को जानते थे, इस गहरे जख्म को नहीं।

केतन ने सुइट के मखमली बिस्तर पर अपनी आँखें खोल दीं। कमरे में अब भी वही नीली चाँदनी पसरी थी। 'कल मुझे नैनीताल के लिए निकलना है,' उसने खुद से कहा, अपनी मुट्ठियों को भींचते हुए।

तभी सन्नाटे को चीरती हुई कमरे के दरवाजे की घंटी बजी। केतन ने चौंककर कलाई घड़ी की ओर देखा—रात का ठीक बारह बज रहा था। इस वक्त कौन हो सकता है? उसने थोड़ा अचरज और सतर्कता के साथ उठकर जैसे ही दरवाजा खोला, सामने निशा खड़ी थी।

निशा अपने रिलैक्सिंग नाइट सूट में थी। उसके बाल बिखरे हुए थे और चेहरे पर गहरी चिंता और हड़बड़ाहट साफ़ झलक रही थी। केतन को देखते ही उसने बिना कोई भूमिका बांधे बेहद गंभीर स्वर में कहा, "सॉरी सर, इतनी रात को डिस्टर्ब करने के लिए... पर नैनीताल से शर्मा जी का बहुत जरूरी कॉल है, वे आपसे तुरंत बात करना चाहते हैं।"

केतन ने स्थिति की गंभीरता को भांपते हुए कहा, "अंदर आओ, निशा।"

निशा कमरे के भीतर दाखिल हुई। केतन ने दरवाजा बंद किया और मेज की तरफ बढ़ते हुए कहा, "फोन को तुरंत स्पीकर पर डालो।"

निशा ने अपने मोबाइल की स्क्रीन पर टैप किया और कॉल को स्पीकर पर डाल दिया। कमरे के सन्नाटे में उधर से भारी और घबराई हुई आवाज गूँजी, "हैलो... हैलो, केतन सर! प्रणाम सर, मैं शर्मा बोल रहा हूँ नैनीताल से।"

केतन ने अपनी आवाज को शांत रखते हुए कहा, "हाँ शर्मा जी, प्रणाम। इतनी रात को फोन? सब ठीक तो है न वहाँ? हमारी टीम तो कल सुबह ही नैनीताल के लिए निकल रही है।"

उधर से एक लंबी और बेबस सांस सुनाई दी, "सर... सच कहूँ तो यहाँ कुछ भी ठीक नहीं है। मुझे बहुत भारी मन से कहना पड़ रहा है कि हमें 5 जून को होने वाला नैनीताल ब्रांच का उद्घाटन आगे बढ़ाना पड़ेगा। इसे फिलहाल टालना होगा सर।"

यह सुनते ही केतन के माथे पर बल पड़ गए और कमरे का तापमान जैसे एक झटके में गिर गया। बगल में खड़ी निशा ने भी अपनी सांसें रोक लीं। केतन ने सख्त लहजे में पूछा, "शर्मा जी, होश में तो हैं आप? चार दिन बाद उद्घाटन है। पूरे उत्तराखंड में होर्डिंम्स लग चुके हैं, 12 सौ से ज्यादा बच्चों के प्री-रजिस्ट्रेशन हो चुके हैं, लोकल एडमिनिस्ट्रेशन को इनविटेशन जा चुका है। और आप कह रहे हैं कि उद्घाटन आगे बढ़ाना पड़ेगा? वजह क्या है?"

शर्मा जी की आवाज में पहाड़ की उस ठंडी रात की बेबसी साफ महसूस हो रही थी, "सर, मैं आपकी बात समझ रहा हूँ और जिम्मेदारी मेरी ही है। पर यहाँ अचानक कुदरत ने खेल कर दिया है। तल्लीताल और मल्लीताल को जोड़ने वाले मुख्य मार्ग पर, ठीक हमारी हेरिटेज बिल्डिंग के पास बहुत बड़ा लैंडस्लाइड (भूस्खलन) हुआ है। पहाड़ी का एक बहुत बड़ा हिस्सा दरक कर नीचे आ गिरा है।"

केतन ने तुरंत काउंटर किया, "लैंडस्लाइड हुआ है तो प्रशासन रास्ता साफ करवा रहा होगा। दो-तीन दिन में मलबा हट जाता है शर्मा जी, इसके लिए पूरा उद्घाटन टालने की क्या जरूरत है?"

"सर, बात सिर्फ रास्ता बंद होने की नहीं है," शर्मा जी ने हताश होकर कहा, "उस लैंडस्लाइड के मलबे और भारी पत्थरों की चपेट में हमारी बिल्डिंग का जो फ्रंट हिस्सा है, वह आ गया है। हमारी तीन हाई-टेक कंप्यूटर लैप्स में से जो फ्रंट वाली लैब थी, उसकी पूरी दीवार ढह गई है। खिड़कियों के काँच चकनाचूर हो चुके हैं और जो डबल लीज-लाइन इंटरनेट के खंभे हमने लगाए थे, वे भी उखड़ गए हैं। इस वक्त पूरी बिल्डिंग में पावर सप्लाय कटी हुई है और लोकल अथॉरिटीज ने उस पूरे जोन को 'डेंजर जोन' घोषित करके सील कर दिया है।"

यह सुनते ही निशा के हाथ से फाइल छूटते-छूटते बची। उसने केतन की तरफ देखा, उसकी आँखों में साफ दिख रहा था कि महीनों की मेहनत पर पानी फिरने की कगार पर था।

केतन ने अपनी मुठियां भींच लीं। अतीत के संघर्षों ने उसे विपरीत परिस्थितियों में शांत रहना सिखाया था। उसने गहरी सांस ली और नपे-तुले शब्दों में कहा, "शर्मा जी, स्ट्रक्चरल डैमेज कितना है? क्या बिल्डिंग की बुनियाद को कोई खतरा है?"

"नहीं सर, आर्किटेक्ट और पीडब्ल्यूडी के इंजीनियरों ने रात में ही मुआयना किया है। फाउंडेशन मजबूत है, पर फ्रंट लैब को दोबारा बनाने, वायरिंग दुरुस्त करने और इंटरनेट लाइन्स को री-स्टोर करने में कम से कम 15 से 20 दिन का समय लगेगा। इस मलबे के बीच हम बच्चों को बुलाकर उनका ओरिएंटेशन नहीं कर सकते सर। जान का जोखिम है।"

केतन कुछ सेकंड के लिए बिल्कुल खामोश हो गया। कमरे में सिर्फ शर्मा जी की सांसों की आवाज आ रही थी। केतन जानता था कि बिज़नेस की दुनिया में साख सबसे बड़ी चीज होती है। अगर उद्घाटन टलता है, तो मार्केट में गलत मैसेज जाएगा।

उसने निशा की तरफ देखा, जिसके चेहरे का रंग उड़ चुका था। केतन ने फोन पर दोबारा अपनी पकड़ मजबूत की और कहा, "शर्मा जी, प्रशासन मलबे को हटाने में कितना वक्त लेगा?"

"सर, वे कह रहे हैं कि अगले 48 घंटों में रास्ता चालू हो जाएगा।"

केतन के चेहरे पर एक कठोर चमक उभरी। उसने कहा, "ठीक है। शर्मा जी, आप सुनिए... उद्घाटन 5 जून को ही होगा। हम एक दिन भी आगे नहीं बढ़ेंगे।"

शर्मा जी अचरज में पड़ गए, "पर सर... उस टूटी दीवार और कटी हुई बिजली के बीच कैसे..."

केतन ने उनकी बात बीच में ही काटते हुए आदेशात्मक स्वर में कहा, "दीवार टूटी है तो कल सुबह से ही लोकल लेबर्स और कॉन्ट्रैक्टर्स को डबल शिफ्ट पर लगाइए। पैसों की चिंता मत कीजिए, निशा सुबह ही फंड्स रिलीज कर देगी। जो लैब डैमेज हुई है, उसे छोड़ दीजिए। हमारे

पास दो लैब्स और 8500 स्क्वायर फीट का एरिया अभी सुरक्षित है। हम पहले बैच को शिफ्ट्स में बुलाएंगे। बिजली कटी है, तो जो 50 KVA का जनरेटर हमने इंस्टॉल कराया था, कल सुबह से पूरा लोड उसी पर डालिए।"

उसने आगे कहा, "मैं, निशा और अभय जी कल सुबह अपने तय समय पर ही बनारस से नैनीताल के लिए निकल रहे हैं। हम परसों सुबह तक वहाँ पहुँच जाएंगे। मेरे कदम पीछे नहीं हटेंगे शर्मा जी। आप बस सुबह से काम शुरू करवाइए, बाकी चीजें मैं खुद वहाँ आकर संभालूँगा।"

केतन का यह फैसला सुनकर शर्मा जी के भीतर भी एक नई ऊर्जा का संचार हुआ। उन्होंने कहा, "जी सर! अगर आपका यही हौसला है, तो मैं रात से ही पूरी टीम को काम पर लगाता हूँ। आप कल निकलिए, मैं सुबह की रिपोर्ट आपको वॉट्सऐप पर भेज दूँगा।"

"ठीक है, प्रणाम," केतन ने निशा को इशारा किया और निशा ने कॉल डिस्कनेक्ट कर दी।

कमरे में एक बार फिर सन्नाटा छा गया। निशा ने केतन को देखा, उसकी धड़कनें अभी भी तेज थीं। केतन खिड़की की ओर मुड़ा और बाहर पसरे बनारस के अंधेरे को देखने लगा।

निशा ने मोबाइल मेज पर रखा और केतन के चेहरे की कठोरता को देखने लगी। कमरे का सन्नाटा अब और गहरा हो गया था। शर्मा जी की बातों ने नैनीताल प्रोजेक्ट के भविष्य पर एक बहुत बड़ा प्रश्नचिह्न लगा दिया था।

"कैसे करेंगे सर?" निशा ने अपनी थकी और चिंतित आवाज़ में पूछा। उसकी आँखों में महीनों की मेहनत के बिखरने का डर साफ़ दिख रहा था। "5 जून को उद्घाटन है और आज 27 मई हो चुकी है। हमारे पास सिर्फ़ आठ दिन हैं। पूरी एक लैब तबाह हो चुकी है, दीवार ढह गई है, बिजली-इंटरनेट सब ठप है। पहाड़ों में इतनी जल्दी कंस्ट्रक्शन का काम दोबारा शुरू करवाना नामुमकिन जैसा है सर।"

केतन खिड़की के पास से घूमा। उसने अपनी शर्ट की मुड़ी हुई आस्तीनों को थोड़ा और ऊपर चढ़ाया और मेज पर रखे नैनीताल के नक्शे के पास आकर खड़ा हो गया। उसके चेहरे पर न तो कोई

घबराहट थी और न ही कोई शिकन। अतीत के थपेड़ों ने उसे संकट के समय शांत रहना सिखाया था।

"मुश्किल है निशा, नामुमकिन नहीं," केतन ने शांत आवाज़ में कहा। "एक बात बताओ, जब हम कानपुर में एक छोटे से हाल से शुरू कर रहे थे, तब हमारे पास क्या था? कुछ भी नहीं। आज तो हमारे पास पूरा इंफ्रास्ट्रक्चर है, पैसा है, और सबसे बड़ी बात—मार्केट में KSLS का भरोसा है।"

केतन ने नक्शे पर उँगली रखी, ठीक उसी जगह जहाँ तल्लीताल की वो हेरिटेज बिल्डिंग बनी थी। "निशा, प्रशासन ने रास्ते को साफ करने के लिए 48 घंटे मांगे हैं। इसका मतलब परसों सुबह तक रास्ता खुल जाएगा। जैसे ही रास्ता खुलेगा, डेंजर ज़ोन का टैग हट जाएगा। रही बात टूटी हुई दीवार की, तो क्या 8500 स्क्वायर फीट के उस पूरे कैंपस में सिर्फ वही एक लैब है?"

"नहीं सर, दो लैब्स और भी हैं जो पीछे की तरफ हैं और पूरी तरह सुरक्षित हैं," निशा ने याद करते हुए जवाब दिया।

"बस, तो हमारा काम हो गया," केतन की आँखों में चमक उभरी। "हम 5 जून को पूरी बिल्डिंग का उद्घाटन नहीं करेंगे। हम सिर्फ उन दो सुरक्षित लैब्स और मेन हॉल से शुरुआत करेंगे। जो हिस्सा डैमेज हुआ है, उसे हम एक ऊँचे प्लार्डवुड के डेकोरेटिव पार्टिशन से पूरी तरह कवर कर देंगे, ताकि बाहर से आने वाले किसी भी अतिथि या छात्र को वो मलबा न दिखे। अंदर बैकग्राउंड में काम चलता रहेगा, और बाहर उद्घाटन का उत्सव होगा।"

निशा ने केतन के इस क्राइसिस मैनेजमेंट को समझा, पर उसकी तार्किक बुद्धि अभी भी संतुष्ट नहीं थी। उसने कहा, "ठीक है सर, मान लिया कि हम डैमेज को छुपा लेंगे। पर इंटरनेट और बिजली का क्या? बिना इंटरनेट के कंप्यूटर लैब्स सिर्फ लोहे के डिब्बे हैं। पहाड़ी क्षेत्रों में नई लीज-लाइन बिछाने में कंपनियां हफ्तों लगा देती हैं।"

केतन थोड़ा मुस्कराया, "शर्मा जी ने कहा कि खंभे उखड़े हैं, तार टूटे हैं, पर नैनीताल का जो लोकल एक्सचेंज है, वह तो चालू है न? कल सुबह जैसे ही अभय जी सोकर उठेंगे, उन्हें सबसे पहला काम यही सौंपना। वह तुरंत बीएसएनएल और लोकल वेंडर्स के हेड से बात करेंगे।

कॉर्पोरेट प्रेशर और एक्स्ट्रा पेमेंट्स के दम पर 24 घंटे के भीतर नई केबल खींचवाई जा सकती है। और बिजली के लिए? हमारा जनरेटर किस दिन काम आएगा? उद्घाटन के पहले तीन दिन पूरा सेंटर जनरेटर के दम पर चलेगा।"

निशा ने केतन को एकटक देखा। संकट की इस घड़ी में जहाँ कोई भी बड़ा बिजनेसमैन घुटने टेक देता या इवेंट को पोस्टपोन कर देता, वहाँ केतन हर समस्या का एक सीधा और व्यावहारिक तोड़ निकाल रहा था।

निशा ने एक लंबी सांस ली और उसके चेहरे पर एक गहरी संतुष्टि की मुस्कान तैर गई। उसने कहा, "आप सच में कमाल हैं सर। जहाँ सब रास्ते बंद दिख रहे थे, आपने वहाँ से भी एक नया कॉरिडोर निकाल दिया। मैं कल सुबह 6 बजे ही नैनीताल की फाइनेंस टीम के लिए फंड्स अप्रूव कर दूँगी ताकि शर्मा जी को लेबर्स और मटेरियल्स अरेंज करने में एक मिनट की भी देरी न हो।"

"बिल्कुल," केतन ने घड़ी देखी, रात का सवा बारह हो रहा था। उसने निशा की तरफ देखा और शांत स्वर में कहा, "अब जाओ और जाकर सो जाओ। कल का सफर लंबा है और पहाड़ों पर पहुँचते ही हमें सीधे जंग के मैदान में उतरना है।"

निशा ने आदर से सिर हिलाया, "गुड नाइट, सर।" वह मुड़ी और कमरे से बाहर निकल गई।

केतन ने दरवाजा बंद किया और वापस खिड़की के पास जाकर खड़ा हो गया। बाहर बनारस की रात अब अपने अंतिम पहर की ओर बढ़ रही थी।

केतन रात को शर्मा जी के उस फोन के बाद ठीक से सो नहीं पाया था। वह चारकोल ग्रे रंग के लोअर्स और ब्लैक टी-शर्ट में मेज पर फैले नक्शों को एक बार फिर देख रहा था, जब कमरे के दरवाजे पर एक जानी-पहचानी दस्तक हुई।

केतन ने बढ़कर जैसे ही दरवाजा खोला, सामने छह फीट लंबा, सुगठित कद-काठी का एक शख्स खड़ा था। उसकी आँखों पर लगा ब्लैक-फ्रेम्ड चश्मा, चेहरे पर सँवरी हुई हल्की दाढ़ी, और डार्क ब्लू कलर का फॉर्मल ब्लेज़र उसके शांत व्यक्तित्व को बयां कर रहा था। उसके एक हाथ में ब्लैक लेदर का डफ़ल बैग था और दूसरे हाथ में मैकबुक का स्लीव।

वह कोई और नहीं, नीरज था—KSLS का ऑल ओवर इंडिया मैनेजिंग डायरेक्टर, यानी केतन का सबसे मजबूत दायां हाथ। वह रात की प्लाइट पकड़कर सीधे दिल्ली-गुड़गांव कोर ब्रांच से बनारस उतरा था।

"शर्मा का फोन आया था रात में?" नीरज ने कमरे के भीतर कदम रखते ही बिना किसी औपचारिक भूमिका के सीधे काम की बात पूछी।

केतन के चेहरे पर रात भर की थकान के बीच एक गहरी राहत की मुस्कान तैर गई। उसने दरवाजा बंद करते हुए कहा, "आ गया तू? हाँ, शर्मा का फोन रात बारह बजे आया था। तल्लीताल वाला रास्ता भी बंद है और फ्रंट लैब की दीवार भी ढह गई है।"

नीरज ने अपना बैग सोफे पर पटककर, ब्लेज़र के बटन खोले और मेज के पास आकर केतन के कंधे पर हाथ रखा। "तो फिर सुबक क्यों रहा है शर्मा? उसे बोल, काम शुरू कराए। मैं गुड़गांव की पूरी बैकएंड टीम को रात में ही अलर्ट कर चुका हूँ। जो डेटा और आईटी का सर्वर डैमेज हुआ है, उसे हम क्लाउड के जरिए बैकअप दे रहे हैं।"

दो साल... सिर्फ दो साल बीते थे, पर इन दो सालों ने नीरज को पूरी तरह बदल दिया था। वह कभी कानपुर की तंग गलियों में केतन के साथ चाय के कुल्हड़ पर बैठकर भविष्य की हवाई बातें करता था, पर आज वह KSLS का नंबर दो था। पूरे भारत में फैले 12 अत्याधुनिक सेंटर्स के मैनेजमेंट, साढ़े तीन सौ कर्मचारियों के स्टाफ और करोड़ों के रेवेन्यू का पूरा दारोमदार इसी लड़के के कंधों पर था।

केतन ने नीरज को देखते हुए उन दिनों को याद किया जब अनुश्री के अचानक गायब होने के बाद वह पागल हो चुका था। वह दौर केतन के जीवन का सबसे भयानक दलदल था। ऋषभ की मौत का गम और अनुश्री का इस तरह बिना बताए देहरादून चले जाना—केतन को लगा था कि वह मर जाएगा।

उस काले अवसाद के दिनों में नीरज और वीरू ही थे, जो ढाल बनकर उसके सामने खड़े हो गए थे।

धीरे-धीरे, अनुश्री के दिए उस गहरे जख्म की टीस को नीरज और वीरू ने एक बिजनेस एम्पायर की आग में बदल दिया। वीरू ने कानपुर की गलियों को छानकर पहला फंड और लॉजिस्टिक्स अरेंज किया, नीरज ने दिल्ली के कॉर्पोरेट क्लाइंट्स को जोड़कर पहला बड़ा प्रोजेक्ट निकाला,



और केतन ने अपनी ज़िद को KSLS की रीढ़ की हड्डी बना दिया। केतन के भीतर जो अनुश्री के प्रति नफरत और आक्रोश था, उसे नीरज ने सही दिशा में चैनलाइज किया। आज जो साम्राज्य खड़ा था, उसकी नींव में इन तीनों दोस्तों का खून-पसीना ही था।

तभी सुइट का दरवाजा दोबारा खुला और निशा भीतर दाखिल हुई। उसने अब हल्के क्रीम कलर का एक फॉर्मल सूट पहन रखा था, बाल सलीके से बंधे थे। नीरज को देखते ही उसके चेहरे पर भी राहत के भाव आए।

"गुड मॉर्निंग, नीरज सर। आप आ गए, थैंक गॉड!" निशा ने आगे बढ़कर कहा।

"गुड मॉर्निंग, निशा। शर्मा जी को सुबह का फंड ट्रांसफर हुआ या नहीं?" नीरज ने सीधे अपने कड़क एमडी वाले अंदाज में पूछा।

"हाँ सर, सुबह पांच बजे के पहले ही मैंने पांच लाख रुपये का इमरजेंसी फंड रिलीज कर दिया था। शर्मा जी ने लेबर्स अरेंज कर लिए हैं और पीडब्ल्यूडी के अधिकारियों से भी बात चल रही है," निशा ने अपना टैबलेट आगे बढ़ाते हुए कहा।

नीरज ने टैबलेट के आंकड़ों पर सरसरी नजर डाली और केतन की तरफ देखा। "वीरू का फोन आया था जब मैं एयरपोर्ट पर था। कानपुर हेड ऑफिस का पूरा काम इस समय ट्रैक पर है। वीरू भी आज दोपहर की फ्लाइट से सीधे दिल्ली और वहां से काठगोदाम होते हुए नैनीताल पहुँच रहा है। उद्घाटन में वो हमारे साथ रहेगा।"

केतन ने एक लंबी सांस ली। वीरू... जो आज भी कानपुर के मुख्य हेड ऑफिस की कमान संभाले हुए था।

कमरे की खिड़की से बाहर अब बनारस का सूरज पूरी तरह चमक रहा था। गंगा की लहरें सुनहरी हो चुकी थीं। केतन, नीरज और निशा ने अपने-अपने लैपटॉप बैग्स संभाले और सुइट से बाहर निकल गए। नीचे अभय सिंह फॉर्च्यूनर का दरवाजा खोले मुस्तैद खड़े थे।

## नैनीताल का अनुकेतन

होटल ताज के शाही पोर्च में दो चमचमाती ब्लैक फॉर्च्यूनर गाड़ियाँ कतार में खड़ी थीं। पहाड़ों की चढ़ाई और नैनीताल के उस क्राइसिस मोर्चे को फतह करने के लिए रफ्तार और मजबूती, दोनों की जरूरत थी। सामान डिग्गी में लोड हो चुका था।

तय व्यवस्था के मुताबिक, पहली फॉर्च्यूनर की स्टीयरिंग खुद केतन ने थामी और उसकी बगल वाली को-ड्राइवर सीट पर निशा आकर बैठ गई। दूसरी फॉर्च्यूनर में पीछे की सीट पर मैनेजिंग डायरेक्टर नीरज अपने लैपटॉप के साथ जम गया और गाड़ी की कमान अभय सिंह के हाथों में थी। दोनों गाड़ियों के इंजन एक साथ गरमाए और बनारस की तंग गलियों के कोलाहल को चीरते हुए हाइवे की अंतहीन सड़क पर दौड़ पड़े।

बनारस की सीमाएं पीछे छूट चुकी थीं और फॉर्च्यूनर अब नेशनल हाइवे पर 140 की रफ्तार से हवा को चीर रही थी। गाड़ी के भीतर का माहौल बेहद दिलचस्प था। एक तरफ केतन का पूरा ध्यान सड़क पर था, उसका दायां हाथ गियर पर और बायां हाथ स्टीयरिंग पर मुस्तैद था, आँखों में वही चिर-परिचित गंभीरता थी। वहीं दूसरी तरफ, निशा के लिए यह सफर किसी ख्वाब जैसा था।

वह बार-बार फाइलों को पलटने का नाटक करती, पर उसकी नजरें टैबलेट की स्क्रीन से फिसलकर केतन के तीखे प्रोफाइल, उसकी कड़क कलाई और स्टीयरिंग थामने के उसके बेबाक अंदाज पर जाकर ठहर जाती थीं। निशा के दिल में केतन के प्रति यह झुकाव इस कदर एकतरफा और गहरा हो चुका था कि उसे केतन के आसपास होना भी एक सुरीला संगीत जैसा लगता था। वह जानती थी कि केतन के भीतर अतीत का कोई बहुत बड़ा तूफान है, वह यह भी जानती थी कि केतन काम के अलावा कुछ नहीं सोचता, लेकिन फिर भी उसका दिल केतन के इस गंभीर वजूद की ओर खिंचा चला जाता था।

दोपहर के करीब एक बजे, केतन ने सुल्तानपुर हाइवे पर एक बड़े 'राजपूताना ढाबे' के सामने गाड़ी रोकी। पीछे से नीरज और अभय सिंह की गाड़ी भी आकर लग गई।

पहाड़ी रास्तों पर चढ़ने से पहले पेट पूजा जरूरी थी। ढाबे के मचान पर चारपाइयों के बीच कड़क बनारसी स्टाइल में तंदूरी रोटियां, कड़ाही पनीर और दाल मखनी का ऑर्डर दिया गया। मिट्टी के कुल्हड़ में जब छाछ आई, तो नीरज ने एक लंबा घूंट लेकर कहा, "गुरु, बनारस की गर्मी के बाद अब लग रहा है कि जान में जान आई है।" वैसे निशा, तुम्हारी फाइनैस टीम ने रास्ते में ही कमाल कर दिया, शर्मा जी का मैसेज आया है कि सीमेंट और मौरंग की गाड़ियाँ ढाबे से निकलने से पहले ही साइट पर पहुँच चुकी हैं।"

निशा ने मुस्कराकर केतन की तरफ देखा, "मैंने सुबह ही कहा था सर, केतन सर का आदेश हो और काम रुक जाए, ऐसा हमारी टीम में होता नहीं है।" केतन ने चुपचाप अपनी रोटी तोड़ी और बिना कोई प्रतिक्रिया दिए कहा, "काम समय पर होना ही चाहिए निशा, क्योंकि 5 जून को हमें वहां सिर्फ रिबन नहीं काटना है, बल्कि पहाड़ों को यह बताना है कि कानपुर से आए लड़के हारना नहीं जानते।" निशा बस केतन के उस लहजे को निहारती रह गई। उसका यह खिंचाव अब धीरे-धीरे उसके चेहरे की लालिमा में बदलने लगा था।

शाम ढलते-ढलते गाड़ियाँ लखनऊ बाईपास को पार कर बरेली-रामपुर हाइवे पर आ चुकी थीं। यहाँ का मौसम अचानक बदलने लगा था। पहाड़ों के करीब आने का अहसास हवाओं में घुल चुका था और हाइवे पर हल्की-हल्की धुंध (कोहरा) छाने लगी थी। रफ्तार थोड़ी कम हुई, पर गाड़ियों का तालमेल वैसा ही बना रहा।

रात के करीब नौ बजे, रामपुर के पास एक पुराने और सलीके से सजे 'ट्री-हाउस कैफ़े' पर दूसरा स्टॉप लिया गया। पहाड़ों की असली चढ़ाई अब कुछ ही घंटों की दूरी पर थी, इसलिए अभय सिंह ने सलाह दी कि यहाँ सब थोड़ी कड़क कॉफी या चाय पी लें।

कैफ़े के कांच के केबिन से बाहर धुंधली सड़कें दिख रही थीं। नीरज और अभय सिंह बगल की मेज पर बैठकर उत्तराखंड के वीआईपी

इनविटेशन कार्ड्स की लिस्ट री-चेक कर रहे थे। केतन कैफ़े के आउटर डेक पर खड़ा था और ठंडी हवाओं को महसूस कर रहा था।

निशा दो कप स्पेशल इलाइची वाली चाय लेकर उसके पास आकर खड़ी हो गई। उसने एक कप केतन की तरफ बढ़ाया। केतन ने चाय थामते हुए कहा, "थैंक्स निशा।"

"सर, आप बहुत सोचते हैं," निशा ने अपनी बड़ी-बड़ी चंचल आँखों से सीधे केतन के चेहरे को देखते हुए कहा। निशा का दिल इस वक्त इतनी तेजी से धड़क रहा था कि उसे डर था कि कहीं केतन उसकी धड़कनें न सुन ले। वह चाहती थी कि केतन बस एक बार उसकी आँखों में देखे, उसकी फिक्र को समझे। वह एकतरफा ही सही, पर केतन के उस गहरे सत्राटे का हिस्सा बनना चाहती थी।

केतन ने चाय की चुस्की ली, उसकी आँखें हाइवे की धुंध को चीर रही थीं। उसने कहा, "सोचना पड़ता है निशा। जब जिम्मेदारी बड़ी हो, तो दिमाग को चौबीसों घंटे चालू रखना पड़ता है। पहाड़ों का रास्ता जितना खूबसूरत है, उतना ही खतरनाक भी।"

निशा ने अपने हाथों में पकड़े चाय के कुल्हड़ को और कसकर भींच लिया। गरम मिट्टी की तपन उसकी उँगलियों में उतर रही थी, पर सीने के भीतर जम चुकी ठंडक कम होने का नाम नहीं ले रही थी। उसने केतन के चेहरे को देखा और मन ही मन बुदबुदाई—'*खतरनाक तो आपकी यह खामोशी है सर, जिससे मैं रोज़ लड़ती हूँ और रोज़ हार जाती हूँ...*'

पर जुबान से उसने बेहद सधे हुए लहज़े में सिर्फ़ इतना ही कहा, "आप साथ हैं सर, तो रास्ता कैसा भी हो, हम पहुँच ही जाएँगे।"

केतन ने अपनी आँखें उठाई और पहली बार सीधे निशा की तरफ़ देखा। उस पल दोनों की नज़रें एक-दूसरे से जा मिलीं।

शाम की ढलती हुई पीली रोशनी निशा की आँखों में तैर रही थी। उन आँखों में सिर्फ़ एक सहकर्मि का आदर नहीं था, बल्कि एक ऐसी गहरी आत्मीयता थी जो बिना कुछ कहे भी सब कुछ बयान कर रही थी—जैसे सूखी ज़मीन पर बरसों बाद बारिश की पहली बूँद पड़ी हो। निशा की पुतलियों में केतन को अपनी उस बिखरी हुई दुनिया का एक साफ़ आईना दिखा, जहाँ कोई उसे बिना शर्त समझना चाहता था।

उस ख़ामोश निगाह में इतना समर्पण था कि एक पल को केतन की साँसें ठहर गईं। उसका दिल, जो बरसों से पत्थर बना बैठा था, हल्का-सा थरथराया। पर अगले ही लम्हे, अतीत का वह सुलगता हुआ ज़ख़्म जाग उठा—अनुश्री .., वह बंद दरवाज़ा, और अकेलापन।

केतन ने पलकें झुका लीं और नज़रों का वह नाज़ुक पुल एक झटके में टूट गया। उसने एक कदम पीछे खींच लिया, जैसे किसी ने उसे आग के पास जाने से रोक दिया हो।

“रास्ते पर पहुँचना आसान होता है निशा,” केतन की आवाज़ में फिर से वही सख्त रूखापन लौट आया था, “मुश्किल तो उस सफ़र में किसी के पीछे छूट जाने का दर्द सहना होता है।”

निशा ने उसके बदले हुए तेवर को देखा, पर उसकी मुस्कान फीकी नहीं पड़ी। उसने चाय का घूँट लिया और बहुत धीमे से बोली, “और अगर कोई पीछे छूटने के डर से कभी चलना ही बंद कर दे, तो क्या वह ज़िंदगी से इंसाफ़ कर रहा है सर?”

केतन ने चौंककर उसे देखा।

रामपुर से निकलने के बाद रात के सन्नाटे में गाड़ियाँ हल्द्वानी और फिर काठगोदाम पहुँचीं। काठगोदाम से पहाड़ों की चढ़ाई शुरू होते ही दृश्य पूरी तरह बदल गया। रात के बारह बज रहे थे। पहाड़ों पर चीड़ और देवदार के ऊंचे-ऊंचे पेड़ों के बीच से रास्ता सांप की तरह बलखाता हुआ ऊपर जा रहा था। नीचे देखने पर हल्द्वानी शहर की रोशनी किसी दीवाली के दीयों जैसी जगमगा रही थी।

पीछे वाली गाड़ी में नीरज ने वीरू को फोन लगाया, “हाँ वीरू, कहाँ पहुँचा? हम काठगोदाम क्रॉस कर चुके हैं।” उधर से वीरू की कड़क कनपुरिया आवाज़ गूँजी, “अरे भाई! हम काठगोदाम वाले रेलवे क्रॉसिंग के पास ही खड़े हैं, हमारी गाड़ी तुम्हारे ठीक पीछे लग रही है।” नीरज ने पीछे मुड़कर देखा, तो वाकई एक और गाड़ी उनकी हेडलाइट्स पलैश कर रही थी।

आगे वाली गाड़ी में, पहाड़ों के तीखे मोड़ों पर केतन पूरी एकाग्रता से फॉर्च्यूनर को कट मार रहा था। हर मोड़ पर जब गाड़ी थोड़ा झुकती, तो निशा का कंधा सहज ही केतन के करीब आ जाता। उस बेहद करीबी छुअन से निशा के पूरे बजूद में एक सिहरन दौड़ जाती। वह खिड़की के

शीशे को थोड़ा नीचे गिरा देती, जिससे पहाड़ों की बर्फ़ीली, ठंडी हवा सीधे उसके चेहरे से टकराती। वह केतन के इतने पास थी, फिर भी केतन उससे मीलों दूर अपनी ही किसी दुनिया में था। निशा का यह एकतरफ़ा, खामोश और गहरा खिंचाव इस सफ़र को और भी ज्यादा रूमानी और कसक से भरा बना रहा था।

सुबह के ठीक चार बजे, जब आसमान में भोर की पहली लाली बिखरने वाली थी और पहाड़ों पर कोहरे की एक मोटी, सफ़ेद चादर लिपटी हुई थी, तीनों ब्लैक फॉर्च्यूनर गाड़ियाँ नैनीताल की सरहद में दाखिल हुईं। सामने नैनी झील का शांत, गहरा और जादुई पानी कोहरे की ओट से झांक रहा था।

गाड़ियाँ जैसे ही तल्लीताल की उस हेरिटेज बिल्डिंग के सामने आकर रुकीं, केतन, नीरज, वीरू और निशा नीचे उतरे। सामने वाकई लैंडस्लाइड का मलबा था, दीवार टूटी हुई थी, पर केतन की आँखों में कोई डर नहीं था। KSLS की पूरी टीम वहाँ मौजूद थी, पहाड़ों के इस पहले इम्तिहान के बीच, केतन ने गहरी सांस ली।

केतन वहाँ से मुड़ा और परिसर के एक कोने में पड़े देवदार के भारी तख्ते पर जाकर बैठ गया। उनके अगल-बगल नीरज और वीरू आकर खड़े हो गए। वीरू ने अपनी लेदर जैकेट की चेन को थोड़ा ऊपर चढ़ाया और चारों तरफ का मुआयना करते हुए एक गहरी और तल्ख सांस ली।

"केतन भाई, शर्मा अपनी जगह सही डर रहा था," वीरू ने कहा। "पहाड़ों का मामला बिल्कुल अलग है, पर यहाँ लोकल एडमिनिस्ट्रेशन और पीडब्ल्यूडी वाले अपनी चाल से चलेंगे। इंटरनेट और बिजली का जो रायता फैला है, वह सबसे बड़ा सिरदर्द है।"

नीरज ने अपना मैकबुक वहीं तख्ते पर खोला और स्क्रीन को वीरू और केतन की तरफ घुमाते हुए कहा, "बिजली का लोड तो हमारा जनरेटर संभाल लेगा वीरू भाई, उसकी टेंशन मत लो। दिक्कत इंटरनेट की है। नैनीताल के लोकल एक्सचेंज से जो फाइबर लाइन आ रही थी, उसके तीन पोल उखड़ चुके हैं। मैंने रास्ते में ही बीएसएनएल के टीडीएम से बात की है। वे कह रहे हैं कि नया एस्टीमेट बनेगा, फाइल अप्रूव होगी, तब जाकर काम होगा। सरकारी काम है, हफ़्तों लग सकते हैं।"

केतन ने तख्ते से एक छोटा सा पत्थर उठाया और उसे सामने नैनी झील की तरफ उछाल दिया। उसने नीरज की तरफ देखा, "नीरज भाई, टीडीएम को सीधे फोन लगाओ और बोलो कि KSLS उनकी पूरी टीम का लॉजिस्टिक्स और लेबर कॉस्ट खुद बियर करने को तैयार है। उन्हें बोलो कि हमें फाइल नहीं, कल शाम तक फाइबर लाइन लाइव चाहिए। अगर एक्स्ट्रा कमर्शियल चार्ज देना पड़े, तो निशा से तुरंत चेक साइन करवाओ।"

"और वीरू भाई..." केतन ने वीरू के कंधे पर हाथ रखा, "तुम तुरंत लोकल कोतवाली और पीडब्ल्यूडी के दफ्तर जाओ। उन्हें समझाओ कि 5 जून को जो उद्घाटन हो रहा है, उसमें राज्य के बड़े अधिकारी और वीआईपी आ रहे हैं। अगर यह रास्ता दोपहर तक साफ नहीं हुआ, तो यह लोकल एडमिनिस्ट्रेशन की नाकामी मानी जाएगी। अपना रसूख इस्तेमाल करो भाई, परसों सुबह तक यह पूरा परिसर मुझे नीट एंड क्लीन चाहिए।"

दोनों दोस्त अपने-अपने टास्क की ओर बढ़ गए। केतन अकेले वहीं बैठे रहा। हवा और ठंडी हो चुकी थी और कोहरे की चादर अब और घनी हो गई थी। केतन ने अपनी आँखें मूँदीं। नैनीताल की इस पहली सुबह ने उन्हें अपनी पूरी ताकत झोंकने पर मजबूर कर दिया था।

शाम ढलते-ढलते परिसर का हुलिया पूरी तरह बदल चुका था। केतन ने खुद आगे बढ़कर मुस्तैदी से राहत कार्य का जायजा लिया; रास्ता साफ हो चुका था, इंटरनेट लाइव था और प्लाईवुड का डेकोरेटिव पार्टिशन मलबे को पूरी तरह छुपा चुका था। इसके तुरंत बाद होटल के कॉन्फ्रेंस रूम में नैनीताल की कोर टीम के साथ एक संक्षिप्त मीटिंग हुई। केतन ने नपे-तुले शब्दों में सबको आगे के 5 दिनों के लिए ब्रीफ करते हुए कहा, "अगले पांच दिन हमारे लिए जंग की तरह हैं। बैच मैनेजमेंट, वीआईपी लॉजिस्टिक्स और स्टडी मटेरियल का डिस्ट्रीब्यूशन हर हाल में कल सुबह तक ट्रैक पर आ जाना चाहिए। पैनिक की कोई जगह नहीं है, हमें 5 जून को हर हाल में झंडा लहराना है।"

मीटिंग खत्म होते-होते रात के ग्यारह बज चुके थे। दिमाग की भारी थकान को मिटाने के लिए केतन यूँ ही नैनी झील के किनारे टहलने निकल पड़ा। उसके साथ वीरू और निशा भी थे, जबकि बाकी लोग

होटल में ही रुक गए थे। संयोग से पूरी टीम के कमरे इसी झील के ठीक सामने वाले हेरिटेज होटल में बुक थे।

रात के इस पहर भी नैनीताल पूरी तरह सोया नहीं था; ग्यारह बजने के बावजूद झील के आसपास सैलानियों और स्थानीय लोगों की अच्छी-खासी भीड़ चहल-पहल कर रही थी। कोहरे की एक बेहद घनी, सफेद और ठंडी चादर पूरी झील पर पसरी हुई थी, मानो आसमान के बादल ज़मीन पर उतरकर पानी से बतिया रहे हों। मॉल रोड की पीली और मद्धम स्ट्रीट लाइट्स जब उस कोहरे को चीरकर झील के शांत, काले पानी पर पड़तीं, तो ऐसा लगता जैसे पानी की सतह पर हज़ारों जुगनू एक साथ कांप रहे हों।

केतन ने गहरी सांस ली और घूमती हुई भीड़ के बीच इस असीम विस्तार को देखा। यह खूबसूरत नजारा आँखों को सुकुन तो दे रहा था, पर उनके दिलों को बांधने वाली असली कशिश यहाँ कहाँ थी! केतन के दिमाग में अनायास ही अपनी उस 'मोतीझील' का अक्स उभर आया—वही मोतीझील जो इस पूरे सफर की रूह थी, जिसने उनके वजूद के हर उतार-चढ़ाव को देखा था। जहाँ नैनी झील कुदरत के एक ठंडे, शांत और अजनबी तिलिस्म जैसी लग रही थी, वहीं मोतीझील उनके अपनों के शोर, उनकी धड़कनों, उनकी पहली बड़ी नाकामियों और फिर वहीं से उठ खड़े होने की ज़िद के हर किस्से की गवाह थी। नैनी का यह कोहरा भले ही खूबसूरत था, पर मोतीझील की वह जानी-पहचानी हवा उनके संघर्षों की असली दास्तान बयां करती थी। उस मोतीझील के मुकाबले पहाड़ों की यह विशाल झील सिर्फ एक खूबसूरत पड़ाव भर थी। केतन दोनों हाथ अपनी जैकेट की जेबों में डाले, इसी कशमकश और टहलती भीड़ के बीच कोहरे को चीरते हुए आगे बढ़ रहा था।

इसी जादुई माहौल के बीच, सड़क के किनारे लगी एक पीली लाइट के ठीक नीचे, लकड़ी के एक छोटे और पुराने से बोर्ड पर केतन की नज़र पड़ी। उस बोर्ड पर बड़े सादे अक्षरों में लिखा था—'अनुकेतन आरोग्य संस्थान'। नीचे बहुत हल्के से दर्ज था कि यह एनजीओ कैसर पेशेंट्स को सहारा देने के लिए काम करता है। 'अनुकेतन' शब्द आँखों से टकराते ही केतन के बढ़ते कदम पल भर के लिए ठिठक गए। दिल के किसी बेहद अंधरे कोने में सोई हुई एक पुरानी टीस ने बहुत हल्के से



करवट ली। वह उस साधारण से बोर्ड को ज़रा ध्यान से देखने लगा, मानो उस नाम की बनावट में कुछ टटोल रहा हो।

वीरू अपनी ही धुन में पहाड़ों की हवा का मज़ा लेता हुआ और भीड़ को पार करता हुआ थोड़ा आगे निकल चुका था, जबकि निशा कुछ कदम पीछे रहकर केतन के इस अचानक रुकने को देख रही थी। केतन अभी उस नाम को पढ़ ही रहा था कि आगे से वीरू की आवाज़ गूँजी, "अरे केतन भाई, ज़रा आगे आओ! ये देखो, यहाँ मोड़ पर अपनी KSLS ब्रांच का नया पोस्टर कोहरे में भी क्या चमक रहा है!"

वीरू की आवाज़ से माहौल का वो सम्मोहन एक झटके में टूटा। केतन ने ठंडी हवा की एक लंबी सांस ली, चेहरे पर वापस वही भाव ओढ़े और बिना कुछ कहे वीरू की तरफ बढ़ गया।

केतन को अचानक आगे बढ़ता देख, पीछे खड़ी निशा ने भी उस बोर्ड पर लिखे नाम—'अनुकेतन' को बस यूँ ही एक सरसरी नज़र से पढ़ा। चूँकि वह इसके पीछे छिपे किसी अतीत या गहरे राज से बिल्कुल अनजान थी, इसलिए उसके दिमाग में कोई हलचल नहीं हुई। उस पूरे लंबे शब्द में से उसे तो बस एक ही चीज़ साफ-साफ दिखाई पड़ी—उसमें लिखा 'केतन' का नाम। उसने मन ही मन सोचा कि पहाड़ों के इस अनजान कोने में भी केतन के नाम जैसा कुछ लिखा है, और एक हल्की सी मुस्कान के साथ उसने उस साधारण से बोर्ड से अपनी नज़रें हटा लीं। वह बिना कुछ सोचे-समझे, कोहरे और टहलती हुई भीड़ के बीच आगे बढ़ते केतन के पीछे-पीछे खामोशी से चल दी। नैनीताल की वह ठंडी और धुंधली रात अपने भीतर कई अनकहे राज छुपाए चुपचाप आगे बढ़ रही थी।

कोहरे और सैलानियों की भीड़ को पीछे छोड़ते हुए जब वे तीनों होटल वापस लौटे, तो रात के सवा ग्यारह बज चुके थे। वीरू थकावट के कारण सीधे अपने कमरे की तरफ बढ़ गया, लेकिन निशा कुछ जरूरी फाइलों पर दस्तखत लेने के लिए केतन के सुइट में चली आई।

कमरे के भीतर हीटर की हल्की सरसराहट के बीच केतन ने अपनी भारी जैकेट उतारी, लेकिन इस बार उसके कदमों में वह पुरानी फुर्ती नहीं थी। चेहरे पर अजीब सा पीलापन था और उसकी सांसें भारी चल

रही थीं। दिन भर के मानसिक तनाव ने आखिरकार उसके शरीर पर असर दिखा दिया था।

निशा ने टैबलेट और कुछ प्रिंटेड पेपर्स मेज पर रखते हुए बात की शुरुआत की, "सर, ये नैनीताल म्युनिसिपल कॉर्पोरेशन और पीडब्ल्यूडी की तरफ से जो फाइनल क्लीयरेंस मिलनी थी, उसकी ड्राफ्ट कॉपी है। बस आपके सिग्नेचर चाहिए।"

केतन ने पेन उठाया, लेकिन दस्तखत करते वक्त उसका हाथ हल्का सा कांपा। उसने किसी तरह साइन पूरे किए और जैसे ही पेन वापस टेबल पर रखा, उसे एक तेज चक्कर आया। उसने तुरंत अपनी दोनों हथेलियों से अपना माथा थाम लिया और उसकी आँखें खुद-ब-खुद बंद हो गईं।

निशा ने यह भांपते हुए तुरंत थोड़ा करीब कदम बढ़ाया। उसकी नज़रों में काम की औपचारिकता की जगह एक गहरी व्याकुलता और फिक्र ने ले ली। वह बिना कुछ बोले, अपनी निगाहों से केतन के चेहरे के हाव-भाव को पढ़ने लगी। उसकी आँखें केतन के माथे पर आए पसीने की बूंदों और उसकी थकी हुई सांसों पर टिक गईं। वह अपनी नज़रों से केतन के उस सख्त मुखौटे को चीरकर उसके भीतर की कमजोरी और तकलीफ को नाप रही थी।

निशा ने अपनी आवाज को बेहद धीमा और आत्मीय करते हुए पूछा, "सर... आपकी तबीयत ठीक नहीं है?"

केतन ने बिना आँखें खोले, बेहद भारी आवाज़ में कहा, "कोई बात नहीं, निशा... बस थोड़ा सिरदर्द है और थकान है। आप जा सकती हैं।"

लेकिन निशा वहीं खड़ी रही। उसने अपनी फिक्रमंद नज़रों को केतन के चेहरे से हटने नहीं दिया। वह केतन के इस 'कोई बात नहीं' के पीछे छिपी तकलीफ को अच्छी तरह देख पा रही थी। उसने आगे बढ़कर बहुत आहिस्ते से केतन के माथे के पास अपना हाथ बढ़ाया। जैसे ही उसकी उंगलियां केतन के माथे से छुईं, वह चौंक गई। केतन का शरीर बुखार से तप रहा था।

"सर, आपको तो बहुत तेज बुखार है। आप इस हालत में यहाँ कुर्सी पर नहीं बैठ सकते," निशा की आवाज में इस बार एक अजीब सी कशिश नजर आई।

केतन ने आँखें खोलीं और निशा की उन गहरी आँखों में देखा। कमरे का तापमान जैसे पल भर के लिए ठहर गया। केतन ने मना करना चाहा, कुछ कहना चाहा, लेकिन उसके शरीर में इस वक्त बिल्कुल ताकत नहीं थी। उसने निशा के बढ़े हुए हाथ का सहारा लिया और भारी कदमों से सुइट के बेडरूम वाले हिस्से की तरफ बढ़ गया।

केतन जैसे ही बेड पर लेटा, उसने थकान और कमजोरी के मारे अपनी आँखें मूँद लीं। पहाड़ों की कड़ाके की ठंड के बीच उसका पूरा वजूद बुखार की तपन से कांप रहा था।

निशा बिना एक पल गंवाए उठी। उसने सबसे पहले केतन के पैरों से जूते उतारे और उस पर होटल का भारी और गर्म कंबल अच्छी तरह ओढ़ा दिया। इसके बाद वह सुइट के बाथरूम से एक साफ तौलिया और कांच के कटोरे में ठंडा पानी लेकर आई। वह बेड के ठीक किनारे, केतन के सिरहाने बैठ गई। कमरे में हीटर की सरसराहट के बीच दोनों के बीच का सन्नाटा और गहरा हो गया था।

निशा ने ठंडे पानी में तौलिया भिगोया, उसे हल्के से निचोड़ा और बेहद कोमलता से उसे केतन के तपते हुए माथे पर रख दिया। जैसे ही बर्फ जैसी ठंडी पट्टी केतन के माथे से छुई, केतन के मुंह से एक ठंडी आह निकल गई और उसके चेहरे का तनाव थोड़ा कम हुआ।

कमरे की मद्धम, पीली रोशनी में निशा पूरी एकाग्रता और धीरज के साथ पट्टी बदल-बदल कर उसके माथे पर रखने लगी। इस पूरी प्रक्रिया के दौरान दोनों के बीच कोई शब्द नहीं गुंजा। केतन ने एक बार अपनी आँखें खोलीं और बिल्कुल करीब बैठी निशा को देखा। निशा का पूरा ध्यान इस वक्त सिर्फ उसकी पट्टी बदलने पर था। उसके चेहरे पर केतन के लिए जो फिक्र और आत्मीयता थी, वह केतन के दिल को भीतर तक छू गई। केतन का हाथ अनायास ही कंबल से बाहर आया और उसने बहुत हल्के से निशा की कलाई को छू लिया, मानो वह उस सुकून के लिए उसका शुक्रिया अदा कर रहा हो जो इस वक्त उसे मिल रहा था।

निशा के हाथ पल भर के लिए रुक गए। उसने चौंककर केतन की तरफ देखा, जिसकी आँखों में इस वक्त कोई बेरुखी नहीं थी, बल्कि एक अजीब सी लाचारी और समर्पण था। निशा ने अपनी नजरें नहीं हटाई, बल्कि उसने अपनी दूसरी हथेली बहुत आहिस्ते से केतन के हाथ पर

रख दी, मानो वह उसे यकीन दिला रही हो कि जब तक वह यहाँ है, उसे किसी बात की चिंता करने की जरूरत नहीं है।

कोहरे से घिरी उस पहाड़ी रात में, कमरे की मद्धम रोशनी के बीच, उनकी इस खामोशी, धड़कनों की बढ़ती रफ्तार और एक-दूसरे के वजूद की इस छुअन ने हवा में एक बेहद गहरा, रूमानी और अनकहा सा अहसास घोल दिया था। निशा हर बार पट्टी बदलते वक्त केतन के शांत पड़ते जा रहे चेहरे को बेहद शिद्धत से निहार रही थी, और केतन इस वक्त अपनी सारी ढाल गिराकर, दुनिया भर की बिज़नेस की जंग को भूलकर, चुपचाप उस आत्मीय सुकून को महसूस कर रहा था। पहाड़ों की वह ठंडी रात अब सिर्फ रहस्यों से भरी नहीं थी, बल्कि उसमें एक अनजानी सी आत्मीयता की एक लंबी, खूबसूरत दास्तान लिख दी गई थी।

सुबह की पहली किरण ने जब नैनीताल की वादियों को छुआ, तो झील का मंजर किसी दैवीय पेंटिंग जैसा उभर आया। रात भर का वो घना कोहरा अब धीरे-धीरे छंटकर पानी की सतह पर मखमली धुंध की तरह तैर रहा था। झील का गहरा हरा पानी सुबह की सुनहरी धूप में ऐसे चमक रहा था मानो किसी ने नीलम के विशाल कटोरे में पिघला हुआ सोना उड़ेल दिया हो। चारों तरफ खड़े देवदार और चीड़ के ऊंचे पेड़ शांत खड़े अपनी हरी पत्तियों से ओस की बूंदें झील में टपका रहे थे, जिससे पानी की शांत सतह पर छोटी-छोटी तरंगें उठ रही थीं। मॉल रोड पर सुबह की ताजी हवा के साथ दूर किसी मंदिर की घंटियों और भजनों की मद्धम आवाज गूँज रही थी। नैनी झील का यह अलौकिक रूप जहाँ कुदरत की असीम सुंदरता को समेटे हुए था।

इधर, हेरिटेज होटल के कमरे में केतन की आँखें धीरे से खुलती हैं। हीटर की हल्की सरसराहट के बीच कमरे के भीतर सुबह की मद्धम और गुनगुनी रोशनी खिड़की के भारी पर्दों से छनकर आ रही थी। केतन ने जैसे ही अपनी चेतना को समेटा, उसे अपने सिर पर एक अजीब सा भारीपन और एक बेहद आत्मीय, मखमली छुअन का अहसास हुआ। उसका शरीर अब हल्का महसूस कर रहा था, बुखार उतर चुका था, लेकिन वजूद में एक अजीब सी बेबसी थी।

उसने बिना हिले-डुले बहुत आहिस्ते से अपनी नज़रें ऊपर घुमाईं। कमरे की उस मद्धम पीली और सफेद रोशनी के बीच जो दृश्य उसकी आँखों के सामने था, उसने पल भर के लिए उसके दिल की धड़कन ही रोक दी। वह स्तब्ध रह गया।

उसका सिर बेड के सिरहाने नहीं था, बल्कि निशा बेड पर ही उसके सिरहाने बैठी हुई थी। वह केतन के ठीक बगल में बेड पर ही बैठी, अपने घुटनों को हल्का सा समेटे, अपनी पीठ को बेड के बैक-रेस्ट (सिरहाने) से टिकाए हुए सो रही थी। केतन का सिर पूरी तरह उसकी गोद में महफूज था। रात भर पट्टी बदलते-बदलते, केतन के तपते माथे को सहलाते-सहलाते वह कब इसी मुद्रा में, बेड पर ही केतन का सिर अपनी हथेलियों के घेरे में लिए गहरी और बेसुध नींद में चली गई, उसे खुद पता नहीं चला था। उसके रेशमी, खुले हुए बाल केतन के चेहरे और गालों के पास बिखरे हुए थे, और ठंडी हवा के झोंके से उनका एक सिरा केतन के होठों को छू रहा था। निशा का सांस लेना, उसकी छाती का धीरे-धीरे ऊपर-नीचे होना और उसके हाथों की वह गर्माहट केतन को अपने बेहद करीब महसूस हो रही थी। वह इतनी शिद्दत से बेड पर बैठे-बैठे ही केतन को अपनी पनाह में लिए हुए थी, मानो दुनिया की कोई भी आंच वह केतन तक पहुँचने नहीं देना चाहती थी।

केतन एकटक, बिना पलक झपकाए निशा के उस शांत, मासूम और फिक्रमंद चेहरे को निहारने लगा। सुबह की पहली किरण निशा के चेहरे पर पड़ रही थी, जिससे उसके चेहरे का भोलापन और निखर आया था। उसके होठों पर एक बेहद हल्की सी शिकन थी, जो शायद रात भर की उस घबराहट और थकान की गवाही दे रही थी। केतन ने कभी निशा को इस रूप में, इतने करीब से नहीं देखा था। हमेशा कड़े अनुशासनके बीच रहने वाली निशा, इस वक्त कुदरत की किसी सबसे खूबसूरत और कोमल रचना जैसी लग रही थी। उसका यह मूक समर्पण केतन के सीने में एक अजीब सी हलचल पैदा कर रहा था।

निशा को इस तरह देखते-देखते केतन का दिमाग एक झटके में दो साल पीछे चला गया। अतीत का एक बंद, गहरा और रिसता हुआ पन्ना उसकी आँखों के सामने सजीव हो उठा। ठीक ऐसा ही एक वाकया दो साल पहले कानपुर में घटा था, जब वह अपने जीवन के सबसे बुरे दौर

में था, बुरी तरह बीमार था और अनुश्री ने बिल्कुल इसी तरह बेड पर उसके सिरहाने बैठकर उसका सिर अपनी गोद में लेकर, जागते हुए पूरी रात काट दी थी। वही आत्मीयता, वही समर्पण, वही निश्छल परवाह और दोनों के बीच का वही खामोश सन्नाटा...

केतन का दिल जो अनुश्री के धोखे और उसके अचानक गायब होने की कड़वाहट और नफरत से पत्थर हो चुका था, इस हुबहू समानता को देखकर भीतर तक हिल गया। दो साल पहले अनुश्री का वह चेहरा और आज निशा का यह चेहरा—दोनों के बीच की यह कशमकश केतन के ज़हन में एक बवंडर की तरह उठ खड़ी हुई। जहाँ एक तरफ अतीत का धोखा उसे किसी पर भरोसा न करने की चेतावनी दे रहा था, वहीं निशा की इस छुअन ने उसके पत्थर हो चुके दिल की परतों को पिघलाना शुरू कर दिया था। क्या यह सिर्फ एक इत्तेफाक था, या पहाड़ों की यह रहस्यमयी रात उसे वापस उसी अतीत की तरफ खींच रही थी

तभी अचानक निशा की पलकें धीरे से हिलीं और उसकी आँखें खुल गईं। जागते ही जैसे ही उसे होश आया, उसकी पहली नज़र अपनी गोद में लेटे केतन पर पड़ी। सुबह की हल्की सी सुस्ती उसकी आँखों में थी, लेकिन अगले ही पल केतन को आँखें खोले खुद को निहारते देख उसकी नींद हवा हो गई। उसने बिना किसी झिझक के, अपनी बेहद कोमल और ठंडी उंगलियों को एक बार फिर केतन के मांटे पर रख दिया। उस रूहानी छुअन से केतन के भीतर तक एक ठंडी सिहरन दौड़ गई।

निशा ने अपनी आवाज़ को बेहद धीमा, मद्धम और आत्मीय करते हुए पूछा, "सर... अब आप ठीक हैं? बुखार कम हुआ?"

उसकी आवाज़ में रात भर की थकान के साथ-साथ एक अनजाना सा अपनापन और फिक्र घुली हुई थी। केतन ने तुरंत कोई जवाब नहीं दिया। उसने बहुत आहिस्ते से अपना सिर निशा की गोद से हटाया और बेड पर पीछे की तरफ टिक कर बैठ गया। उसका शरीर अब बुखार की तपन से पूरी तरह आज़ाद था और मन का बवंडर भी इस सुबह की धूप में शांत हो चुका था। केतन के चेहरे की वे रेखाएं, जो हमेशा दुनिया के लिए एक अभेद्य दीवार बनी रहती थीं, इस वक्त मोम की तरह पिघल चुकी थीं। उसके होठों पर एक ऐसी गहरी मुस्कान बिखर गई, जो निशा

ने आज तक केतन के चेहरे पर कभी नहीं देखी थी। वह बस खामोश रहकर, अपनी पूरी आत्मीयता से निशा को एकटक निहारने लगा।

केतन की वह सीधी, गहरी और मुस्कुराती हुई आँखें जब निशा की नज़रों से टकराईं, तो कमरे का पूरा सन्नाटा एक जादुई रूमानी कशिश से सराबोर हो उठा। निशा का दिल एक पल के लिए अपनी रफ्तार भूल गया। केतन का यह बदला हुआ रूप, उसकी आँखों में अपने लिए यह ठहराव देखकर निशा के भीतर एक मीठी सी घबराहट और हया दौड़ गई। वह इस अचानक मिली आत्मीयता के अहसास से भीतर तक शर्मा गई।

उसने शर्माकर अपनी नज़रें केतन के चेहरे से हटाईं और खुद को संभालते हुए, बेड से उठकर खड़ी हो गई। सुबह की सुनहरी धूप खिड़की से छनकर उसके चेहरे पर पड़ रही थी, जिससे उसके गालों की लालिमा और निखर आई थी। उसने अपनी दोनों हथेलियों से चेहरे पर बिखरे हुए उन रेशमी, बेतरतीब बालों को बहुत नजाकत और सलीके से पीछे की तरफ संवारा।

"मैं... मैं आपके लिए गर्म कॉफी भिजवाती हूँ सर," निशा ने अपनी धड़कनों की कशमकश को छुपाते हुए बेहद धीमी और कंपकंपाती आवाज़ में कहा।

उसने झटपट बेड के पास रखी अपनी फाइलों को समेटा, एक आखिरी बार पलटकर केतन की उस मुस्कुराती हुई, जादुई आँखों को देखा और तेज़ कदमों से कमरे का दरवाज़ा खोलकर बाहर निकल गई। उसके जाने के बाद भी कमरे में उसकी खुशबू, उसके हाथों की वो मखमली छुआन और पहाड़ों की वह गुनगुनी, हसीन सुबह ठहर सी गई थी। केतन अब भी उसी खूबसूरत मुस्कान के साथ बंद दरवाज़े की तरफ देख रहा था। इस वक्त उसने अपने दिमाग से हर उलझन, हर बीते कल की कड़वाहट और सारे रहस्यों को परे धकेल दिया था। वह इस नए सवेरे की सुकून भरी छांव को पूरी तरह महसूस करना चाहता था।

4 जून की वह रात उम्मीद और घबराहट के बीच झूल रही थी। अगले दिन सुबह नौ बजे KSLS नैनीताल ब्रांच का फीता कटना था।

पूरे परिसर में अब मुस्तेदी थी। केतन अपने सुइट के लिविंग एरिया में बैठा कल सुबह की स्पीच के कुछ पॉइंट्स देख रहा था, तभी शर्मा जी ने

कमरे के दरवाज़े पर दस्तक दी। उसके हाथ में मखमली कपड़े से ढका हुआ एक खूबसूरत और भारी बॉक्स था।

"कम इन," केतन ने पेपर्स टेबल पर रखते हुए कहा।

शर्मा जी ने मुस्कुराते हुए भीतर कदम बढ़ाया और उस बॉक्स को केतन की टेबल पर रख दिया, "सॉरी सर, इस वक्त आपको डिस्टर्ब किया। लेकिन सुबह उद्घाटन के वक्त बहुत भागदौड़ रहेगी, इसलिए सोचा कि यह खास चीज़ मैं अभी आपके सुपुर्द कर दूँ।"

केतन ने कौतूहल से उस बॉक्स को देखा, "क्या है इसमें?"

"सर, यह एक 'मेमेंटो' है, जिसे कल सुबह मुख्य अतिथि और आपके वीआईपी गेस्ट्स को मंच पर भेंट किया जाना है," शर्मा जी ने कपड़े को हटाते हुए बॉक्स खोला। भीतर पीतल और महोगनी की लकड़ी से बना एक बेहद कलात्मक और अनोखा स्मृति-चिह्न चमक रहा था।

शर्मा जी ने आगे बताया, "केएसएलएस (KSLS) की इस नई ब्रांच ने अपनी ब्रांडिंग और प्रमोशन स्ट्रेटजी के तहत एक बहुत ही नेक पहल की है। हमारी टीम ने स्थानीय स्तर पर 'अनुकेतन आरोग्य संस्थान' नाम के एक एनजीओ को अपना ऑफिशियल पार्टनर बनाया है। यह एनजीओ उन मासूम बच्चों के लिए सहारा बनता है जो कैंसर जैसी गंभीर बीमारी से पीड़ित हैं। ये सारे मेमेंटो उन्हीं कैंसर पीड़ित बच्चों ने अपने हाथों से तैयार किए हैं।"

'अनुकेतन आरोग्य संस्थान' का नाम सुनते ही केतन के हाथ पल भर के लिए थम गए। झील के किनारे लगा वह लकड़ी का बोर्ड उसके ज़हन में एक कौंध की तरह गुज़रा, लेकिन उसने अपने चेहरे पर कोई भाव आने नहीं दिया।

उसने आगे बढ़कर उस मेमेंटो को अपने हाथों में उठा लिया। जब उसने उस लकड़ी और पीतल के जोड़ को करीब से देखा, तो उसकी नज़रें उसके केंद्र पर जाकर टिक गईं। उस पीतल की शीट पर KSLS का जो लोगो उकेरा गया था, वह हूबहू वैसा ही था जैसा कंपनी की फाइलों में होता है, लेकिन उस लोगो के ठीक नीचे, लकड़ी के बॉर्डर पर एक बेहद बारीक और खास नक्काशी की गई थी। वह नक्काशी KSLS के मुख्य स्लोगन और उसके डिज़ाइन के चारों तरफ एक विशिष्ट पैटर्न में बुनी गई थी।



वह डिज़ाइन इतना बेजान नहीं था कि उसे महज़ एक एनजीओ का काम समझकर छोड़ दिया जाए; उस बारीक पैटर्न के उभार और कोनों के घुमाव में फिनिशिंग और सलीके का तालमेल था, जिसने सीधे केतन के अंतर्मन को छू लिया। KSLS के लोगो को इस अनोखे कलात्मक ढंग से सहेजने का यह तरीका केतन के दिल की धड़कन को एक अलग ही रफ्तार दे गया। उसे देखते ही केतन के मन में खुद-ब-खुद एक तीव्र इच्छा जागी कि वह इस कलाकृति के पीछे के असली दिमाग को जाने।

केतन की आँखें उस मेमैंटो पर ही टिकी रहीं। उसने उसकी फिनिशिंग को अंगूठे से छूते हुए बेहद गहरे और गंभीर स्वर में पूछा, "यह एनजीओ कौन रन कर रहा है?"

शर्मा जी ने थोड़ा सोचते हुए अपनी गर्दन हिलाई, "यह तो मुझे ठीक से पता नहीं सर... क्योंकि यहाँ लोकल में तो सिर्फ इनके वॉलंटियर्स ही सारा काम देखते हैं। पर जहाँ तक मैंने सुना है, ये शायद मूल रूप से देहरादून का एनजीओ है।"

केतन ने थोड़ा रुककर उस मेमैंटो को वापस टेबल पर रखा और मैनेजर की तरफ देखते हुए शांत मगर दृढ़ आवाज में कहा, "ठीक है, ओके।"

फिर उसने थोड़ा गंभीर होते हुए आगे कहा, "इस एनजीओ की पूरी डिटेल्स निकालिए। मैं पर्सनल तौर पर इसके बारे में समझना चाहूँगा।"

शर्मा जी ने केतन के चेहरे के कड़े भावों को भांपते हुए तुरंत सिर झुकाया, "जी बिल्कुल सर, मैं कल सुबह तक इसकी सारी जानकारी आपके टेबल पर रखवा दूँगा।"

"थैंक यू" केतन ने संक्षिप्त में कहा।

शर्मा जी ने मुस्कुराकर अभिवादन किया और बेहद खामोशी से कमरे से बाहर निकल गये। उसके जाते ही कमरे का दरवाज़ा एक हल्के क्लिक के साथ बंद हो गया।

कमरे में एक बार फिर वही सन्नाटा पसर गया था, लेकिन अब टेबल लैंप की मद्धम पीली रोशनी में चमक रहा वह मेमैंटो केतन के सामने कई अनुत्तरित सवाल छोड़ गया था। केतन ने आगे बढ़कर उस कलाकृति को दोबारा अपने हाथ में लिया और KSLS के लोगो के नीचे बनी उस

खास नक्काशी को अपनी उंगलियों से सहलाने लगा। उसके सामने अनगिनत सवाल खड़े हो चुके थे

'अनुकेतन' नाम उसने पहले भी देखा था और तभी से उसका मन इस गुथी में उलझा हुआ था। लेकिन अब... इस 'कैंसर आरोग्य संस्थान', उन मासूम बच्चों की मासूमियत और इस अद्भुत मेमेंटो ने उसके भीतर विचारों की एक नई, अशांत और व्याकुल कर देने वाली धारा को जन्म दे दिया था। KSLS के लोगो के नीचे बनी उस खास, महीन नक्काशी को देखते ही अनुश्री का चेहरा उसके दिलो-दिमाग पर किसी बिजली की तरह कौंध गया। उसकी आँखें उस डिज़ाइन पर टिक गईं और मन में करोड़ों विचार एक साथ उमड़ पड़े।

सवालों की इस कशमकश में केतन का रहा-सहा धीरज भी जवाब दे गया। उसकी व्याकुलता और सीने की धड़कनें इस कदर बढ़ीं कि उसने बिना एक पल गंवाए, थोड़े कांपते हाथों से तुरंत अपना फोन निकाला और पूरे दो साल बाद पहली बार अनुश्री का वह नंबर डायल कर दिया जिसे वह कभी भूल नहीं पाया था। दिल की धड़कनें जैसे थम सी गईं, कान फोन पर लगे थे और हर बीतते सेकंड के साथ उसकी सांसें भारी हो रही थीं... लेकिन उधर से एक यांत्रिक आवाज़ आई—"नंबर अभी स्विच ऑफ है।"

फोन कटते ही केतन की बेचैनी गुस्से, बेबसी और एक अजीब सी छटपटाहट में बदल गई। इस गहरे सस्पेंस और जज्बातों के इस बोझ को वह अकेले इस बंद कमरे में नहीं संभाल पा रहा था। उसने तुरंत फोन घुमाया और बिना वक्त देखे नीरज और वीरू को एक साथ अपने सुइट में बुला लिया।

रात के इस आखिरी पहर में केतन के चेहरे पर हवाइयां उड़ती और आँखों में ऐसा ठहराव देख कर वे दोनों हैरान रह गए। केतन अपनी जगह से उठा और बिना रुके, एक ही सांस में अपनी पूरी व्याकुलता, वह मेमेंटो, अनुकेतन एनजीओ, कैंसर पीड़ित बच्चे और देहरादून का वह कनेक्शन... सब कुछ एक बार में उनके सामने कह गया। उसकी आवाज़ में एक अजीब सा भारीपन था।

पूरी बात सुनने के बाद, वीरू ने एक गहरी सांस ली, आगे बढ़कर मेज पर रखे उस मेमेंटो को देखा और केतन को शांत करने के लहजे में

कहा, "भाई, तुम ज़रूरत से ज़्यादा सोच रहे हो और पुराने खयालों में खो रहे हो। दुनिया में नाम एक जैसे हो सकते हैं। केएसएलएस अब इतना बड़ा ब्रांड बन चुका है, तो हमारी लोकल टीम ने किसी सामाजिक काम के लिए इस एनजीओ को पार्टनर बना लिया होगा। मुझे तो यह महज़ एक इत्तेफाक और सीधा-सा संयोग लग रहा है। तुम कल के बड़े दिन से पहले फालतू में खुद को परेशान कर रहे हो।"

लेकिन वहाँ खड़े नीरज के चेहरे के भाव बिल्कुल जुदा थे। वह मेमेंटो की उस खास फिनिशिंग, उस अनोखे डिज़ाइन और देहरादून के इस अचानक सामने आए कनेक्शन को बेहद गंभीरता से देख रहा था। नीरज ने वीरू को हल्के से टोका और आगे बढ़कर केतन के कंधे पर एक मजबूत, दिलासा देता हुआ हाथ रखा।

नीरज ने केतन की आँखों में देखते हुए अपनी बात को खत्म किया, "हम दोनों बस इतना कहेंगे कि कल एक बार यह उद्घाटन का काम शांति से पूरा हो जाने दो। जैसे ही कल शाम को हम इस जिम्मेदारी से फ्री होंगे, हम तीनों यहीं आराम से बैठेंगे और इस पूरी गुथी की एक-एक कड़ी को तसल्ली से सुलझाएंगे।

5 जून की वह सुबह नैनीताल की वादियों में एक नया इतिहास रचने आई थी। KSLS की नई भव्य ब्रांच का पूरा परिसर रंग-बिरंगे फूलों, चमचमाती लाइटों और बड़े-बड़े बैनर्स से सजा हुआ था। कानपुर से लेकर देश के अलग-अलग हिस्सों से आए छात्रों के पहले बैच का जोश देखते ही बनता था। सुबह के ठीक नौ बजे मुख्य अतिथि का आगमन हुआ। चारों तरफ तालियों की गड़गड़ाहट, कैमरों की फ्लैशलाइट्स और मीडिया के कैमरों के बीच फीता काटा गया। वीरू पूरी मुस्तेदी से ग्राउंड मैनेजमेंट संभाल रहा था और मंच पर अतिथियों का स्वागत सत्कार बेहद गरिमामय ढंग से चल रहा था। पूरा माहौल जश्र में डूबा था, लेकिन इस ऐतिहासिक सफलता के केंद्र में खड़ा केतन अंदर से कहीं और ही था।

बाहर से बेहद शांत और कड़क दिखने वाला केतन भीतर से व्याकुलता के एक भयानक दौर से गुज़र रहा था। मंच पर जब मुख्य अतिथि भाषण दे रहे थे, तब केतन की नज़रें सामने बैठी भीड़ पर तो थीं, लेकिन उसका दिमाग 4 जून की उस रात, उस मेमेंटो की नक्काशी और अनुश्री के

स्विच ऑफ जा रहे नंबर के बीच घूम रहा था। उसके माथे पर रह-रहकर चिंता की लकीरें उभर आती थीं। वह बार-बार अपनी कलाई घड़ी देखता और अपनी उंगलियों से सोफे के हथ्थे को थपथपाने लगता। उसकी यह छटपटाहट और बेचैनी उसके सामान्य स्वभाव से बिल्कुल अलग थी।

मंच के ठीक नीचे वीआईपी रो में बैठी निशा की नज़रें लगातार केतन पर टिकी थीं। केतन की इस गहरी व्याकुलता को देखकर निशा के चेहरे की रंगत उड़ गई थी। उसकी भाव-भंगिमा में एक अजीब सी फिक्र और दर्द साफ पढ़ा जा सकता था। वह केतन के हर बदलते हाव-भाव को नोटिस कर रही थी। जब भी केतन अपनी आँखें बंद करके गहरी सांस लेता, निशा का दिल भी बैठ जाता। वह समझ नहीं पा रही थी कि देश के सबसे बड़े बिज़नेस लॉन्च के मौके पर, जहाँ केतन को सबसे खुश होना चाहिए था, वहाँ उसके वजूद में यह कैसा बवंडर चल रहा है। वह बार-बार अपनी उंगलियों को आपस में भींच लेती, मानो वह खुद मंच पर जाकर केतन को संभालना चाहती हो।

इसी कार्यक्रम के बीच, जब एक सांस्कृतिक प्रस्तुति चल रही थी, केतन ने अपनी व्याकुलता को न छुपा पाते हुए पीछे खड़े वॉलंटियर को इशारा किया और शर्मा जी को चुपके से मंच के पीछे बने वीआईपी केबिन में बुलवाया।

केतन मंच से उतरकर केबिन में पहुँचा। उसकी आँखें बेहद कड़क हो चुकी थीं। जैसे ही शर्मा जी आए, केतन ने बिना कोई औपचारिकता किए सीधे कड़े स्वर में पूछा, "शर्मा जी, उस 'अनुकेतन आरोग्य संस्थान' के बारे में जो डिटेल्स मांगी थी, कुछ पता चला?"

शर्मा जी ने चारों तरफ देखते हुए आवाज़ को धीमा किया, "जी सर, मैंने अपने देहरादून के सोर्सिज से पता लगवाया है। यह संस्थान मूल रूप से भले ही देहरादून से रजिस्टर्ड है, लेकिन इसके पीछे जो मुख्य दिमाग है, वो यहाँ का नहीं है।"

केतन की सांसें भारी हो गईं, "साफ-साफ बताओ, कौन चला रहा है इसे?"

शर्मा जी ने बताया, "सर, मुझे जो जानकारी मिली है, उसके मुताबिक यह एनजीओ एक कानपुर बेस्ड लड़की के द्वारा चलाया जा रहा है...

और सबसे दुखद बात यह है सर, कि वह लड़की खुद कैंसर पीड़ित है। वह अपनी बीमारी के आखिरी स्टेज में है और अपनी ज़िंदगी के बचे हुए दिन इन कैंसर पीड़ित बच्चों की सेवा में बिता रही है। वही इस पूरे संस्थान की सर्वेसर्वा हैं।"

'कानपुर बेस्ड लड़की' और 'खुद कैंसर पीड़ित'—इन दो वाक्यों ने केतन के शक को एक गहरे और डरावने यकीन में बदल दिया। उसके पैरों के नीचे से जैसे ज़मीन खिसक गई। उसके मन में जो कशमकश चल रही थी, वह अब और भी गहरी हो गई थी। अनुश्री का कानपुर से होना, उसका अचानक गायब होना, और अब इस 'अनुकेतन' नाम के संस्थान का एक कैंसर पीड़ित कानपुर की लड़की द्वारा चलाया जाना... सारे तार एक डरावनी सच्चाई की तरफ इशारा कर रहे थे।

केतन के चेहरे पर एक अजीब सा सन्नाटा छा गया, उसकी आँखों में गुस्सा, दर्द और रहस्य का एक ऐसा बवंडर उठा जिसने उसे भीतर तक हिला दिया। उसने शर्मा जी को जाने का इशारा किया और खुद केबिन की खिड़की के सहारे खड़ा हो गया। बाहर KSLs की ओपनिंग का जश्न जारी था, लेकिन केतन के भीतर का यह नया मोड़ उसे एक ऐसे सच की तरफ खींच रहा था जहाँ दर्द की परतें और गहरी होने वाली थीं।

शर्मा जी के केबिन से बाहर निकलते ही केतन के पैरों के नीचे से जैसे ज़मीन खिसक गई। 'कानपुर की लड़की' और 'कैंसर की आखिरी स्टेज'... इन शब्दों ने उसके सीने पर किसी भारी हथौड़े की तरह वार किया था।

अचानक उसके भीतर ग्लानि और पश्चाताप का एक ऐसा सैलाब उमड़ा कि उसका दम घुटने लगा। बीते दो साल से वह जिस अनुश्री को धोखेबाज़ समझकर अपने दिल में नफ़रत की आग सुलगता रहा, आज उस नफ़रत की दीवार ताश के पत्तों की तरह ढह चुकी थी। केतन को खुद से घृणा होने लगी कि उसने बिना सच जाने उस लड़की को क्या कुछ नहीं समझा, जो अपनी ज़िंदगी की आखिरी सांसें गिनते हुए भी मासूम बच्चों का सहारा बनी हुई थी। उसका पूरा वजूद इस आत्मग्लानि से चीख उठा कि वह कितना गलत था।

अब उसके भीतर एक पल भी रुकने का सब्र नहीं बचा था। पश्चाताप की इस आग में जलते हुए उसने फैसला किया कि वह अब और इंतज़ार

नहीं कर सकता। बिना किसी को कुछ बताए, बिना वीरू, नीरज या निशा को एक भी लफ़्ज़ कहे, वह चुपचाप वीआईपी केबिन के पिछले दरवाज़े से बाहर निकला और सीधे अपनी गाड़ी की तरफ दौड़ पड़ा। उसका एकमात्र लक्ष्य था—मल्लीताल में स्थित 'अनुकेतन आरोग्य संस्थान'।

उधर, KSLS परिसर में मुख्य समारोह पूरी भव्यता के साथ आगे बढ़ रहा था। मंच पर मुख्य अतिथि का संबोधन समाप्त हो चुका था और अब इंस्टिट्यूट के चेयरमैन के तौर पर केतन को मंच पर आमंत्रित किया जाना था।

जब केतन अपनी सीट पर नहीं मिला, तो वीरू के माथे पर चिंता की लकीरें उभर आईं। उसने तुरंत अपना फोन निकाला और केतन को कॉल किया। फोन की घंटी बजती रही, पर केतन ने कोई जवाब नहीं दिया। वीरू ने घबराकर नीरज को इशारा किया। नीरज ने भी लगातार तीन-चार बार केतन का नंबर डायल किया, लेकिन हर बार कॉल बिना उठे ही कट जा रही थी।

गाड़ी के स्टीयरिंग पर कसती जा रही केतन की उंगलियों और उसकी आँखों से बहते आंसुओं के बीच फोन की स्क्रीन पर वीरू और नीरज का नाम बार-बार फ्लैश हो रहा था, लेकिन इस वक्त केतन को न तो अपनी साख की परवाह थी और न ही इस ऐतिहासिक बिज़नेस लॉन्च की। उसने फोन को साइलेंट कर के डैशबोर्ड पर पटक दिया।

नैनीताल की पथरीली और संकरी ढलान पर गाड़ी के टायर चीख उठे। केतन ने स्टीयरिंग व्हील पर अपनी पकड़ इतनी मजबूत कर रखी थी कि उसकी उंगलियों के पोर सफ़ेद पड़ चुके थे। गाड़ी की विंडस्क्रीन पर नैनीताल का कोहरा जम रहा था, लेकिन उसकी आँखों में पश्चाताप का जो बवंडर था, उसने सामने के पूरे रास्ते को धुंधला कर दिया था। दिल के भीतर उठ रही आत्मग्लानि की हूक गाड़ी के एक्सीलेटर पर दबाव बनकर उतर रही थी। वह अपनी ही सोच से भाग रहा था, अपनी उस नफ़रत से भाग रहा था जिसे उसने दो साल तक बेवजह पाला था।

करीब बीस मिनट की उस सांस रोक देने वाली ड्राइविंग के बाद, मल्लीताल की एक एकांत और शांत ढलान पर गाड़ी एक झटके के साथ रुक गई।

सामने देवदार के ऊंचे और प्राचीन पेड़ों की ओट में घिरी एक बेहद सादगी से भरी सफेद इमारत खड़ी थी। वक्त की मार से उसकी दीवारों की सफेदी जगह-जगह से छिल चुकी थी, लेकिन वहाँ एक अजीब सा रूहानी सुकून था। मुख्य फाटक पर लकड़ी की एक पुरानी, सीलन से थोड़ी गल चुकी तख्ती लटकी थी, जिस पर हरे रंग से बड़े ही सीधे-सादे अक्षरों में लिखा था—'अनुकेतन आरोग्य संस्थान'।

जैसे ही केतन ने गाड़ी का दरवाज़ा खोला, पहाड़ों की बर्फ़ीली हवा का एक सर्द झोंका सीधे उसके चेहरे पर लगा, लेकिन उसके भीतर सुलग रही पश्चाताप की आग के आगे वह हवा भी बेअसर थी। उसके कदम किसी भारी जंजीर से बंधे हुए से महसूस हो रहे थे। उसने कांपते हाथों से लोहे के भारी फाटक को धकेला, जो एक तीखी चरमराहट के साथ खुल गया।

अंदर कदम रखते ही केतन ठगा सा रह गया। यहाँ की दुनिया KSLS के उस चकाचौंध और तालियों से गूँजते उद्घाटन समारोह से बिल्कुल जुदा थी। चारों तरफ़ क्यारियों में पहाड़ी गुलाब खिले थे, जिनकी मद्धम खुशबू हवा में तैर रही थी। बरामदे के खंभों पर बच्चों के हाथों से बनाए रंग-बिरंगे तितलियों के चित्र और उम्मीदों से भरे स्लोगन सजे थे। आँगन में टाट की बोरियों पर कुछ छोटे-छोटे बच्चे बैठे थे, जिनके सिर पर कीमोथेरेपी की वजह से बाल नहीं थे। वे बेहद खामोशी और तन्मयता से पीतल के उन्हीं छोटे-छोटे मेमेंटो पर नक्काशी कर रहे थे, जिसे कल रात केतन ने देखा था। उन मासूम चेहरों पर बीमारी का पीलापन तो था, लेकिन आँखों में ज़िंदगी को जीने की एक अदम्य ज़िद थी।

केतन को इस तरह बदहवास और पागलों की तरह अंदर आते देख, बरामदे से एक बुजुर्ग डॉक्टर आगे बढ़े, जिनके गले में स्टेथस्कोप लटका हुआ।

"जी, आप यहाँ किससे मिलना चाहते हैं?" डॉक्टर ने अपनी आवाज़ में एक संजीदा धीरज समेटते हुए पूछा।

केतन ने सूझ-बूझ खो चुके अपने सूखे होठों को किसी तरह खोला, उसकी आवाज़ गले में ही घुट रही थी, "मुझे... मुझे अनुश्री से मिलना है। अनुश्री... जो कानपुर से हैं।"

अनुश्री का नाम हवा में तैरते ही उन बुजुर्ग डॉक्टर के चेहरे पर एक गहरा और उदास सन्नाटा पसर गया। उन्होंने अपनी ऐनक को थोड़ा ठीक किया, एक ठंडी सांस ली और बेहद धीमे, लगभग फुसफुसाते हुए स्वर में कहा, "ओह! तो आप अनुश्री जी के बारे में पूछ रहे हैं। वो तो यहाँ नहीं है।"

केतन का दिल जैसे सीने को चीरकर बाहर आ जाया। उसने बिना सोचे डॉक्टर का हाथ पकड़ लिया, उसकी आँखों से आंसू छलक कर गालों पर बह निकले, "नहीं हैं? ऐसा मत कहिए डॉक्टर साहब! वह कहाँ हैं? मुझे उनसे इसी वक्त मिलना है... बहुत बड़ी भूल हो गई है मुझसे, मुझे उसे देखना है।"

डॉक्टर ने केतन की कलाई पर हाथ रखकर उसे थामने की कोशिश की और कहा, "खुद को संभालो बेटा। असल में, वह दो दिन पहले ही यहाँ से हमारे देहरादून सेंटर के लिए रवाना हो चुकी हैं। उन्हें वहीं शिफ्ट कर दिया गया है।"

"कहाँ? कौन सा देहरादून सेंटर? प्लीज मुझे साफ़-साफ़ बताइए!" केतन की आवाज़ में एक अजीब सी बेबसी थी।

डॉक्टर ने कुछ पल केतन को देखा, फिर अपने एप्रन की जेब से एक छोटा, थोड़ा मुड़ा हुआ सफेद कार्ड निकाला और केतन के कांपते हाथों पर रख दिया, "वह इस वक्त देहरादून में हैं। वह खुद भी कैंसर की लास्ट स्टेज में संघर्ष कर रही है, यह हमारे हेड ऑफिस का पता है। वह तुम्हें वहीं मिलेंगी।"

केतन की नज़रें उस कार्ड पर टिक गईं। कार्ड के ऊपरी हिस्से पर संस्थान का नाम था और ठीक नीचे अनुश्री के नाम के आगे साफ़ अक्षरों में देहरादून का एक पूरा पता लिखा हुआ था।

दो साल के लंबे अंतराल के बाद अनुश्री का नाम इस तरह अपनी आँखों के सामने देखना और उसके ठीक नीचे देहरादून का वह पता होना... केतन के भीतर चल रहे तूफ़ान का रुख मोड़ने के लिए काफी था।

उसने डॉक्टर की तरफ देखा तक नहीं, बस उस कार्ड को अपनी मुट्ठी में इस कदर भींचा मानो वह उसकी ज़िंदगी की आखिरी उम्मीद हो। वह मुड़ा और अपनी गाड़ी की तरफ दौड़ पड़ा। अब उसके पीछे KSLS का



भव्य बिज़नेस लॉन्च छूट चुका था, साख दांव पर थी, पर उसे किसी चीज़ की सुध नहीं थी। गाड़ी स्टार्ट करते ही उसने गियर बदला और गाड़ी का रुख सीधे देहरादून जाने वाले हाईवे की तरफ मोड़ दिया ।

## पश्चाताप की कीमोथेरेपी

नैनीताल से देहरादून तक का वह सफर महज़ कुछ घंटों की दूरी नहीं था, बल्कि केतन के लिए अपने ही भीतर के नर्क से गुज़रने जैसा था। गाड़ी जैसे-जैसे पहाड़ों से उतरकर मैदानी रास्तों और फिर घने जंगलों के बीच से गुज़र रही थी, केतन के ज़हन में विचारों का सैलाब उमड़ रहा था। हर मोड़, हर मील का पत्थर उसे उसकी खुद की संकीर्णता की याद दिला रहा था। खिड़की से बाहर अंधेरा घिरने लगा था और भीतर केतन का मन आत्मग्लानि की आग में झुलस रहा था। उसने स्टीयरिंग पर ज़ोर से हाथ मारा और रो पड़ा कि वह कितना अंधा और छोटा था, जिसने दो साल तक उस लड़की को धोखेबाज़ समझा, जिसे दुनिया की सबसे क्रूर बीमारी अंदर ही अंदर खा रही थी। उसे याद आ रहा था कि कैसे वह अपनी झूठी अना और अहंकार को सहलाता रहा, जबकि अनुश्री अकेले उस दर्द से लड़ रही थी जहाँ मौत हर रोज़ उसे छूकर गुज़रती, रास्ते भर केतन की आँखों से बहते आंसू उसकी शर्ट के कॉलर को भिगोते रहे। वह बार-बार अपनी आस्तीन से आँखें पोंछता और गाड़ी की रफ्तार और बढ़ा देता, मानो वह वक्त के पहिए को पीछे घुमा देना चाहता हो। करीब साढ़े चार घंटे की उस रूह को निचोड़ देने वाली ड्राइविंग के बाद, केतन देहरादून के एक बेहद एकांत इलाके में पहुँचा। गाड़ी के रुकते ही उसने सामने देखा—'अनुकेतन आरोग्य संस्थान' का मुख्य केंद्र।

केतन ने गाड़ी का दरवाज़ा खुला ही छोड़ दिया और पागलों की तरह उस भवन के भीतर भागा। गलियारे में पसरे सन्नाटे को चीरते हुए वह जैसे ही एक केबिन के सामने पहुँचा, उसके कदम ठिठक गए। दरवाज़ा थोड़ा सा खुला हुआ था, मानो बरसों से किसी का इंतजार कर रहा हो। केतन ने कांपते हाथों से किवाड़ को धकेला और अंदर कदम रखा। अंदर कदम रखते ही केतन के सीने में जैसे एक साथ हज़ारों खंजर उतर गए। कमरे की आबोहवा में पुरानी किताबों, मद्धम मोगरे की खुशबू और दवाइयों की एक हल्की सी गंध घुली हुई थी। केतन ने दीवार की तरफ देखा और उसका पूरा वजूद कांप उठा। कमरे की सबसे मुख्य दीवार पर कोई पेंटिंग नहीं थी, बल्कि वहाँ केतन और अनुश्री की

अनगिनत पुरानी तस्वीरें बेहद सलीके से सजी हुई थीं। उनके कॉलेज के दिनों की बेफिक्र हँसी, कानपुर की तंग गलियों में चाट खाते हुए खींची गई वो धुंधली सी फोटो, और केतन के जन्मदिन की वह खास तस्वीर जिसमें अनुश्री ने केतन के चेहरे पर केक लगाया था। अनुश्री ने अपनी ज़िंदगी के सबसे खुशनुमा पलों को इस दीवार पर ज़िंदा रखा था।

केतन की नज़र मेज के कोने पर गई, जहाँ काँच के एक छोटे से बॉक्स में केतन से जुड़ी हज़ारों चीज़ों का एक अद्भुत संग्रह था। वहाँ केतन का वह पुराना, आधा टूटा हुआ पेन रखा था जिसे वह अपनी जेब में रखता था। कमरे के रैक पर पीतल और लकड़ी के कई छोटे-छोटे डिब्बे करीने से रखे थे। ये वही बक्से थे जो केतन ने कल रात देखे थे। हर डिब्बे पर केतन के नाम का पहला अक्षर 'K' बहुत ही महीन कारीगरी से खुदा हुआ था। मेज के ठीक ऊपर एक छोटा सा फ्रेम था। केतन ने करीब जाकर देखा तो उसकी रूह कांप गई।

लेकिन जिस चीज़ ने केतन को पूरी तरह भीतर से तोड़कर घुटनों के बल ला दिया, वह थी केबिन की दाईं तरफ लगी एक बहुत बड़ी पिन-बोर्ड की दीवार। उस पूरे बोर्ड पर सिर्फ और सिर्फ KSLS से जुड़ी हर छोटी-बड़ी कामयाबी का इतिहास दर्ज था। वहाँ उन अखबारों की कतरनें लगी थीं, जब केतन ने कानपुर में अपना पहला छोटा सा सेंटर खोला था। बिज़नेस वर्ल्ड में केतन को मिले अवॉर्ड्स की तस्वीरें, उसकी सफलता पर लिखे गए कसीदे, और यहाँ तक कि आज होने वाले नैनीताल ब्रांच के भव्य उद्घाटन का वह पूरा विज्ञापन भी वहाँ लगा हुआ था, जिसे अनुश्री ने अपने हाथों से बड़े चाव से काटकर पिन किया हुआ था। यह देखकर केतन के मुंह से एक दबी हुई चीख निकली। वह फर्श पर घुटनों के बल बैठ गया और अपना चेहरा दोनों हाथों में छुपाकर फूट-फूटकर रोने लगा।

तभी पीछे से किसी के धीमे कदमों की आहट हुई। केतन ने आंसू भरी आँखों से मुड़कर देखा। दरवाज़े पर संस्था की एक वरिष्ठ सदस्य, सिस्टर मैरी खड़ी थीं, जो शुरुआत से अनुश्री के साथ इस संस्थान को संभाल रही थीं। उनकी आँखों में भी एक गंभीर उदासी और गहरा ठहराव था। केतन को इस कदर टूटकर रोते देख सिस्टर मैरी के चेहरे पर कोई हैरानी नहीं हुई, मानो वह जानती थीं कि यह दिन एक न एक दिन आना

ही था। वह धीरे से केतन के पास आई और उसके कंधे पर सांत्वना भरा हाथ रखा।

सिस्टर मैरी ने कमरे के शांत सन्नाटे को अपनी मखमली और कोमल आवाज़ से तोड़ा, "तुम केतन ही हो न?"

केतन ने अपनी दोनों हथेलियों में चेहरा छुपाए हुए ही, कांपते कंधों के साथ केवल हाँ में सिर हिला दिया। वह इस लायक भी महसूस नहीं कर रहा था कि इस कमरे में खड़ी उस महिला से आँखें मिला सके।

सिस्टर मैरी की आँखों में एक माँ जैसी करुणा उतर आई। उन्होंने केतन के झुके हुए सिर को सहलाते हुए सामने लगे पिन-बोर्ड की तरफ देखा और बहुत ही कोमलता से कहा, "रोओ मत बेटा। इस कमरे में तुम्हारे बहाए आँसू इस बात की गवाही हैं कि अनुश्री की दो साल की तपस्या आज पूरी हो गई। तुम इस बोर्ड को देख रहे हो? जब सुइयों के चुभने का दर्द और कीमोथेरेपी की वो भयानक रातें अनुश्री को अंदर से तोड़ देती थीं, तब वह किसी तरह घिसटते हुए इस कमरे में आती थी। वह यहाँ घंटों इस दीवार के सामने खड़ी रहती थी। तुम्हारी तरक्की, तुम्हारी हर एक जीत उसके लिए उस दर्द की सबसे बड़ी दवा थी। उसने अपनी असहनीय तकलीफों को कभी अपनी बदनसीबी नहीं माना, केतन।"

केतन की सिसकियाँ और गहरी हो गईं। उसने फर्श पर घुटने टेके-टेके ही सिस्टर मैरी का एप्रन पकड़ लिया। उसकी आवाज़ आत्मग्लानि के बोझ से कांप रही थी, "सिस्टर... मैं अपराधी हूँ। मुझे सजा मिलनी चाहिए। दो साल... पूरे दो साल मैंने उसे सिर्फ कोसा, उससे नफ़रत की। मैं अपनी झूठी साख और अपनी कामयाबी के नशे में इतना अंधा था कि कभी उस नफ़रत के पीछे छिपा सच देख ही नहीं पाया। सिस्टर, क्या वह मुझे कभी माफ़ करेगी? मुझे बस एक बार उसके पास ले चलिए, मैं उसके पैरों में गिरकर अपने सारे गुनाह कबूल करना चाहता हूँ।"

सिस्टर मैरी ने नीचे झुककर केतन के दोनों कांपते हाथों को अपने हाथों में ले लिया। उनकी छुआन में एक अजीब सा सुकून था। उन्होंने केतन को ढाढस बंधाते हुए बहुत ही कोमल स्वर में कहा, "केतन, जिसने कभी तुमसे कोई शिकायत ही नहीं की, उससे माफ़ी कैसी? अनुश्री के दिल में तुम्हारे लिए कभी नफ़रत का एक कतरा भी नहीं रहा। वह तो हमेशा मुझसे कहती थी कि मैरी, केतन का गुस्सा उसके प्रेम का ही रूप है।

वह मुझसे नाराज़ है क्योंकि मैं उसके सामने नहीं हूँ न, यह 'अनुकेतन' जो तुम देख रहे हो, यह कोई महज़ नाम नहीं है। यह अनुश्री का वो मंदिर है जहाँ उसने अपनी आखिरी सांसों तक सिर्फ़ और खुद से ज़्यादा तुम्हारे नाम की पूजा की है।"

केतन ने मेज़ पर रखे उस काँच के बॉक्स की तरफ़ देखा जहाँ उसका आधा टूटा पेन और वो सूखी पंखुड़ी रखी थी। उसने अत्यंत भावुक होकर कहा, "लेकिन सिस्टर... उसने मुझे इस दर्द से दूर क्यों रखा? अगर वह मुझे एक बार बता देती, तो मैं अपनी जान लगा देता। मैं दुनिया के सबसे बड़े डॉक्टरों को ले आता, मैं उसे इस तरह अकेले टूटने नहीं देता। उसे मुझ पर इतना भी यकीन नहीं था" ।

सिस्टर मैरी की आँखों के कोनों से भी एक आँसू छलक कर उनके गालों पर आ गया। उन्होंने बहुत ही संजीदगी से केतन के गालों से आँसू पोंछे और कहा, "क्योंकि वह तुम्हें कमज़ोर नहीं, तुम्हारी मंजिलों को मुकम्मल देखना चाहती थी, केतन। वह तुम्हारे स्वभाव को बहुत अच्छे से जानती थी। वह जानती थी कि अगर तुम्हें उसकी इस जानलेवा बीमारी का ज़रा सा भी अंदाज़ा होता, तो तुम अपनी महत्वाकांक्षाएं, अपने सपने, अपना ये करियर... सब कुछ छोड़कर उसके अस्पताल के बिस्तर के पास बैठ जाते। तुम्हारी आँखों में उसके लिए बेबसी और दया के आँसू होते, जो अनुश्री कभी बर्दाश्त नहीं कर पाती। वह चाहती थी कि तुम आसमान की ऊंचाइयों को छुओ। वह अस्पताल के बिस्तरों पर लेटे-लेटे तुम्हारी सफलताओं को देखकर मुस्कुराती थी। तुम्हारी हर जीत पर वह यहाँ अकेली जश्न मनाती थी। उसकी यह लगन स्वार्थी नहीं थी।"

केतन का दिल सिस्टर मैरी की एक-एक बात के साथ फट रहा था। उसे आज अपनी कामयाबी दुनिया का सबसे बड़ा बोझ लग रही थी। उसने रोते हुए कहा, "सिस्टर, यह KSLS, यह दौलत, यह शोहरत... सब कुछ धूल है अगर मेरी अनु ही मेरे पास नहीं है। आज मेरी नैनीताल ब्रांच के उद्घाटन पर हज़ारों लोग तालियाँ बजा रहे थे, लेकिन मेरे भीतर एक भयानक खालीपन था। आज समझ आया कि वह खालीपन अनुश्री की कमी का था। सिस्टर, क्या मैं बहुत देर कर चुका हूँ? क्या वह मुझसे बात करेगी? वह कहाँ है सिस्टर?"

सिस्टर मैरी ने केतन के हाथों को और भी सहलाया, उनकी आँखों में एक गहरा, गंभीर ठहराव आ गया। उन्होंने केतन के चेहरे को देखा, जिसमें पश्चाताप का सैलाब उमड़ रहा था, और बहुत ही धीमे, भावुक स्वर में कहा, "केतन... अनुश्री पिछले दिनों से बहुत ज़्यादा बीमार थी। उसका शरीर उस असहनीय और कड़े दर्द से बुरी तरह टूट रहा था, जो अब उसके बर्दाश्त के बाहर होने लगा था। वह रात-रात भर करवटें बदलती रहती थी, लेकिन उस दर्द की शिद्दत के बीच भी उसके चेहरे पर सिर्फ तुम्हारा ही नाम था।"

सिस्टर मैरी ने एक ठंडी सांस ली और खिड़की से बाहर दिखते रास्तों की तरफ देखते हुए कहा, "कल रात जब दर्द का एक बहुत तेज अटैक आया, तो उसने कांपते हाथों से मेरा हाथ पकड़ा और रोते हुए कहा— मैरी, अब मुझसे यह दर्द सहा नहीं जाता। मेरा मन यहाँ बिल्कुल नहीं लग रहा... मेरा मन सिर्फ अपने घर, अपने कानपुर जाने का कर रहा है। डॉक्टरों ने उसे रोकने की बहुत कोशिश की, केतन। उन्होंने चेतावनी दी कि इस नाजुक हालत में इतनी लंबी यात्रा करना उसके लिए बहुत जोखिम भरा हो सकता है। लेकिन वह अनुश्री है... उसकी ज़िद के आगे उस दर्द को भी झुकना पड़ा। वह अपनी यादों और अपनी मिट्टी की कशिश के सहारे, उस भयानक दर्द को अपने भीतर समेटकर आज सुबह ही कानपुर के लिए रवाना हो चुकी है। वह उस दर्द के पिंजरे से निकलकर तुम्हारे पास लौट चुकी है, केतन। वह कानपुर जा चुकी है।"

यह सुनते ही केतन के सीने से जैसे एक बहुत बड़ा बोझ उतर गया, लेकिन साथ ही अनुश्री के दर्द को महसूस करके उसकी रूह कांप उठी। उसकी आँखों से आँसू अब भी बह रहे थे, मगर अब उनमें बेबसी नहीं, बल्कि एक अजीब सी तड़प और जल्द से जल्द पहुँचने का वेग था। उसे समझ आ गया था कि अनुश्री ने इस असहनीय दर्द में भी केवल उसे ही पुकारा था।

उसने सिस्टर मैरी के आगे सम्मान से अपना सिर झुकाया, उनके हाथों को छूकर आशीर्वाद लिया और बिना एक पल गंवाए केबिन से बाहर की तरफ भागा। कमरे की दीवारें, तस्वीरें और वो यादें पीछे छूट रही थीं, लेकिन अनुश्री की खुशबू अब उसके साथ थी। केतन ने पागलों की तरह दौड़कर अपनी गाड़ी का दरवाज़ा खोला, स्टीयरिंग थामी और एक

ज़ोरदार आवाज़ के साथ गाड़ी स्टार्ट की। गियर बदलते ही उसने गाड़ी का रुख सीधे हरिद्वार वाले हाईवे की तरफ मोड़ दिया, जहाँ उसकी अनु, उसका सच और उसकी पूरी ज़िंदगी उसका इंतज़ार कर रही थी।

देहरादून की ठंडी और धुंधली हवा को पीछे छोड़ते हुए केतन की गाड़ी अब एक्सप्रेसवे पर दौड़ रही थी। केतन के हाथों ने स्टीयरिंग व्हील को इस कदर जकड़ रखा था मानो वह समय की रफ्तार को अपने वश में करना चाहता हो। उसकी आँखों से बहते आँसू थमने का नाम नहीं ले रहे थे, लेकिन अब उन आँसुओं में नैनीताल जैसी बेबसी नहीं, बल्कि अनुश्री तक पहुँचने की एक छटपटाहट और तड़प थी। गाड़ी के वाइपर्स चल रहे थे, और हेडलाइट्स की रोशनी सामने के हाईवे को चीरती जा रही थी। हर एक मील का पत्थर, हर एक किलोमीटर केतन को उसके पश्चाताप के अंत और उसकी अनु के करीब ला रहा था।

गाड़ी की रफ्तार जब एक निश्चित गति पर संभली, तो केतन के भीतर का गुबार फूटने के लिए मचल उठा। उसने डैशबोर्ड पर रखे अपने फोन को उठाया, जिसे उसने कुछ घंटों पहले दुनिया के डर से स्विच ऑफ कर दिया था। फोन ऑन होते ही नीरज और वीरू के मिस्ड कॉल्स और मैसेजेस की बाढ़ आ गई। बिना एक पल गंवाए, केतन ने नीरज का नंबर डायल किया।

फोन की दूसरी तरफ से नीरज ने लगभग झपटते हुए कॉल उठाया, उसकी आवाज़ में घबराहट और गुस्सा साफ़ था, "केतन! तुम कहाँ हो भाई? दिमाग खराब हो गया है क्या तुम्हारा? मीडिया वाले, चीफ गेस्ट, सब तुम्हारा इंतज़ार कर रहे थे और तुम बिना बताए गायब हो गए? वीरू और मैं कब से तुम्हें ढूँढ़ रहे हैं, केतन!"

नीरज की बातें सुनकर केतन के गले से एक गहरी सिसकी निकली। वह कुछ बोल नहीं पाया, बस उसके रोने की आवाज़ नीरज तक पहुँची।

केतन को इस तरह रोते देख नीरज की आवाज़ का गुस्सा एक पल में गायब हो गया, वह सहम गया, "केतन... क्या हुआ भाई? तुम रो रहे हो? तुम ठीक तो हो न? कहाँ हो तुम इस वक्त?"

केतन ने अपनी आस्तीन से आँखों को पोंछा और रूँधे हुए गले से कहा, "नीरज... मैं बर्बाद हो गया। मेरी यह कामयाबी, यह शोहरत, यह KSLS... सब कुछ एक पल में राख हो गया। मैं अपनी ही बनाई नफ़रत

के अंधेरे में जी रहा था, नीरज। मैं जिस अनुश्री को दो साल से अपनी बर्बादी का ज़िम्मेदार मान रहा था, जिसे स्वार्थी समझ रहा था... वह तो खुद मौत से लड़ रही थी।"

नीरज हैरान रह गया, "क्या? तुम अनुश्री की बात कर रहे हो? वह कहाँ है? तुम्हें क्या पता चला है, केतन?"

केतन ने रोते हुए देहरादून के 'अनुकेतन संस्थान' का पूरा मंज़र नीरज को बयां करना शुरू किया। उसने बताया कि कैसे अनुश्री ने अपनी जानलेवा बीमारी की बात उससे सिर्फ इसलिए छुपाई ताकि केतन अपनी मंजिलों से न भटके। उसने कांपती आवाज़ में कहा, "नीरज, उसके केबिन में मेरी एक-एक छोटी निशानी संभालकर रखी है। मेरा वो पुराना टूटा हुआ पेन, वो सूखी गुलाब की पंखुड़ी, यहाँ तक कि गुस्से में मेरा फाड़ा हुआ नोट भी उसने फ्रेम करा रखा है। और हमारी कामयाबी... KSLS की एक-एक खबर, अखबार की हर कटिंग उसने अपनी दीवार पर लगा रखी थी। जब मैं कानपुर में अपना पहला छोटा सेंटर खोल रहा था, जब मुझे पहला अवॉर्ड मिला, वह हर पल दूर रहकर भी मेरे लिए दुआएं मांग रही थी। उसकी कीमोथेरेपी का दर्द जब असहनीय हो जाता था, तो वह मेरी कामयाबी की तस्वीरें देखकर जिया करती थी।"

नीरज फोन की दूसरी तरफ बिल्कुल खामोश हो गया था, उसकी सांसें भारी हो चुकी थीं। केतन ने आगे कहा, "सिस्टर मैरी ने मुझे बताया कि वह पिछले दो दिनों से बहुत ज़्यादा बीमार थी। वह दर्द से टूट रही थी, लेकिन उस भयानक तकलीफ़ के बीच भी डॉक्टरों की चेतावनी को दरकिनार कर वह आज सुबह कानपुर के लिए निकल गई। वह सिर्फ अपने घर, अपनी मिट्टी और मेरे पास आना चाहती थी। मैं देहरादून पहुँचा, पर वह वहाँ नहीं थी... वह कानपुर जा चुकी है नीरज! मैं भी कानपुर जा रहा हूँ।"

नीरज की आँखों में भी आँसू आ गए। उसने बेहद संजीदगी से कहा, "केतन... तुम गाड़ी संभालकर चलाओ। मैं और वीरू तुरंत नैनीताल से कानपुर के लिए निकल रहे हैं। तुम फिक्र मत करो, इस बार हम अनु को कहीं नहीं जाने देंगे। तुम बस हौसला रखो और सही-सलामत कानपुर पहुँचो।"



फोन कटने के बाद केतन का सफर और भी ज़्यादा भावुक हो गया। अब रात की खामोशी छा चुकी थी। हाईवे के दोनों तरफ फैले सन्नाटे में सिर्फ केतन की गाड़ी के इंजन की आवाज़ और उसके दिल की धड़कनें गूंज रही थीं। रास्ते भर उसे अनुश्री के साथ बिताया एक-एक पल याद आ रहा था। कानपुर की वो तंग गलियाँ, गंगा घाट की वो शामें, और अनुश्री का वो मासूम चेहरा। केतन को रह-रहकर यह ख्याल तड़पा रहा था कि जब अनुश्री उस असहनीय दर्द से गुज़र रही होगी, तब वह कितनी अकेली होगी। उसने कितनी रातें सिर्फ केतन की तस्वीरों से बात करके काटी होंगी। पश्चाताप की इस आग ने सफर के लंबे घंटों को केतन के लिए सदियों जैसा बना दिया था।

## वाह रे मोतीझील

घंटों की थका देने वाली और रूह को झकझोर देने वाली ड्राइविंग के बाद, सुबह की पहली किरण के साथ केतन की गाड़ी ने कानपुर की सीमा में प्रवेश किया। शहर की जानी-पहचानी हवा जैसे ही कार की खिड़की से अंदर आई, केतन का दिल ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगा। सुबह का हल्का कोहरा और गंगा जी की तरफ से आती ठंडी हवा केतन के भीतर के बवंडर को और बढ़ा रही थी। वह कानपुर पहुँच चुका था— अपनी और अनुश्री की यादों के शहर में, जहाँ उसकी ज़िंदगी का सबसे बड़ा सच और उसका आखिरी आसरा उसका इंतज़ार कर रहा था।

कानपुर की वह दोपहर ढल चुकी थी, और जून की झुलसाने वाली गर्म हवाएं अब धीरे-धीरे शांत हो रही थीं। सूरज अस्त होने की कगार पर था, जिससे आसमान में सिंदूरी और तॉबे जैसे गहरे रंगों का एक अद्भुत कोलाज बन गया था। केतन की गाड़ी जैसे ही घंटाघर के उस ऐतिहासिक चौराहे पर पहुँची, उसका दिल ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगा। उसने गाड़ी को एक तरफ रोका और बदहवास सा दौड़ता हुआ अनुश्री के उस पुराने घर की संकरी सीढ़ियों की तरफ भागा।

सीढ़ियाँ चढ़ते हुए केतन की सांसें फूल रही थीं और छाती में धड़कनें किसी नगाड़े की तरह बज रही थीं। जैसे ही उसने कांपते हाथों से दरवाज़े पर दस्तक दी, कुंडी खुली और सामने अनुश्री के मम्मी-पापा खड़े थे। दो साल के लंबे अरसे के बाद केतन को इस हालत में अपने दरवाज़े पर देखकर दोनों के चेहरों पर विस्मय और एक पुरानी, जमी हुई उदासी तैर गई। केतन की सूजी हुई आँखें, चेहरे पर जमी धूल और बिखरे बाल देखकर अनुश्री के पिता ने आगे बढ़कर उसकी पीठ पर हाथ रखा, लेकिन उनकी अपनी आँखें भी भर आईं।

केतन ने रुँधे हुए गले से पूछा, "आंटी... अंकल... अनु कहाँ है?"

अनुश्री की माँ ने अपनी साड़ी के पल्लू से आँसू पोंछते हुए बेहद धीमी और दर्दभरी आवाज़ में कहा, "वह आज सुबह ही कानपुर लौटी है, बेटा। उसका शरीर उस कड़े और असहनीय दर्द से बहुत कमज़ोर हो

चुका है। डॉक्टरों ने उसे इस तपते जून के महीने में इतने लंबे सफर के लिए साफ़ मना किया था, पर वह नहीं मानी। यहाँ आकर भी वह घर में नहीं रुकी। बस कुछ पल अपनी पुरानी चीज़ों को देखा और कहा कि उसे बहुत घुटन हो रही है, उसे थोड़ा सुकून चाहिए। वह सीधे मोतीझील की तरफ चली गई है।"

यह सुनते ही केतन के कदमों की व्याकुलता और बढ़ गई। वह आंटी-अंकल के आगे हाथ जोड़कर तुरंत पलटा और गाड़ी का रुख सीधे मोतीझील की तरफ मोड़ दिया।

मोतीझील... कानपुर का वह रूहानी कोना जो उनकी दोस्ती के शुरुआती दिनों का सबसे बड़ा गवाह था। जब केतन भागता हुआ पार्क के मुख्य द्वार को पार कर झील के परिसर के भीतर पहुँचा, तब जाकर शाम के धुंधले में सामने का वह विहंगम दृश्य उसकी आँखों के सामने खुला।

झील का वह अलौकिक दृश्य देखकर केतन का वजूद एक पल के लिए वहीं थम गया।

डूबते सूरज की आखिरी किरणें झील के पानी पर इस तरह तैर रही थीं मानो किसी ने उसमें ताँबा और हज़ारों मूक जज़्बात घोल दिए हों। गर्म हवा के हल्के पड़ते झोंकों के साथ किनारे के पेड़ों से सूखी पतियाँ धीरे से पानी की सतह पर उतर रही थीं, जो किसी उदास कविता जैसी लग रही थी, यहाँ एक प्रेमी के पश्चाताप की आग को शांत करने वाली शीतलता थी, और पानी की हर एक लहर में पुरानी स्मृतियों का एक मौन संगीत था जो केतन के कानों में गूँज रहा था।

केतन ने कांपते कदमों से झील के उस बेहद परिचित रास्ते पर आगे बढ़ना शुरू किया। शाम का सन्नाटा गहरा रहा था और पार्क की मद्धम लाइटें एक-एक करके जलने लगी थीं। और तभी, पानी के किनारे झुके हुए पेड़ों की घनी झुरमुट के पार, केतन की नज़र उसी बेंच पर जाकर ठहर गई।

सामने वही पुरानी, थोड़ी सी छिल चुकी बेंच थी जहाँ वे दोनों कॉलेज के दिनों में घंटों बैठकर दुनिया भर के सपने बुना करते थे। और उस बेंच पर... अनुश्री बैठी हुई थी। वह झील के शांत होते पानी को एकटक निहार रही थी। ढलते सूरज की एक आखिरी मद्धम सुखी उसके चेहरे

पर पड़ रही थी, जिससे उसका चेहरा किसी पाकीज़ा मूरत की तरह चमक रहा था। बीमारी के उस कड़े दर्द ने उसके शरीर को थोड़ा कमज़ोर ज़रूर कर दिया था, लेकिन उसमें आज भी वही ठहराव झलक रहा था। वह शांत लग रही थी, मानो समय वहीं ठहर गया हो और वह बरसों से सिर्फ और सिर्फ अपने केतन का इंतज़ार कर रही हो। केतन वहीं दूर खड़ा रह गया, उसकी आँखों से आंसुओं की अविरल धारा बहने लगी, और उसका पूरा वजूद अनुश्री के उस रूप को देखकर नतमस्तक हो गया।

जून की वह झुलसाती हुई शाम अब पूरी तरह ढल चुकी थी, मोतीझील का परिसर एक अलौकिक, रूहानी जादुई रात के आगोश में समा गया था। आसमान में बिखरी रहने वाली दिन भर की तपन को सोखकर रात ने नीले और नीलमणि रंगों की एक चादर ओढ़ ली थी। ऊपर अंबर में तारों की एक अनंत आकाशगंगा टिमटिमा रही थी, और दूधिया रोशनी बिखेरता एक मुकम्मल, जादुई चांद बादलों के घेरे से निकलकर झील के ठीक ऊपर मुस्कुरा रहा था।

जब केतन बिना कोई आहूट किए, अपने वजूद के सारे शोर को समेटकर उस बेंच पर अनुश्री के ठीक बगल में बैठा, तो समय का पहिया हमेशा के लिए थम गया। दोनों के बीच महज़ कुछ इंच की दूरी थी, लेकिन यह दूरी दो साल के उस सन्नाटे से भरी थी जिसने उनके जीवन को उजाड़ दिया था। केतन की निगाहें सीधे सामने झील के पानी पर टिकी थीं, जो आसमान के नीले रंग, चांदनी और किनारे पर जलती रोशनियों को अपने भीतर समेटकर किसी मखमली नीले कैनवास की तरह चमक रहा था। पानी की सतह इतनी शांत थी कि दूर टापू पर बनी वो खूबसूरत, जगमगाती हुई छतरी और आलीशान सफेद इमारत का अक्स पानी में बिल्कुल साफ और जीवंत तैर रहा था, मानो पानी के भीतर भी एक जादुई दुनिया बसती हो।

बेंच के ठीक बगल में लगा वो पुराना, विंटेज स्टाइल का लैंपपोस्ट जल उठा था, जिसकी सुनहरी और गर्म रोशनी से चारों तरफ के छोटे-छोटे जामुनी फूलों की बेलें और पत्तियाँ चमक रही थीं। हवा में एक जादुई सम्मोहन था—पेड़ों की साख से लेकर पानी के किनारे तक हज़ारों जुगनू किसी टिमटिमाते हुए तारों की तरह तैर रहे थे। पानी के किनारे एक

छोटी सी लकड़ी की नाव बंधी हुई थी, जो पानी की मद्धम लहरों के साथ हौसले से हिल रही थी, मानो वह भी उन दोनों की तरह किनारे से बंधी अपनी किस्मत का इंतज़ार कर रही हो।

अनुश्री ने जब अपनी अचरज भरी निगाहें घुमाकर केतन के उस थके, धूल से सने और आंसुओं से भीगे चेहरे को देखा, तो उसकी अपनी आँखों के बाँध भी टूट गए। केतन की आँखों से आंसुओं की एक अविरल धारा बह रही थी। वे आँसू उसकी ठोड़ी से होकर उसकी शर्ट पर एक-एक करके चुपचाप टपक रहे थे। उन आंसुओं में कोई आवाज़ नहीं थी, कोई शिकायत नहीं थी; उनमें सिर्फ एक पश्चाताप और अनुश्री के उस पवित्र अस्तित्व के सामने पूरी तरह नतमस्तक हो जाने का भाव था।

उन गिरते आंसुओं और इस नीली रातों के मद्धम प्रकाश में अनुश्री का पूरा चरित्र केतन के सामने एक खुली किताब की तरह जीवंत हो उठा। बीमारी के असहनीय दर्द ने उसके शरीर को जिस कदर कमज़ोर बना दिया था, केतन के इन आंसुओं ने उस सारे दर्द को एक पल में सोख लिया। वह एक ऐसी विरहा थी जिसने विरह में केवल देना सीखा था। वह अपनी बीमारी के बंधनों में बांधकर केतन की उड़ान को कमज़ोर नहीं करना चाहती थी। दूर रहकर भी वह केतन की हर एक कामयाबी को अपनी छाती से लगाकर जीती रही।

अनुश्री की आँखों से निकले आँसू उसकी सूखी, पीली पड़ चुकी हथेलियों पर गिरे। उसके आंसुओं में नफ़रत का एक कतरा भी नहीं था, बल्कि उनमें वह अमर और पाकीज़ा प्रेम था जो खुद को मिटाकर भी अपने प्रिय को मुकम्मल देखना चाहता था।

झील के पानी से उठती ठंडी हवा के एक झोंके ने दोनों के बहते आंसुओं की महक को आपस में मिला दिया। लैपपोस्ट की मद्धम पीली रोशनी और आसमान के टिमटिमाते तारों के नीचे, उन दोनों की आँखों से बहते आंसुओं और अनुश्री के इस त्यागपूर्ण मौन ने प्रेम को एक नया, पवित्र और अमर रूप दे दिया था—एक ऐसा रूप जहाँ सारे गुनाह, सारा अहंकार और सारा दर्द घुटनों के बल बैठकर सिर्फ और सिर्फ समर्पण बन चुका था।

अनुश्री अपनी भीगी निगाहें झील के पानी से हटाकर केतन के चेहरे पर टिका दीं।

“बहुत देर कर दी आने में... केतन।”

यह सुनते ही केतन के भीतर जैसे कोई बाँध टूट गया। उसने आँखें बंद कर लीं। उसका चेहरा पश्चाताप और दर्द से भर उठा।

“देर से नहीं आया हूँ, अनु... मैं तो पूरी तरह उजड़कर आया हूँ। जिस रास्ते पर मैं अपनी साख और अहंकार के पीछे भागता रहा, वह तुम्हारे बिना सिर्फ श्मशान की राख थी। तुमने अकेले इतना भयानक दर्द कैसे सह लिया? एक बार... सिर्फ एक बार मुझे पुकार तो लिया होता।”

उसकी आवाज़ सिसकियों में डूब गई। आँसू उसके चेहरे से बहते हुए झील की नमी में खोने लगे।

“क्या मेरा इतना भी हक नहीं था कि तुम अपने जीवन और मौत के इस दर्द का आधा हिस्सा मुझे दे देतीं? जब तुम अस्पताल के उन बिस्तरों पर तकलीफ से लड़ रही थीं... तब मैं अपनी झूठी जीतों में खोया हुआ था। मेरी हर कामयाबी आज मुझे गुनहगार बना रही है, अनु...”

इतना कहकर वह अनुश्री के सामने घुटनों के बल बैठ गया। उसने काँपते हाथों से उसकी सूखी हथेलियों को थाम लिया और अपना माथा उन पर रख दिया।

अनुश्री ने अत्यंत कोमलता से अपना हाथ उसके हाथ पर रख दिया। उसकी आँखों से गिरते आँसू उसकी पीली हथेलियों पर मोतियों की तरह ठहर गए। चाँदनी में उसका चेहरा किसी अलौकिक शांति से दमक रहा था।

“पागल हो क्या, केतन? प्रेम में हिस्सेदारी, शिकायतें या शर्तें नहीं होतीं... प्रेम में तो सिर्फ अर्पण होता है।”

वह कुछ क्षण रुकी। उसकी साँसें भारी हो रही थीं, फिर भी उसकी आवाज़ में अद्भुत सुकून था।

“जब दो साल पहले मुझे इस जानलेवा बीमारी का पता चला, तब मेरे पास दो रास्ते थे। या तो मैं तुम्हें अपनी बेबसी और आँसुओं के पिंजरे में कैद कर लेती... जहाँ तुम रोज़ मुझे थोड़ा-थोड़ा मरते देखते... या फिर दूर रहकर तुम्हें तुम्हारी मंज़िलों तक उड़ते हुए देखती। मेरा प्रेम तुम्हारी उड़ान की बेड़ी कैसे बन सकता था, केतन?”

झील के ऊपर से गुज़रती ठंडी हवा ने उसके बालों को हल्के से छू लिया।

“जब-जब दर्द असहनीय होता था, मैं तुम्हारी तरक्की की कल्पना कर लेती थी... और मेरा सारा दर्द कपूर की तरह उड़ जाता था। डॉक्टरों ने मना किया था, फिर भी मैं यहाँ आई... सिर्फ तुम्हारे पास आने के लिए। इस बेंच पर तुम्हारे साथ बैठने के लिए मैं अपनी आखिरी साँसों को रोककर जी रही थी।”

उसने काँपते हाथों से केतन के आँसू पोंछने की कोशिश की।

“आज इस चाँदनी रात में तुम्हें वापस पाकर मैं मुकम्मल हो चुकी हूँ। अब मुझे कोई बीमारी नहीं छू सकती। तुम रोना बंद करो, केतन... तुम्हारे आँसुओं का बोझ मेरी आत्मा सह नहीं पाएगी।”

इसके बाद दोनों चुप हो गए।

सिर्फ झील की लहरों की धीमी आवाज़ थी, जो किनारों से टकराकर लौट रही थी। हवा में रातरानी की हल्की महक घुली हुई थी। दूर कहीं किसी मंदिर की घंटी की ध्वनि रात की निस्तब्धता में खोकर रह गई।

केतन ने धीरे से अनुश्री को अपने और करीब खींच लिया। अनुश्री बिना कुछ कहे उसके कंधे पर सिर रखकर बैठ गई। दोनों बस चुपचाप सामने फैली झील को देखते रहे।

उनकी वह खामोशी किसी संवाद से कहीं अधिक गहरी थी।

कभी केतन उसकी उंगलियों को सहला देता, कभी अनुश्री उसकी हथेली को हल्के से दबा देती। दोनों जानते थे कि यह साथ बहुत छोटा है, इसलिए उस रात वे शब्दों को नहीं, एक-दूसरे की मौजूदगी को जी लेना चाहते थे।

चाँद अब थोड़ा और ऊपर उठ आया था। उसकी चाँदनी झील के पानी पर बिखरकर चाँदी की लंबी राह बना रही थी।

तभी केतन को महसूस हुआ कि अनुश्री की साँसें पहले से अधिक भारी हो रही हैं।

उसने तुरंत उसकी ओर देखा।

“अनु... क्या हुआ?”

अनुश्री ने जवाब नहीं दिया। उसने बस धीरे से अपनी आँखें बंद कर लीं और और अधिक उसके सीने से लग गई।

केतन घबरा उठा।

“अनु, तुम्हारी तबीयत बिगड़ रही है। चलो, अभी अस्पताल चलते हैं।”

अनुश्री ने बहुत धीमे से सिर ना में हिला दिया।

“नहीं... कहीं नहीं जाना मुझे।”

“लेकिन अनु—”

“बस... थोड़ी देर ऐसे ही रहने दो।”

उसकी आवाज़ इतनी धीमी थी कि मानो हवा में घुल रही हो।

केतन की आँखों से आँसू बह निकले। उसने उसे और कसकर अपनी बाँहों में भर लिया। अनुश्री का शरीर अब बहुत हल्का और निर्जीव-सा लगने लगा था।

झील के ऊपर बहती हवा अचानक और ठंडी हो गई।

अनुश्री ने काँपते हाथों से केतन की शर्ट को हल्के से पकड़ लिया, जैसे वह उस क्षण को छोड़ना ही नहीं चाहती हो।

“केतन...”

“हाँ अनु... मैं यहीं हूँ।”

“अब सुकून है... बहुत सुकून...”

उसके बाद फिर लंबी खामोशी छा गई।

केतन लगातार उसके बालों को सहलाता रहा। उसकी आँखें बार-बार अनुश्री के चेहरे पर टिक जातीं, मानो वह हर साँस को रोक लेना चाहता हो।

धीरे-धीरे अनुश्री की साँसें और मद्धम पड़ने लगीं।

उसका सिर पूरी तरह केतन के सीने पर टुलक आया।

केतन ने काँपते हुए उसके चेहरे को अपने हाथों में लिया।

“अनु... मेरी तरफ देखो... अनु...”

लेकिन अनुश्री अब बिल्कुल शांत थी।



उसके होंठों पर एक बहुत हल्की मुस्कान ठहरी हुई थी, जैसे वह अपने सारे दर्द से मुक्त हो चुकी हो।

आँखों के कोने से निकला एक आखिरी आँसू केतन की हथेली पर गिरा और वहीं ठहर गया।

केतन ने उसे कसकर अपने सीने से लगा लिया। उसकी सिसकियाँ मोतीझील की उस अथाह खामोशी में धीरे-धीरे घुलती चली गईं।

उस रात मोतीझील भी मानो मौन होकर शोक मना रही थी।

झील का पानी पहले की तरह चंचल नहीं था। उसकी लहरें बहुत धीमी हो चुकी थीं, जैसे वे भी उस अंतिम विदाई का सम्मान कर रही हों। चाँदनी पानी पर बिखरकर किसी सफेद चादर जैसी लग रही थी। पुराने लैंपपोस्टों की सुनहरी रोशनी अब उदास प्रतीत हो रही थी और हवा में तैरते जुगनू ऐसे लग रहे थे मानो टूटे हुए सितारे धरती पर उतर आए हों।

मोतीझील उस रात सिर्फ एक झील नहीं रही थी।

वह दो आत्माओं के अंतिम मिलन की साक्षी बन चुकी थी।

उसकी लहरों में अब हमेशा के लिए केतन की टूटी हुई सिसकियाँ और अनुश्री की शांत मुस्कान बस चुकी थीं। चाँदनी में भीगी वह बेंच, वह हवा, वह पानी और वह मौन—सब कुछ उस अमर प्रेम कथा को अपने भीतर सँजोए चुपचाप ठहरा हुआ था।

## अंतिम अध्याय

कहते हैं समय सबसे बड़ा वैद्य होता है। वह हर घाव भर देता है, हर पीड़ा को धुँधला कर देता है और हर स्मृति पर धूल की एक परत बिछा देता है। पर यह बात शायद प्रेम पर लागू नहीं होती। प्रेम के घाव भरते नहीं, वे धीरे-धीरे मनुष्य के व्यक्तित्व का हिस्सा बन जाते हैं। वे दर्द नहीं रह जाते, बल्कि दिशा बन जाते हैं।

अनुश्री के जाने के बाद केतन ने यही जाना।

पहले उसे लगता था कि जीवन का अर्थ सफलता है, पहचान है, उपलब्धियाँ हैं। फिर एक समय ऐसा आया जब उसे लगा कि जीवन का अर्थ संघर्ष है। लेकिन अंततः उसने जाना कि जीवन का सबसे बड़ा अर्थ किसी एक ऐसे व्यक्ति का होना है, जिसकी उपस्थिति आपको स्वयं से बेहतर मनुष्य बना दे। और यदि वह व्यक्ति शरीर से दूर भी चला जाए, तो भी उसके संस्कार, उसका त्याग और उसका प्रेम आपकी साँसों में जीवित रहें।

अनुश्री ने केतन को प्रेम करना नहीं सिखाया था; उसने उसे प्रेम में होकर जीना सिखाया था।

उसके जाने के बाद कई बार ऐसा हुआ कि केतन किसी निर्णय के सामने खड़ा रह गया। वह आँखें बंद करता और अनायास मन में एक प्रश्न उठता—“अगर अनु होती, तो क्या कहती?” और आश्चर्य यह था कि हर बार उत्तर मिल जाता। जैसे वह कहीं गई ही न हो। जैसे उसने अपना पूरा अस्तित्व केतन के विवेक में, उसकी करुणा में और उसके धैर्य में रख छोड़ा हो।

धीरे-धीरे लोगों ने देखा कि केतन बदल गया है।

अब वह कम बोलता था, पर जो बोलता था उसमें कठोरता नहीं होती थी। पहले वह लोगों की योग्यता देखता था, अब उनकी परिस्थितियाँ भी समझने लगा था। पहले असफलता पर क्रोधित हो जाता था, अब किसी की आँखों में निराशा देखकर उसका हाथ थाम लेता था। शायद प्रेम का सबसे बड़ा चमत्कार यही है कि वह मनुष्य को भीतर से इतना कोमल

बना देता है कि उसका अपना दुःख भी दूसरों के लिए सहानुभूति बन जाता है।

निशा यह परिवर्तन चुपचाप देखती रही।

वह वर्षों से केतन के साथ काम कर रही थी। उसने उसे महत्वाकांक्षी भी देखा था, जिद्दी भी, टूटता हुआ भी और फिर सँभलता हुआ भी। वह समझ गई थी कि अनुश्री का स्थान केतन के जीवन में लिया नहीं जा सकता। इसलिए उसने कभी उस रिक्तता को भरने की कोशिश नहीं की। उसने केवल यह सुनिश्चित किया कि वह रिक्तता केतन को निगल न जाए।

यही छोटे-छोटे क्षण धीरे-धीरे जीवन को फिर से चलना सिखाते हैं।

समय के साथ मोतीझील भी उनके जीवन का एक मौन पात्र बन गई। वहाँ की एक साधारण-सी बेंच, शाम की हवा और पानी पर पड़ती चाँदनी केतन के लिए किसी मंदिर से कम नहीं रह गई थी। वह जब भी वहाँ बैठता, उसे लगता कि प्रेम का अर्थ साथ बैठे रहना नहीं, बल्कि किसी के चले जाने के बाद भी उसके साथ संवाद कर पाना है।

शायद इसीलिए उसने अपने दुःख को स्मारक नहीं बनने दिया। उसने उसे ऊर्जा बना दिया।

अनुश्री ने अपने जीवन में त्याग को चुना था। उसने अपने दर्द को छिपाकर केतन के सपनों को बचाया था। उसी त्याग ने केतन को यह सिखाया कि प्रेम अधिकार नहीं, उत्तरदायित्व है; प्रेम पाने की इच्छा नहीं, किसी दूसरे के जीवन को संवारने का संकल्प है। और यही सीख उसके आगे के हर निर्णय की नींव बन गई।

धीरे-धीरे उसके भीतर एक अजीब-सी शांति उतर आई। वह समझ गया कि मृत्यु शरीर को ले जाती है, संबंधों को नहीं। कुछ लोग चिता की अग्नि में विलीन हो जाते हैं, पर उनकी करुणा, उनका विश्वास और उनका स्पर्श हमारे व्यवहार में जीवित रह जाता है।

एक दिन किसी ने सहज ही पूछ लिया, “क्या आपको आज भी उनकी याद आती है?”

केतन ने मुस्कुराकर उत्तर दिया—

“याद तो उसकी आती है जो कभी दूर गई हो। अनुश्री तो मेरे निर्णयों में रहती है, मेरी गलतियों पर मुझे टोकती है, मेरी खुशियों में चुपचाप मुस्कुरा देती है। वह स्मृति नहीं, मेरे व्यक्तित्व का हिस्सा बन चुकी है।”

शायद यही उस प्रेम की अंतिम परिणति थी।

दो शरीर कभी साथ नहीं चल पाए, लेकिन दो आत्माएँ एक-दूसरे में इस तरह घुल गईं कि उनके बीच जीवन और मृत्यु की रेखा भी अर्थहीन हो गई।

कहानी यहीं समाप्त होती है, पर प्रेम नहीं।

जब भी किसी शांत झील के किनारे कोई थका हुआ मन बिना कुछ कहे बैठा होगा, जब भी कोई व्यक्ति किसी अनुपस्थित चेहरे से मन ही मन बातें करेगा, जब भी कोई अपने हिस्से का सुख त्यागकर किसी और की मुस्कान बचाएगा—वहाँ कहीं न कहीं अनुश्री का अंश जीवित होगा, और केतन की आँखों में उतर आई वह नमी भी।

क्योंकि कुछ प्रेम कहानियाँ विवाह तक पहुँचकर पूर्ण नहीं होतीं।

वे त्याग तक पहुँचकर अपनी-अपनी मोतीझील में अमर हो जाती हैं।



